लोकतांत्रिक विद्यालय

कक्षा से सीखे सबक

सम्पादनः
माइकल डब्ल्यू. एपल और
जेम्स ए. बीन
अँग्रेज़ी से अनुवादः स्वयं प्रकाश

एकलव्य का प्रकाशन

लोकतांत्रिक विद्यालय
Loktantrik Vidyalaya
मूल पुस्तक *Democratic Schools* का सम्पादनः माइकल डब्ल्यू. एपल और जेम्स ए. बीन
अँग्रेज़ी से अनुवादः स्वयं प्रकाश
आवरण चित्र व डिज़ाइनः अनिता वर्मा

जून 2007 / 2000 प्रतियाँ
80 gsm नेचुरल शेड एवं 210 gsm आर्टकार्ड (कवर) पर प्रकाशित
पराग इनिशिएटिव, सर रतन टाटा ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से विकसित
मूल्यः 80.00 रुपए
ISBN 81-87171-97-9

प्रकाशकः एकलव्य
ई-7/एचआईजी 453, अरेरा कॉलोनी
भोपाल- 462016, म.प्र.
फोनः (0755) 246 3380
फैक्सः (0755) 246 1703
सम्पादकीयः books@eklavya.in
किताबें मँगवाने के लिएः pitara@eklavya.in

मुद्रकः भण्डारी ऑफसेट, भोपाल, फोनः (0755) 246 3769

विषय सूची

इस पुस्तक के लेखक *iv*

आभार *v*

डेमोक्रेटिक स्कूल्स के भारतीय संस्करण का प्राक्कथन *vii*

भूमिका *xi*

1 लोकतांत्रिक विद्यालयों का तर्क 1
जेम्स ए. बीन और माइकल डब्ल्यू. एपल

2 सेन्ट्रल पार्क ईस्ट सेकण्डरी स्कूलः
कार्यान्वयन का कठिन काम 32
डेबोरा मेइयर व पॉल श्वार्ज़

3 कार्यशाला से आगेः व्यावसायिक शिक्षा का पुनराविष्कार 53
लैरी रोज़ेनस्टॉक व एड्रिया स्टाइनबर्ग

4 ल इस्कूला फ्रेटनीः लोकतंत्र की ओर एक यात्रा 76
बॉब पीटरसन

5 परिस्थिति ने हमें विशिष्ट बनाया 109
बारबरा एल. ब्रॉडहेगन

6 लोकतांत्रिक विद्यालयों के सबक 131
माइकल डब्ल्यू. एपल और जेम्स ए. बीन

इस पुस्तक के लेखक

माइकल डब्ल्यू. एपल विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में पाठ्यचर्या और शैक्षिक नीति के प्रोफेसर हैं। पताः University of Wisconsin, 225 N Mills street, Madison, WI 53706, USA.

जेम्स ए. बीन नेशनल कॉलेज ऑफ एजुकेशन, नेशनल-लुइस विश्वविद्यालय, इवान्स्टन, इलिनॉए में प्रोफेसर हैं। पताः Dr. Beane, 928 West Shore Drive, Madison, WI 53715, USA.

बारबरा एल. ब्रॉडहेगन मेडिसन मेट्रोपॉलिटन पब्लिक स्कूल, मेडिसन, विस्कॉन्सिन में पढ़ाती हैं। पताः 928 West Shore Drive, Madison, WI 53715, USA.

डेबोरा मेइयर सेन्ट्रल पार्क ईस्ट सेकण्डरी स्कूल में सह-निदेशक हैं। पताः 1573 Madison Avenue, New York, NY 10029, USA.

बॉब पीटरसन ल इस्कूला फ्रेटनी, मिल्वॉकी में पाँचवीं कक्षा को पढ़ाते हैं। वे रीथिंकिंग स्कूल्स के सम्पादक हैं। इस पुस्तक को प्राप्त करने का पताः Rethinking Schools Ltd, 1001 E Keefe Avenue, Milwaukee, WI 53212, USA.

लैरी रोज़ेनस्टॉक रिंज स्कूल ऑफ टेक्नीकल आर्ट्स के कार्यपालन निदेशक हैं। वे हार्वर्ड ग्रैजुएट स्कूल ऑफ एजुकेशन में व्याख्याता भी हैं। पताः Rindge school of Technical Arts, 459 Broadway, Cambridge, MA 02138, USA.

पॉल श्वार्ज़ सेन्ट्रल पार्क ईस्ट सेकण्डरी स्कूल के सह-निदेशक हैं। वे हार्वर्ड ग्रैजुएट स्कूल ऑफ एजुकेशन में व्याख्याता भी हैं। पताः Central Park East Secondary School, 1573 Madison Avenue, New York, NY 10029, USA.

एड्रिया स्टाइनबर्ग रिंज स्कूल ऑफ टेक्नीकल आर्ट्स में अकादमिक समन्वयक हैं। पताः Rindge School of Technical Arts, 459 Broadway, Cambridge, MA 02138, USA.

आभार

इस पुस्तक के लेखक दुनिया भर के स्कूलों के उन हज़ारों समर्पित शिक्षाकर्मियों को धन्यवाद देना चाहते हैं जो रोज़ अपनी कड़ी मेहनत और वचनबद्धता द्वारा दर्शाते हैं कि समालोचनात्मक और लोकतांत्रिक शिक्षा कैसी हो सकती है।

माइकल डब्ल्यू. एपल और जेम्स ए. बीन

डेमोक्रेटिक स्कूल्स के भारतीय संस्करण का प्राक्कथन

डेमोक्रेटिक स्कूल्स के प्रथम संस्करण को प्रकाशित हुए दस साल से ज़्यादा हो गए हैं। इन वर्षों में इस किताब का वैसा ही असर हुआ जैसी उम्मीद हम लोगों ने की थी। पुस्तक की हज़ारों, लाखों प्रतियाँ वर्तमान और भावी अध्यापकों, प्रशासकों, शिक्षा सम्बन्धी नीति निर्धारकों, समुदाय के सदस्यों, कार्यकर्ताओं तथा कई अन्य लोगों के हाथों में पहुँच गईं। ऐसा सिर्फ अमरीका में ही नहीं, सारी दुनिया में हुआ। इस पुस्तक का अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। स्पेन, पुर्तगाल, जापान, ब्राज़ील और लेटिन अमरीका के अन्य क्षेत्रों में इसके अनगिनत संस्करण प्रकाशित हुए — और अब भारत में भी हो रहा है। अन्यत्र भी काम चालू है। यह समझने के लिए कि अपने राष्ट्र या समुदाय में विद्यालयों को बेहतर बनाने के लिए क्या किया जाना चाहिए, प्रतिबद्ध शिक्षाशास्त्रियों, सामुदायिक दलों, सरकारी कर्मचारियों, राष्ट्रीय शिक्षा यूनियनों और स्वयंसेवी संस्थाओं ने इस पुस्तक को उपयोगी पाया है।

बेशक यह सब जानकर बड़ी तसल्ली मिलती है। फिर भी इस प्रकार की किताब का इतना व्यापक प्रभाव कुछ अधिक महत्वपूर्ण बातों का द्योतक होता है। यह दुनिया भर में ऐसे प्रतिबद्ध लोगों की निष्ठा का द्योतक है जो शिक्षा को मानकीकृत परीक्षामूलक उपलब्धियों के कुशल प्राप्तांकों से उठाकर उसे उसके नाम के अनुरूप बनाना चाहते हैं। यह दुनिया के विभिन्न भागों में प्रचलित ऐसे पाठ्यक्रमों से लोगों के बढ़ते असन्तोष का भी द्योतक है जिनका समाज में छात्रों के जीवन और संस्कृति से कोई लेना-देना नहीं होता। इसी तरह यह इस विश्वास का भी द्योतक है कि

विद्यालय कारखाने नहीं हैं, कि उन्हें हमारे श्रेष्ठतम स्वरूप का प्रतिबिम्ब होना चाहिए। विद्यालय को लोकतंत्र का नाम ही नहीं जपना चाहिए बल्कि उसे जीवन में उतारकर भी दिखाना चाहिए।

जब इन सब चीज़ों को जोड़कर देखा जाता है तो दिखाई देता है कि ज़्यादातर लोग "प्रचलित नीतियों का कोई विकल्प नहीं" जैसी धारणा के पक्ष में नहीं हैं। और ऐसे लोगों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है जो सोचते हैं कि विकल्प है। हमें अक्सर यह समझाने की कोशिश की जाती है कि सुधार सिर्फ मानकीकृत राष्ट्रीय पाठ्यक्रम पर निर्धारित परीक्षा प्रणाली में ही कारगर हो सकते हैं। आमतौर पर यह पाठ्यक्रम समाज के वंचित-उपेक्षित लोगों के ज्ञान, इतिहास और संस्कृति से कोसों दूर होता है, और अक्सर बेहद पुराने पड़ चुके और उबाऊ शिक्षाशास्त्र पर आधारित होता है। अब इसमें निजीकरण और नियम-कायदों को भी जोड़कर अध्यापकों और प्रशासकों को प्रतियोगिता के काँटों से भरी राह पर खड़ा कर दीजिए। हमें समझाने की कोशिश की जाती है कि यदि यह सब कर दिया जाए तो शिक्षा के क्षेत्र में सब कुछ ठीक-ठाक हो सकता है। क्या सचमुच!

इस तर्क के साथ बहुत दिक्कतें हैं। पहली बात तो यह है कि इस किस्म के दावों की पुष्टि के लिए कोई प्रमाण नहीं है। उलटे इस बात का प्रमाण उपलब्ध है कि ये दावे न सिर्फ अमरीका में बल्कि अन्यत्र भी झूठे साबित हो चुके हैं (एपल 2006; वेलेन्ज़ुएला 2005)। यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है। अमरीका और इंग्लैण्ड से बाहर रह रहे लोगों को यहाँ इन "सुधारों" पर चली गम्भीर बहस के बारे में शायद पता नहीं होगा। न शायद उन्हें यह पता होगा कि ऐसे "सुधारों" के चलते वर्गीय तथा जातीय/नस्लीय विषमता घटने की बजाय बढ़ी है। दूसरी बात यह है कि, जैसा इस पुस्तक में बताया गया है, ऐसे संकुचित दावों और धारणाओं का विकल्प है। ऐसा विकल्प उपलब्ध है जो कारगर भी है और जो बेहतर और समृद्ध शिक्षा भी प्रदान करता है (बीन 2005; गटस्टाइन 2006)। ये विकल्प ऐसे दौर में पैदा किए जा रहे हैं जब शिक्षाशास्त्रियों पर अनिवार्य पाठ्यक्रम और परीक्षा प्रणाली पर ध्यान केन्द्रित करने तथा बढ़ती प्रतियोगिता और निजीकरण के लाभों को चित्त में धारण करने का निरन्तर दबाव है।

उपरोक्त परिस्थितियों के परिणाम भारत के वर्तमान शैक्षणिक परिदृश्य में निरन्तर स्पष्ट होते जा रहे हैं। उदाहरण के लिए, भारत में विद्यालयों के

बीच भयंकर फर्क पैदा होता जा रहा है। एक तरफ अमीरों के विद्यालय हैं जो 40 से 50 हज़ार रुपए प्रतिमाह लेकर भी मुनाफा कमा रहे हैं। दूसरी तरफ, सरकारी स्कूलों का पूरा खर्चा 20 से 30 हज़ार तक का है। सरकारी स्कूलों में काम कर रहे अध्यापकों पर इससे दबाव बहुत बढ़ जाता है। उनका वेतन मात्र दो-ढाई हज़ार रुपए होता है। इससे गरीब अभिभावकों पर एक असम्भव किस्म का दबाव बनने लगता है। हमारे और ऐसे लोगों के विचार में जो भारत में शिक्षा को लेकर चिन्ता करते हैं, ऐसी स्थिति में वर्तमान विषमता और बढ़ेगी ही। इसमें लोकतंत्र की भावना को बनाए रखना बेहद कठिन चुनौती है। लेकिन फिर भी लोकतंत्र की भावना को बनाए रखना और उसे लेकर वैकल्पिक शैक्षणिक नीतियाँ बनाना और उन पर अमल करना बेहद ज़रूरी हो जाता है।

डेमोक्रेटिक स्कूल्स का भारतीय संस्करण ऐसे ही विकल्पों के बारे में है। ये उन शिक्षाशास्त्रियों के बारे में भी है जो ऐसे विकल्प निर्मित कर रहे हैं। ये लोग इस पुस्तक को बनाने वालों की प्रतिबद्धता से जुड़े हुए हैं। इस पुस्तक को बनाने वाले खुद को उन शिक्षाकर्मियों, कार्यकर्ताओं और समुदायों के सदस्यों का सचिव जैसा समझते हैं जिनकी आस्था लोकतंत्र की जीवित प्रक्रिया में है और जो इसे नित्य व्यवहार में ला रहे हैं। पुस्तक के अध्यायों से इस तथ्य की भी पुष्टि हो जाती है कि कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी लोकतंत्र के लिए काम करना अब भी सम्भव है, अब भी सफलतापूर्वक किया जा सकता है, और अब भी सार्थक शिक्षा के लिए उठाया जाने वाला एक उपयोगी कदम है। इस अर्थ में पुस्तक में संकलित विवरण इस कठिन समय में हमारे भीतर आशा का संचार करते हैं। इस प्रकार के विवरण और उनसे उपजती आशा ही आपके तथा अन्य अनेक देशों के विद्यालयों और कक्षाओं में लोकतंत्र की मशाल प्रज्वलित रखने के व्यापक आन्दोलन में आधार और प्रेरणा का काम करते हैं। इसी मशाल की तेज़ रोशनी आपको इस पुस्तक के अध्यायों में बिखरी दिखाई देगी।

इस पुस्तक के दोनों सम्पादक अपने अनुभव से यह बात जानते हैं कि चुनौतियों और दबावों के बीच भी भारत भर में ऐसे भी अध्यापक हैं जो विद्यालयों में लोकतंत्र की भावना और यथार्थ बनाए रखने के लिए लगातार संघर्षरत हैं। इस छोटी-सी पुस्तक में शामिल किए गए उदाहरण उनके संघर्ष के साथ एकजुटता की गहरी भावना प्रदर्शित करने के लिए हैं।

हमें आशा है यह पुस्तक भारत में आपके अपने प्रयासों को भी समर्थन प्रदान करेगी।

4 मई 2006

सन्दर्भ

एपल, माइकल डब्ल्यू. (2006) एजुकेटिंग द "राइट" वेः मार्केट्स, स्टेण्डर्ड्स, गॉड एण्ड इनइक्विलिटी, दूसरा संस्करण. न्यू यॉर्कः रूटलेज.

बीन, जेम्स ए. (2005) अ रीजन टू टीचः क्रिएटिंग क्लासरूम्स ऑफ डिग्निटी एण्ड होप. पोर्ट्समाउथ, एनएचः हाइनमन.

गटस्टाइन, एरिक (2006) रीडिंग एण्ड राइटिंग द वर्ल्ड विद मेथेमेटिक्सः टुवर्ड्स पेडॉगॉजी फॉर सोशल जस्टिस. न्यू यॉर्कः रूटलेज.

वेलेन्जुएला, एन्जेला (सम्पादक) (2005) लीविंग चिल्ड्रन बिहाइंड. अल्बनीः स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू यॉर्क प्रेस.

माइकल डब्ल्यू. एपल और जेम्स ए. बीन

भूमिका: कक्षा से सीखे सबक

हाल ही में हम में से एक (माइकल) कुछ दिनों के लिए लन्दन में रह रहा था। एक दोपहर उसने एक समाचार पत्र में कुछ इस तरह की खबर देखी: "अतिवादी अध्यापकों ने शिक्षा सुधारों को रोका।" कहना न होगा कि माइकल ने अखबार खरीदा और पूरी खबर पढ़ी। पता चला कि प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों का एक दल उस सुधार नीति से बहुत विचलित है जिसके अन्तर्गत विद्यालयों में "सेटिंग" प्रणाली फिर चालू करना प्रस्तावित है। अध्यापकों का कहना है कि यह नीति बगैर पर्याप्त सोच-विचार के लागू की जा रही है। इसके परिणामस्वरूप बच्चों के चयन और छँटनी का काम ज़्यादा सख्ती से किया जाएगा और वास्तव में तो यह नस्ल और वर्ग के आधार पर ही होगा। इस खबर से एक बात तो स्पष्ट हो गई। जहाँ पहले इंग्लैण्ड और अमरीका के लोग मज़ाक में कहते थे कि उन्हें "एक ही भाषा ने बाँट रखा है", वहीं विद्यालयों की आलोचना और इन "समस्याओं" के निदान के लिए सुझाए गए "समाधानों" में इन देशों में ज़रा भी अन्तर नहीं था। दोनों जगह के अखबार एक ही तरह की बातें कर रहे थे। माइकल को लगा कहीं वह न्यू यॉर्क या शिकागो या लॉस एंजलस का अखबार तो नहीं पढ़ रहा! दोनों जगह के अखबार कह रहे थे कि हमारे राष्ट्र और हमारी अर्थव्यवस्था को और अधिक प्रतियोगितापूर्ण होना चाहिए। विद्यालय राष्ट्र और छात्रों की अपेक्षाएँ पूरी नहीं कर पा रहे हैं। हमें उसी पुरानी प्रणाली पर लौट जाना चाहिए जो प्रभावी सिद्ध हुई थी – "सच्चे" ज्ञान और सच्चे अनुशासन की ओर। अध्यापक आवश्यक परिवर्तनों को बाधित कर रहे हैं। दोनों तरफ दावा किया जा रहा था कि समस्या का हल केन्द्रीकृत नियंत्रण और बाज़ार अनुशासन के बीच

समुचित तालमेल में ही निहित है। और इस तरह की आवाज़ें इंग्लैण्ड और अमरीका तक ही सीमित नहीं हैं। कोई भी देख सकता है कि ऐसी ही आवाज़ें ऑस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैण्ड में भी उठ रही हैं।

इस खबर ने माइकल को इन आवाज़ों की खामियों पर और गहराई से सोचने को प्रेरित किया। बेशक विद्यालयों में ऐसी चीज़ें भी थीं जिन्हें बदला जाना ज़रूरी था; लेकिन इन प्रस्तावित "सुधारों" से तो विद्यालयों की हालत का और भी खराब हो जाना लगभग तय था। जब माइकल अमरीका लौटा तो इस पुस्तक के दोनों सम्पादक समस्या पर विचार करने के लिए बैठे। जल्द ही यह एकदम साफ हो गया कि जो विद्यालय अपने समक्ष उपस्थित वास्तविकताओं से निपटने में सफल रहे हैं, वे इससे ठीक उलटी दिशा में जाकर ही ऐसा कर पाए हैं। जो पुस्तक आप पढ़ने जा रहे हैं वह बताएगी कि क्यों।

लोकतांत्रिक विद्यालय चार ऐसे विद्यालयों की कहानी है जिन्होंने अपने सम्पूर्ण पाठ्यक्रम का आधार लोकतांत्रिक और आलोचनात्मक शिक्षण पद्धतियों को बनाया। ये विद्यालय छात्रों और समुदाय की ज़रूरतों, उनकी संस्कृति और इतिहास पर आधारित शिक्षा के लिए प्रतिबद्ध हैं। ये नस्लवाद विरोधी, समलैंगिकता-भय विरोधी और लिंगभेद विरोधी सिद्धान्तों के लिए प्रतिबद्ध हैं; और सामाजिक न्याय के प्रति गहरे सरोकार के गिर्द संयोजित हैं। ये कोरे अमूर्त सिद्धान्त नही हैं, बल्कि विद्यालय के पाठ्यक्रम और शिक्षण पद्धति में गहरे तक गुंजित हैं। शिक्षण पद्धति में परस्पर विचार-विमर्श से तय किया गया पाठ्यक्रम, छात्रों व समुदाय की विस्तृत भागीदारी और मूल्यांकन के लचीले रूप शामिल हैं। ये प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च माध्यमिक विद्यालय हैं जो "सार्वजनिक" (अर्थात राज्य सहायता प्राप्त) हैं न कि प्राइवेट।[1] ये "आदर्श" विद्यालय नहीं, "वास्तविक" विद्यालय हैं जो शहरी क्षेत्रों में स्थित हैं। सभी में गरीब और अश्वेत छात्रों की अच्छी-खासी संख्या है। इसके अलावा ये सभी धन के अभाव, कर्मचारियों की कमी, नौकरशाही नियम-कायदों के दबाव, "ऊँचे स्तर" और "श्रेष्ठता" की बढ़ती माँग आदि की वास्तविक चुनौतियों से जूझ रहे हैं। लेकिन फिर भी इनमें से हर विद्यालय ने एक ऐसा चुनौतीपूर्ण वातावरण तैयार करने में सफलता हासिल की है जो अकादमिक दृष्टि से गम्भीर भी है और साथ ही सामाजिक दृष्टि से आलोचनात्मक भी।

इन विद्यालयों की कहानी उन्हीं शिक्षाकर्मियों के शब्दों में बयान की गई है जिन्होंने इन्हें अमली जामा पहनाया है। कहानियाँ ईमानदारी से कही

गई हैं और उन संघर्षों तथा तनावों को भी छोड़ा नहीं गया है जो सफलता की राह में आए। यह बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि शिक्षा सम्बन्धी साहित्य में विद्यालय-सुधार की आसान सफलताओं के रूमानी किस्से भरे पड़े हैं। लेकिन सफलता का रास्ता कभी आसान नहीं होता। हर विद्यालय में एक भिन्न जोखिम उठाना था और विचारधारागत तथा नौकरशाही की चुनौतियों से पार पाना था। लेकिन इन तनावों और चुनौतियों के होते हुए भी ये विद्यालय इस बात की गवाही देते हैं कि प्राचीन शिक्षण संरक्षणवादी विचारधाराओं की ओर लौटने के अभियान और गम्भीर वित्तीय कठिनाइयों वाले इस दौर में भी आलोचनात्मक शैक्षणिक नीतियाँ, पद्धतियाँ बनाना और उनके बचाव में खड़े होना सम्भव है, वह भी वास्तविक विद्यालयों में ताकि छात्रों, अध्यापकों और स्थानीय समुदायों का भला हो सके। यह विजय उन क्षेत्रों में हुई है जो आजकल सर्वाधिक विवादास्पद क्षेत्रों में से हैं। यानी काम की दुनिया और पढ़ाई-लिखाई के बीच रिश्ता कायम करना, विद्यालय पाठ्यक्रम को विभिन्न नस्लों, समुदायों, और संस्कृतियों के बच्चों और लोगों से जोड़ना, शिक्षाशास्त्र और विषयवस्तु के ऐसे मॉडल बनाना जिन्हें अलग-थलग पढ़े बच्चे भी अपने लिए अर्थपूर्ण समझें, ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करना जिनमें समुदाय के लोग अपने बच्चों की शिक्षा से गहरा लगाव और दिलचस्पी महसूस करें, और विद्यालय तथा कक्षाओं को ऐसा स्थान बनाना जहाँ अध्यापक भी अपने काम को फलप्रद व सन्तोषप्रद मानें।

यहाँ जिन शिक्षाकर्मियों ने अपनी कहानी कही है उन्हें — कम से कम सरकारी तौर पर — वैसी दिक्कतों का सामना नहीं करना पड़ता जैसा इंग्लैण्ड में अध्यापकों, प्रधानों, अभिभावकों और समुदाय सदस्यों को करना पड़ता है। अमरीका में कोई सरकारी राष्ट्रीय पाठ्यक्रम नहीं है और न कोई सरकारी तौर पर मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय परीक्षा कार्यक्रम जो राष्ट्रीय पाठ्यक्रम से जुड़ा हो। इसके अलावा शिक्षा के बाज़ारीकरण की ज़ोरदार माँग अभी अमरीका में उठना शुरू ही हुई है। और ये लोग इंग्लैण्ड और वेल्स में ऐसा किए जाने की कुछ ज़्यादा ही सुनहरी तस्वीर खींच रहे हैं।[2] ज़रा सोचिएः कोई “लीग टेबल” नहीं, कोई निर्धारित राष्ट्रीय पाठ्यक्रम नहीं, कोई राष्ट्रीय परीक्षा कार्यक्रम नहीं, अर्थात् विद्यालयों के प्रतियोगी बाज़ार में अपनी छवि की कुछ कम चिन्ता।

लेकिन इन शिक्षाकर्मियों को जिस स्थिति का सामना करना पड़ रहा है, यह उसकी पूर्णतया रूमानी तस्वीर है। क्योंकि समानताएँ हद से ज़्यादा

हैं और अन्तर बेहद मामूली। हालाँकि अमरीका में कोई राष्ट्रीय पाठ्यक्रम नहीं है, लेकिन व्यवहार में एक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम है। यह स्थापित होता है हर विषय की पाठ्यपुस्तकों से, पाठ्यपुस्तकें जो सर्वाधिक ताकतवर राज्यों में बेहद कड़े और बेहद सुनिश्चित सरकारी निर्देशों के अनुसार लिखी जाती हैं। प्रकाशक उन पुस्तकों को छापेंगे ही नहीं जिनकी टेक्सास और कैलीफोर्निया जैसे अधिक आबादी वाले राज्यों में स्वीकृत होने और खरीदे जाने की सम्भावना न हो। इस तरह एक ऐसे देश में जहाँ पाठ्यक्रम मानक पाठ्यपुस्तकें बन जाने की दिशा में हो, सारा देश बुनियादी तौर पर वही पढ़ाता है जो कुछ सीमित राज्यों में बिकता है। इस कारण, स्पष्टतः एक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम है। बस इतना है कि वह निगाहों से ओझल है।[3]

मीडिया के काम करने के तरीकों ने इस चीज़ को और भी ताकतवर बना दिया है। असफल होते विद्यालयों के बारे में लगातार खबरें दी जाती हैं। इन रिपोर्टों में "पारम्परिक" विषयों और शिक्षा के पारम्परिक तौर-तरीकों की ओर "लौटने" का निरन्तर आग्रह रहता है। इसलिए अध्यापक हमेशा वही पढ़ाने के दबाव में रहते हैं जिसे कुछ सुव्यवस्थित और सम्पन्न (और अक्सर दकियानूसी) समूहों ने पढ़ाने के लिए उचित विषयवस्तु और पद्धति तय कर रखा है।

फिर अधिकांश राज्यों ने अब सभी प्रमुख विषय क्षेत्रों में एक राज्यव्यापी परीक्षा प्रणाली को अपना रखा है। दिन-ब-दिन अध्यापक "परीक्षा के हिसाब से" पढ़ाने पर मजबूर हो रहे हैं। यदि वे इस सम्बन्ध में अपनी स्वायत्तता बनाए रखना भी चाहें तो भी अधिकांश पाठ्यपुस्तकें और शिक्षण सामग्री, जिसे आधिकारिक रूप से ज़रूरी समझा जाता है, अनेक शहरों और राज्यों में परीक्षा प्रणाली से अन्तर्सम्बन्धित है। संक्षेप में, "परीक्षा की पूँछ पाठ्यक्रम का शरीर हिला रही है।" दुर्भाग्य से दिनोंदिन अमरीकी विद्यालयों में ऐसे विचार प्रभुत्व जमाते जा रहे हैं जिनके अनुसार जो भी कक्षा में हो रहा है उसकी नापतौल होनी चाहिए, और जो नहीं हो रहा उसकी भी, क्योंकि वह आज नहीं तो कल हो सकता है। हम यहाँ ज़रूरत से ज़्यादा "प्यारे" नहीं होना चाहते, लेकिन इंग्लैण्ड और अमरीका में अध्यापक जिन परिस्थितियों से दो-चार हो रहे हैं, वे पहली नज़र में तो अलग-अलग लगती हैं, लेकिन असल में हैं एक जैसी ही, खासकर अब जब परीक्षा परिणाम समाचारपत्रों में छपने लगे हैं, और उनके आधार पर विद्यालयों की एक-दूसरे से तुलना की जाने लगी है।

एक और उदाहरण देखें तो यह सब निरन्तर एक विशिष्ट और सीमित ध्येय से जुड़ता जा रहा है। इसी अनुपात में सीमित होती जा रही है पाठ्य सामग्री और वे मूल्य जो सिखाने हैं। हालाँकि यह इंग्लैण्ड या वेल्स की तरह राष्ट्रीय स्तर पर निश्चित नहीं किया जाता है, लेकिन समूचे देश में राज्य और शहर इस प्रकार की सूचियाँ बना रहे हैं और अध्यापकों तथा प्रशासकों को लगातार उनके प्रति जवाबदेह बनाया जा रहा है। "मानक उपलब्धि लक्ष्य" जिन्हें अमरीका में "मानक और प्रतिमान" कहा जाता है, कम से कम अदृश्य तो नहीं ही हैं। हालाँकि जवाबदेही की व्यवस्थाओं में कोई अनिवार्य बुराई नहीं है, लेकिन इनमें से कई थोपी हुई हैं, लचीली नहीं हैं और बगैर यह सोचे लागू कर दी गई हैं कि कक्षाओं में वास्तव में क्या हो रहा है। जबकि गरीबी बढ़ रही है, बेरोज़गारी के परिणाम दिखाई दे रहे हैं, सामाजिक सुरक्षा संजाल छिन्न-भिन्न है, और भीतरी शहर नष्ट हो रहे हैं। ऐसे में इन दोनों चीज़ों से शक्तिशाली समूहों को अक्सर यह बहाना मिल जाता है कि वे कठोर परिश्रमी शिक्षाकर्मियों को उन चीज़ों के लिए भी दोषी ठहराएँ जिन पर उनका कोई वश नहीं है।

लेकिन ध्यान देने की बात सिर्फ मानकीकृत लक्ष्यों का होना नहीं है। अक्सर इन मानकों की विशिष्ट विषयवस्तु ऊपर से लादी जाती है। शायद यहाँ एक उदाहरण से बात साफ हो। खुद हमारे राज्य विस्कॉन्सिन में जनशिक्षण विभाग (जो राज्य में शिक्षा मंत्रालय के समान है) ने आरम्भ से ऊपर तक मानक विकसित करने में अनेक वर्ष लगाए। इन्हें बनाने में अध्यापक, प्रशासक, शिक्षाशास्त्री, समुदाय के सदस्य, कार्यकर्ता सब लगे हुए थे। इन्होंने न सिर्फ ये मानक बनाए बल्कि उन्हें लचीला, अधिक स्वीकार्य और उपयोगी बनाने के लिए उनका पुनर्लेखन भी किया और उन्हें लागू करने के तरीकों के बारे में विचार-विमर्श भी किया। राज्य के रूढ़िवादी गवर्नर ने हमेशा "विकेन्द्रीकरण" की बात करने वाले लेकिन मन से पाठ्यक्रम, शिक्षण और परीक्षा प्रणाली पर कठोर केन्द्रीय नियंत्रण के प्रबल पक्षधर विधायकों के सहयोग से इसे अस्वीकार कर दिया और उन्हें राष्ट्रीय स्तर पर शक्तिशाली एक दक्षिणपन्थी "थिंकटेंक" द्वारा प्रस्तुत विषयवस्तु सम्बन्धी मार्गदर्शक नीति के अनुकूल बनाकर पूरी तरह नए सिरे से लिखवाया। नए मानक उन पहले वाले मानकों जैसे बिलकुल नहीं थे जिन्हें अधिक लोकतांत्रिक तरीके से बनाया जा रहा था और जो तैयार होने ही वाले थे।

एक और समानता इसी से जुड़ी हुई है जिसका सामना अटलांटिक के दोनों

ओर के शिक्षाकर्मियों को करना पड़ रहा है। इंग्लैण्ड और वेल्स की तरह ही इस किताब से सम्बद्ध सभी अध्यापकों को नौकरशाही की सख्त नीतियों से जूझना पड़ा है। प्रबन्धनवाद — जिसमें लगातार ज़्यादा कार्यकुशलता, लागत में कमी और हर बार पहले से बेहतर परीक्षा परिणाम की माँग है — विद्यालयों को अर्थव्यवस्था की "आवश्यकताओं" से जोड़ने की भी उतनी ही तगड़ी माँग से जुड़ा हुआ है। प्रतियोगिता की भावना, मानक, श्रेष्ठता, "मूलतत्व" — ये जगमगाते शब्द हैं। बाकी सब फालतू की अय्याशी है जिसे हम वहन नहीं कर सकते।

समूचे देश के विद्यालयों पर इस सबका असर पूर्वानुमानित ही रहा है। अध्यापकों में मानसिक दबाव में बढ़ोतरी हुई है, उनका काम तीक्ष्णतर हो गया है। प्रशासकों का काम यह हो गया है कि वे शिक्षण और पाठ्यक्रम की कम से कम फिक्र करें और विद्यालय की छवि की ज़्यादा से ज़्यादा। इससे एक निश्चित भावना का जन्म हुआ है (जो हमारे विचार में एक बिलकुल ठीक धारणा पर आधारित है)। वह यह कि शिक्षाकर्मियों और स्थानीय समुदायों ने स्वायत्तता और नियंत्रण अधिकार पाने की बजाय वास्तव में उन्हें खो दिया है। जब हम अमरीका के शिक्षाकर्मियों से बात करते हैं तो हमें लगता है कि वे इंग्लैण्ड के शिक्षाकर्मियों की चिन्ताओं को शब्दशः दोहरा रहे हैं। अटलांटिक के दोनों तरफ प्रशासक इस बात से परेशान हैं कि "उनके अधिकार क्षेत्र के लगातार कम होते जाने के माहौल में एक केन्द्रीकृत पाठ्यक्रम के तहत निरन्तर बेहतर प्रदर्शन के लिए उन्हें मजबूर किया जा रहा है।"[4] तो दोनों परिप्रेक्ष्यों में अध्यापक और प्रधान (जिन्हें अमरीका में प्राचार्य कहा जाता है) काम के ज़्यादा बोझ और जवाबदेही की लगातार बढ़ती माँगों, बैठकों के कभी खत्म न होने वाले सिलसिलों और अनेक मामलों में भावनात्मक और भौतिक संसाधनों की बढ़ती हुई कमी को महसूस कर रहे हैं।[5] लोगों को दक्षताविहीन और हतोत्साहित करना लोकतांत्रिक और समालोचनात्मक शिक्षा का रास्ता नहीं है; उनका रास्ता इससे बिलकुल उलटा है।

अन्य समानताएँ भी आश्चर्यजनक हैं। अटलांटिक के दोनों तरफ विद्यालयीन शिक्षा पर "बाज़ारीकरण" के दबाव का एक जैसा असर पड़ा लगता है। इस दावे के बावजूद कि बाज़ारीकरण से नए विकल्प पैदा होंगे, बाज़ार पाठ्यक्रम, शिक्षाशास्त्र, संगठन, ग्राहक समूह और यहाँ तक कि विद्यालय की छवि तक में किसी प्रकार की विविधता को प्रोत्साहन देता नहीं मालूम होता। ऐसा लगता है जैसे वह लगातार विकल्पों को अवमूल्यित कर रहा

है और शिक्षण तथा अध्ययन के पारम्परिक स्वरूपों को ताकतवर बना रहा है। दुर्भाग्य से "परम्परा" की ओर इस वापसी के परिणाम देखकर कोई ताज्जुब नहीं होता। शिक्षक और पाठ्यक्रम के ज़्यादा आलोचनात्मक स्वरूपों का अवैधीकरण हो रहा है। ट्रैकिंग, स्ट्रीमिंग और सेटिंग के माध्यम से श्रेणीबद्धता का पुनर्प्रवेश करवाया जा रहा है तथा डी-ट्रैकिंग की सम्भावना और भी कम होती जा रही है। "प्रतिभाशाली" बच्चों और "फास्ट ट्रैक" कक्षाओं पर ज़्यादा ज़ोर दिया जा रहा है, जबकि वे बच्चे जो पढ़ने में ज़्यादा होशियार नहीं हैं, अब इसी कारण "कम आकर्षक" बन गए हैं। कोई आश्चर्य नहीं यदि प्रवेश और निर्गम का यह भेदभाव वर्ग, नस्ल और लिंग के अन्तर को और कटु बना दे।[6] इस तरह इस बात में तो अन्तर हो सकता है कि औपचारिक प्राधिकार कहाँ अवस्थित है या नियंत्रण किसके हाथ में है, लेकिन इससे हमें यह नहीं समझना चाहिए कि अटलांटिक के दोनों तरफ — और ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड तथा अन्यत्र — अध्यापकों की परिस्थितियाँ एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। दुर्भाग्य से ऐसा एकदम नहीं है।

इनमें से अनेक नीतियाँ और परिपाटियाँ तो ताकतवर नवउदार और नवरूढ़िवादी समूहों की क्षमता की बदौलत आईं जो बेरोज़गारी के लिए, पारम्परिक ज्ञान और मूल्यों के तथाकथित क्षरण के लिए और समाज में जो कुछ भी गलत होता है उसके लिए शिक्षाकर्मियों को दोष देते हैं। इसके लिए दोनों समूहों द्वारा प्रस्तावित समाधान लगभग एक जैसा था — अधिक नियंत्रण करो, अध्यापकों और प्राचार्यों को परीक्षा परिणामों के लिए कठोरतापूर्वक जवाबदेह बनाओ वगैरह। ठीक इसी दौरान शिक्षा को बाज़ारीकरण की तरफ धकेलने की कोशिश भी जारी थी। सरकार ही नहीं अभिभावक भी बच्चों को कट्टर प्रतियोगी बनाने के लिए विद्यालयों पर दबाव डाल रहे थे कि वे बाज़ार के अनुसार चलें, चाहे सामाजिक न्याय के रूप में इसकी जो भी कीमत चुकानी पड़े। और यह कीमत गरीब बच्चों के चिन्हित समूहों को ही नहीं, अधिक लोकतांत्रिक और आलोचनात्मक शिक्षण पद्धति को भी चुकानी पड़ेगी। ऐसे समूहों और छात्रों की जैसी घटिया सेवा वर्तमान पाठ्यक्रम और बाज़ार द्वारा प्रोत्साहित पारम्परिक प्रतिरूप कर रहे हैं, यह पद्धति कम से कम उनसे तो बेहतर ही करती।

जैसी कि कल्पना की जा सकती है, ऐसे तमाम दबावों ने शिक्षाकर्मियों की ज़िन्दगी और मुश्किल कर दी है। लेकिन कठिन का मतलब असम्भव नहीं होता। इंग्लैण्ड की ही तरह अमरीका में भी अध्यापकों और प्रशासकों ने इसकी काफी तीखी आलोचना की। और इंग्लैण्ड की ही तरह यहाँ भी

प्रतिक्रिया सिर्फ आलोचना तक सीमित नहीं रही। शिक्षाकर्मियों ने पाठ्यक्रम संयोजन, शिक्षण और परीक्षण के कुछ बहुत सुचिन्तित और व्यावहारिक तरीके विकसित किए हैं जो मानकीकृत पाठ्यक्रम, परिसीमनकारी सतत् मूल्यांकन और लागत तथा "दिखावे" में कमी की माँगों के सामने डटकर भी न सिर्फ बाहरी माँगों को पूरा करते थे बल्कि एक अनुक्रियाशील और सामाजिक दृष्टि से न्यायपूर्ण शिक्षा की भीतरी माँग को भी।

लोकतांत्रिक विद्यालय में सम्मिलित अध्याय बताते हैं कि जब शिक्षाकर्मी, अभिभावक, सामुदायिक कार्यकर्ता और छात्र इन तमाम दबावों का रचनात्मक प्रत्युत्तर देने के लिए उठ खड़े होते हैं तो क्या होता है। वे इस बात का भी मुखर तकाज़ा हैं कि शिक्षा जीवन की तैयारी नहीं, खुद जीवन है। हमें विश्वास है कि ऐसी ही कहानियाँ इंग्लैण्ड के शहरों और कस्बों में भी पाई जा सकती हैं। सच तो यह है कि हमने उन्हें ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैण्ड, और जहाँ-जहाँ भी हम उन शिक्षाकर्मियों के साथ काम करने और उनसे सीखने गए जो अपने छात्रों और समुदायों के जीवन में सचमुच परिवर्तन ला रहे हैं, घटित होते देखा है। यदि इस पुस्तक में दिए गए उदाहरण अन्य लोकतांत्रिक शिक्षाकर्मियों को भी अपनी कहानी सुनाने के लिए प्रेरित कर सकें, ताकि हम सब एक-दूसरे से सीख सकें कि क्या सचमुच कारगर होता है, तो इस पुस्तक का प्रकाशन सार्थक हो जाएगा।

लोकतांत्रिक विद्यालय को जिस तरह की गर्मजोशी भरी प्रतिक्रियाएँ प्राप्त हुई हैं उससे इसके सभी लेखक प्रफुल्लित हैं। हमें शुरू से लग रहा था कि मुख्य मीडिया अध्यापकों तथा अन्य शिक्षाकर्मियों की जो तस्वीर उभारता है, और रूढ़िवादी आलोचकों द्वारा उन पर जो आरोप मढ़े जाते हैं, यह सब उस परिश्रमपूर्ण प्रयास को ज़रा भी उजागर नहीं करता जो ये लोग छात्रों के जीवन में परिवर्तन लाने के लिए करते हैं। मीडिया ने तो शिक्षाकर्मियों को लापरवाह, गैररचनात्मक, स्वार्थी (आलसी और ज़रूरत से ज़्यादा वेतन पाने वालों) के रूप में चित्रित किया है, जिन्हें देखते हुए पाठ्यक्रम और मूल्यांकन पर केन्द्रीय नियंत्रण और बाज़ार की प्रतियोगिता का दबाव, दोनों ज़रूरी हैं। यह छवि इतने व्यापक रूप से फैलाई जा चुकी है कि हम इसमें उन अध्यापकों और प्राचार्यों को पहचान ही नहीं सके जिनके साथ हमने काम किया। हम इस बहुप्रचारित विचार से पूरी तरह असहमत थे कि हमारे अपने देश में तथा अन्यत्र जो प्रगतिशील शिक्षानीतियाँ और पद्धतियाँ लागू की गई थीं वे असफल रही हैं। उलटे हमें विश्वास था कि

सफलता की अनकही कहानियाँ बड़ी तादाद में मौजूद हैं और आज जो उनसे करने और जो नहीं करने को कहा जा रहा है उससे अनेकानेक अध्यापक बेहद नाखुश और मायूस हैं। आज के रूढ़िवादी समय में जब इंग्लैण्ड और अमरीका के बड़े और सत्तासीन राजनीतिक दल भी रूढ़िवादी शिक्षा और रूढ़िवादी सामाजिक एजेण्डे को लागू करने पर सहमत हो चुके लगते हैं, हमें विश्वास था कि इन परिस्थितियों में जो हो सकता है उसकी एक साफ तस्वीर बनाना ज़रूरी है।

यह तो हम जानते थे कि अनेक अन्य शिक्षाकर्मी – खासकर इस इब्तिदाई दौर में – हमारी तरह ही सोच रहे हैं, लेकिन हमें यह नहीं पता था कि इस पतली-सी पुस्तक पर हमें इतनी व्यापक प्रतिक्रिया प्राप्त होगी। अकेले अमरीका में अब तक इस पुस्तक की 250,000 प्रतियाँ शिक्षाकर्मियों के हाथों में पहुँच चुकी हैं। जापानी शिक्षक संघ ने इस पुस्तक का अपना संस्करण प्रकाशित किया है। इस पुस्तक का अनुवाद ब्राज़ील, अर्जेन्टीना, चिली, स्पेन तथा अन्य देशों में लोकतांत्रिक शिक्षाकर्मियों का प्रस्थान बिन्दु जैसा बन गया है। हमारे विचार से इससे एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बात का पता चलता है। और वह यह कि अनेक देशों के शिक्षाकर्मी, सामुदायिक कार्यकर्ता और सरकारों के प्रगतिशील सदस्य निरन्तर ऐसे रास्तों की तलाश कर रहे हैं जिनके माध्यम से वे अपने हृदय में बसे लोकतांत्रिक आदर्शों को कार्यरूप में परिणत कर सकें। बेशक, कोई भी एक किताब सफलता पाने के लिए हमारे सारे सवालों का जवाब नहीं दे सकती। लेकिन हमें आशा है कि सक्रिय शिक्षाकर्मियों ने यहाँ जो कहानियाँ कही हैं उनसे आपको "मैं इस सोमवार को क्या करूँ" जैसे प्रश्नों के बेहद उत्तेजक उत्तर मिलेंगे। ये सब मूलभूत रूप से हमारी साझा स्मृति को संरक्षित करने और हमारे राष्ट्र के विद्यालयों, कक्षाओं और समुदायों में लोकतंत्र की विराट सरिता को सतत् प्रवाहित रखने के लिए प्रतिबद्ध हैं। ये सब इंग्लैण्ड में रह रहे आप जैसे अनेक लोगों की तरह यह सुनिश्चित करने के लिए यथासम्भव सब कुछ कर रहे हैं कि लन्दन के उस समाचारपत्र में प्रकाशित सुर्खियाँ और शिक्षा के रूप की प्रस्तुत धारणाएँ झूठ हैं।

टिप्पणियाँ

1 कुछ अन्तरों के साथ अमरीका में स्कूल व्यवस्था त्रिस्तरीय है– प्राथमिक विद्यालय, जिनमें किंडरगार्टन से लेकर पाँचवी-छठी कक्षा तक के बच्चे (5 वर्ष से 11-12 वर्ष तक की आयु के) होते हैं; फिर माध्यमिक विद्यालय, जिनमें छठी-सातवीं से आठवीं-नवीं कक्षा

तक के बच्चे (11-12 वर्ष से 13-14 वर्ष की आयु तक) होते हैं; और फिर उच्चतर माध्यमिक या उच्च विद्यालय जिनमें नवीं या दसवीं से बारहवीं कक्षा के बच्चे (13-14 वर्ष से 17-18 वर्ष की आयु तक) होते हैं।

2 इसे पॉलिटिक्स, मार्केट्स एण्ड अमेरिकाज़ स्कूल्स (जॉन चब और टेरी मोए, ब्रुकिंग इंस्टीट्यूट, वॉशिंगटन, 1990) में अच्छी तरह देखा जा सकता है। ऐसे प्रस्तावों की आलोचनाएँ तो — जैसा कि आप सोच सकते हैं — खूब हुई हैं। उदाहरण के लिए, कल्चरल पॉलिटिक्स एण्ड एजुकेशन (माइकल डब्ल्यू. एपल, ओपन यूनिवर्सिटी प्रेस, बकिंघम, 1996) और गिविंग किड्स द बिज़नेस (एलेक्स मोलनर, वेस्ट व्यू प्रेस, बोल्डर, 1996).

3 देखें ऑफीशियल नॉलेजः डेमोक्रेटिक एजुकेशन इन अ कंज़र्वेटिव एज (माइकल डब्ल्यू. एपल, रूटलेज, लन्दन, 1993) और करीक्यूलम इंटीग्रेशनः डिज़ाइनिंग द कोर ऑफ डेमोक्रेटिक एजुकेशन (जेम्स ए. बीन, टीचर्स कॉलेज प्रेस, न्यू यॉर्क, 1997).

4 डिवॉल्यूशन एण्ड चॉइस इन एजुकेशन (जिऑफ व्हिटी, सेली पॉवर और डेविड हाल्पिन, ओपन यूनिवर्सिटी प्रेस, बकिंघम, 1998, पृ. 63)। यह पुस्तक अमरीका तथा इंग्लैण्ड-वेल्स के बीच तुलना का अच्छा स्रोत है। इसमें न्यूज़ीलैण्ड और ऑस्ट्रेलिया की जानकारी भी उपलब्ध है।

5 वही, पृ. 67-68.

6 वही, पृ. 119-120.

1 जेम्स ए. बीन और माइकल डब्ल्यू. एपल

लोकतांत्रिक विद्यालयों का तर्क

पासाडीना, कैलीफोर्निया 1937। तीसरी कक्षा के छात्रों के एक दल ने अपने विद्यालय, घरों, पड़ोस, और समुदाय की समस्याओं को समझने में अनेक सप्ताह खर्च किए। जिन समस्याओं से वे परिचित थे उनके अलावा अन्य समस्याओं को समझने के लिए उन्होंने अभिभावकों, अध्यापकों, और समुदाय कर्मचारियों से बात की। एक महीने की खोजबीन और विचार-विमर्श के बाद उन्होंने इन समस्याओं को सुलझाने के लिए अपनी सिफारिशें एक पुस्तिका में संकलित कीं। यह पुस्तिका सारे समुदाय में बाँटी जाएगी।

बाल्टीमोर, मेरीलैण्ड, 1953। शहर के एक इलाके की सड़कें एक सप्ताह तक उच्च प्राथमिक विद्यालय के छात्रों से भरी रहीं। वे घर-घर जाकर अल्पसंख्यक समुदाय के स्थानीय निवासियों का मतदान के लिए पंजीयन कर रहे थे। इस साल उनके द्वारा हाथ में ली गई परियोजनाओं में यह तो सिर्फ एक थी। अन्य थीं नागरिक सुरक्षा सर्वेक्षण, सामुदायिक स्वास्थ्य अभियान, और गृह आवंटन की समस्याओं का अध्ययन।

पोर्ट, जार्वीस, न्यू यॉर्क राज्य, 1972। हालाँकि रात ठण्डी और बर्फीली है, लेकिन फिर भी यहाँ एक बैठक चल रही है जिसमें *125* लोग भाग ले रहे हैं। इनमें छात्र, अध्यापक, प्रशासक, अभिभावक, बोर्ड के सदस्य, और विभिन्न सामुदायिक संगठनों के प्रतिनिधि शामिल हैं। ये लोग इस बात पर विचार कर रहे हैं कि कैसे अपने विद्यालयों को एक नया रूप दिया जाए। अन्य कामों के अलावा ये विद्यालय की पत्रिका को अँग्रेज़ी के अलावा

अन्य भाषाओं में भी निकालेंगे, एक नए युवा सामुदायिक केन्द्र की रूपरेखा तैयार करेंगे, छात्रों द्वारा तैयार एक रेडियो कार्यक्रम शुरू करेंगे, नौजवानों के लिए समुदाय के बुजुर्गों का एक परामर्श मण्डल कायम करेंगे, और विद्यालय को समुदाय की गतिवधियों के लिए अधिक सुलभ बनाएँगे।

यूलिसिस, पेन्सिलवेनिया, 1979। हर शुक्रवार की तरह आज भी प्राथमिक विद्यालय के छात्र और अध्यापक विद्यालय में चल रही परियोजनाओं और समस्याओं पर चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए। आज का खास मुद्दा यह है कि किसी ने विद्यालय की दीवार पर कुछ लिख दिया है। आधे घण्टे की चर्चा के बाद तीन प्रस्ताव सामने आए। समूह ने एक नया नियम बनाने का फैसला किया — जो भी विद्यालय की सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाएगा वह तीन दिन तक अपने खाली समय में विद्यालय के चौकीदार के साथ काम करेगा।

बेल्वीडेर, इलीनॉय, 1990। कक्षा की खिड़की से झाँककर नीचे से गुज़रती कचरे की गाड़ी देखकर एक छात्र ने अध्यापक से पूछा, "यह कचरा कहाँ जा रहा है?" अध्यापक ने, जो स्वयं यह जानने को उत्सुक था, कक्षा के बच्चों के लिए ज़मीन के भराव क्षेत्र की एक यात्रा आयोजित की। भराव के आकार और सामग्री को देखते हुए छात्रों ने अपने विद्यालय में संरक्षण और पुनर्चक्रण का एक अभियान चालू किया। कई महीनों बाद उनकी मेहनत रंग लाने लगी। हालाँकि ये पहली कक्षा के ही बच्चे हैं, लेकिन इनकी कोशिशों से विद्यालय में अन्तर आया है।

मेडिसन, विस्कॉन्सिन, 1991। सितम्बर के गरम मौसम में एक दिन माध्यमिक विद्यालय के साठ छात्र और उनके अध्यापक अपने बारे में और दुनिया के बारे में अपनी जिज्ञासाओं और चिन्ताओं के आधार पर अपना पाठ्यक्रम तैयार करने की कोशिश कर रहे हैं। अन्त में वे अपने प्रश्नों को कुछ शीर्षकों के अन्तर्गत सूत्रबद्ध करते हैं। मसलन "भविष्य में जीवन", "पर्यावरण की समस्याएँ", "वाद" और "मतभेद"। अपना पहला लक्ष्य और गतिविधियाँ चुन लेने के बाद वे साल भर तक अपने इन सवालों के जवाब ढूँढने की कोशिश करेंगे।

हम सबने ऐसी कहानियाँ सुनी हैं और हम जानते हैं कि ऐसी कहानियाँ दुर्लभ तो नहीं हैं, पर सामान्य भी नहीं हैं। ये सब सार्वजनिक विद्यालयों में घटित हुई हैं। इन सबमें वास्तविक शिक्षाकर्मी, वास्तविक बच्चे और वास्तविक समुदाय शामिल थे, जो ऊपर से देखने पर अपने जैसे हज़ारों

दूसरों से ज़रा भी भिन्न नहीं थे। फिर भी इन कहानियों में कुछ है, कभी-कभी अविश्वसनीय-सा लगने वाला, जो सोचने पर विवश करता है कि उपयोगी और सार्थक शिक्षा कैसी होनी चाहिए। ये लोग क्या कर रहे हैं? कौन-कौन जुड़ा हुआ है? सब मिलकर कैसे काम कर रहे हैं? इनके काम से किसको फायदा हो रहा है? इन कहानियों और सवालों पर सोचना शुरू करें तो अन्ततः शायद समझ में आने लगेगा कि क्या घटित हो रहा है। सम्भव है हम उस लगभग भुला दिए गए विचार को फिर से याद करें जो कभी सार्वजनिक विद्यालयों के उद्देश्यों और कार्यक्रमों का मार्गदर्शक होना था। यह विचार था, और अब भी है — लोकतंत्र।

शिक्षा पर हो रहे चौतरफा हमले के इस दौर में हमें लोकतांत्रिक विद्यालयों में सुधारों की परम्परा को जीवित रखना चाहिए, क्योंकि इस परम्परा ने बच्चों के लिए उनके विद्यालयों को एक जीवन्त और शक्तिशाली स्थान बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। "सार्वजनिक" विद्यालयों से निराश होकर निजीकरण का रास्ता पकड़ने की बजाय हमें उन विद्यालयों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जहाँ कुछ किया जा सकता है। कई लोग लगातार इस कोशिश में लगे हैं कि हम अपना विचार छोड़ दें, लेकिन इसके बावजूद असफल होती सार्वजनिक शिक्षा व्यवस्था के स्थान पर बाज़ार के तौर-तरीकों — मसलन वाउचर प्लान या मुनाफा केन्द्रित निजी संचालन — को नहीं चुना जा सकता। अमरीका में एडीसन परियोजना और एजुकेशन ऑल्टरनेटिव्स ऐसी ही चीज़ें हैं। अमरीका में ऐसे सार्वजनिक विद्यालय बिखरे पड़े हैं जहाँ अध्यापकों, प्रशासकों, अभिभावकों, सामुदायिक कर्मचारियों और छात्रों की कड़ी मेहनत रंग लाई है। ये वे विद्यालय हैं जो उत्साह से भरे हुए हैं, हालाँकि परिस्थितियाँ कभी-कभी बहुत कठिन और निराशाजनक हो जाती हैं। ये वे विद्यालय हैं जहाँ छात्र और अध्यापक समान रूप से एक ऐसे गम्भीर काम में लगे हैं जो सबके लिए शिक्षाप्रद और समृद्धिकारक अनुभव साबित हो रहा है।

लेकिन फिर भी, लोकतांत्रिक विद्यालयों का विचार आजकल बुरे वक्त से गुज़र रहा है। इसके संकेत हम अपने चारों तरफ देख सकते हैं। सार्वजनिक विद्यालयों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे हमारे सारे बच्चों को शिक्षा दें। लेकिन साथ ही उनके सफलतापूर्वक काम कर पाने के रास्ते में आने वाली सामाजिक और आर्थिक दिक्कतों के लिए भी उन्हें ही दोष दिया जाता है। स्थानीय निर्णयों को राजनीतिक मुहावरे में महिमामण्डित किया जाता है, लेकिन उसी समय विधानसभा में प्रस्ताव रखा जाता है कि

राष्ट्रीय मानक, राष्ट्रीय पाठ्यक्रम और राष्ट्रीय परीक्षा प्रणाली को लागू किया जाए। आलोचनात्मक चिन्तन पर बल देने की माँग की जाती है, जबकि विद्यालय की सामग्री और कार्यक्रमों पर सेन्सरशिप बढ़ा दी जाती है। जनसंख्या के आँकड़े सांस्कृतिक बहुलता को सिद्ध करते हैं, जबकि पाठ्यक्रम को पश्चिमी सांस्कृतिक परम्परा की सीमित परिधि में रखने के लिए दबाव बनाया जाता है। व्यापार और उद्योग की ज़रूरतें अचानक हमारी शिक्षा प्रणाली का महत्वपूर्ण लक्ष्य बन गई हैं। नैतिकता और सदाचार की शिक्षा मात्र कुछ व्यवहारगत परिपाटियों तक सीमित होकर रह गई है। साधन-सम्पन्न समूह समेकित व बहुल सार्वजनिक विद्यालयों से अपने "प्रतिभाशाली" बच्चों के लिए वाउचरों, टैक्स क्रेडिटों, चॉइस प्लानों और अतिविशिष्ट कार्यक्रमों के ज़रिए भागने की कोशिश कर रहे हैं। अमरीका की केन्द्रीय सरकार के अधिकारी सार्वजनिक विद्यालयों को असफल घोषित करते हैं, जबकि उस रिपोर्ट को दबा दिया जाता है जो बताती है कि इन अधिकारियों ने स्वयं अपने ही आँकड़ों का दुरुपयोग किया है (जेन्सन 1994)।

क्या ऐसा हो सकता है कि शिक्षा और विद्यालयों में लोकतांत्रिक उद्देश्यों और कार्यों का एक शताब्दी लम्बा संघर्ष कभी हुआ ही नहीं था? हमारी सामूहिक स्मृति इतनी आसानी से कैसे नष्ट हो सकती है? शिक्षा के क्षेत्रों में थीमेटिक यूनिट टीचिंग (कथ्यगत इकाई शिक्षा) और करीक्यूलम इंटीग्रेशन (पाठ्यक्रम समेकीकरण) आज लोकप्रिय शब्द बन गए हैं, लेकिन क्या हम भूल गए हैं कि इन दोनों अवधारणाओं की जड़ें उन समस्या केन्द्रित "केन्द्रीय" दृष्टि में हैं जिसे आरम्भिक प्रगतिशील सामाजिक पुनर्रचनावादियों ने प्रस्तावित किया था? आज बहुत से समूहों द्वारा बहुकेन्द्रीय समूहन की बात की जा रही है, लेकिन इसे हम लम्बे समय से चलते आ रहे नागरिक अधिकार आन्दोलन से अलग करके कैसे देख सकते हैं? विकास की दृष्टि से "समुचित" प्रणाली क्या आज का आविष्कार है? या वह इस शताब्दी के आरम्भ में स्थापित किए गए बच्चों पर केन्द्रित प्रगतिशील विद्यालयों से भी कहीं जुड़ती है? आज जब हम सहकारी शिक्षण की बात करते हैं तो क्या हम लोकतांत्रिक आन्दोलन के तहत समुदायों और विद्यालयों में किए गए उस सहकारी समूह प्रक्रिया कार्य को भूल सकते हैं जो 1920 के दशक में ही चालू हो गया था? विद्यालयों को अपने समुदाय से जोड़ने के सवाल पर हम इतने भ्रमित कैसे हो सकते हैं जबकि कम से कम पिछले साठ साल के शिक्षा साहित्य में महत्वपूर्ण सेवा परियोजनाओं की अनेक कहानियाँ उपलब्ध हैं?

अश्वेत इतिहास महीने में रोज़ा पार्क्स का चित्र अक्सर एक "थकी हुई, बूढ़ी औरत" के रूप में खींचा जाता है जो बस में बैठना चाहती थी। लेकिन बस के भीतर उनका साहसपूर्ण कार्य हाइलेण्डर फोक स्कूल में प्रतिरोध और सविनय अवज्ञा के उनके काम के महीनों बाद घटित हुआ।[1] इसी तरह विद्यालय शिक्षण से सम्बन्धित हमारे अनेक विश्वस्त और शक्तिशाली विचार विद्यालयों को अधिक लोकतांत्रिक बनाने के लम्बे और साहसी प्रयासों की उपज हैं (उदाहरण के लिए देखें, रग 1939)। हम इन प्रयासों के लाभार्थी हैं और हम पर सार्वजनिक विद्यालयों को एक लोकतांत्रिक समाज की सेवा में लगाने के स्वप्न को आगे ले जाने का दायित्व है।

यहाँ उठाए गए प्रश्नों का उद्देश्य उस लगभग भुला दिए गए स्वप्न की याद दिलाना है, और हमें उस खाई में से निकालना भी है जिसमें हम कोई बीस साल पहले जा गिरे थे। हालाँकि हो सकता है कि हमारी स्मृतियाँ धुँधली पड़ी हों, लेकिन फिर भी हम इस बात को याद कर सकते हैं कि लोकतंत्र के लिए सार्वजनिक विद्यालय आवश्यक हैं। लोकतांत्रिक जीवन शैली के विस्तार के लिए विद्यालयों में क्या होना चाहिए और क्या हो सकता है, इस चर्चा में जब सार्वजनिक विद्यालयों का उल्लेख तक नहीं होता तो हम जैसे चौंककर जाग पड़ते हैं। इसलिए हमें सार्वजनिक विद्यालयों के लिए अपने तर्कों को फिर से जुटाना चाहिए।

लोकतंत्र का अर्थ

हममें से जो लोग संयुक्त राज्य अमरीका में रहते हैं वे दावा करते हैं कि लोकतंत्र हमारे सामाजिक और राजनीतिक सम्बन्धों का मूलमंत्र है। हम कहते हैं कि यह इस बात का आधार है कि हम कैसे स्वयं पर राज करते हैं। यह वह अवधारणा है जिसके अनुसार हम सामाजिक नीतियों और परिवर्तनों की बुद्धिमानी और मूल्यवत्ता का आकलन करते हैं। जब हमारा राजनीतिक जलपोत राह भूलने लगता है तो हम इसी नैतिक लंगर की शरण लेते हैं। और यही वह पैमाना है जिससे हम अन्य राष्ट्रों की राजनीतिक प्रगति और हमारे साथ उनके व्यापारिक दर्जे को मापते हैं।

तो कोई आश्चर्य नहीं कि आजकल "लोकतंत्र" शब्द ज़्यादा सुनाई देता है। दुनिया में कई जगह दलित जन अपने नागरिक और मानव अधिकारों के लिए संघर्ष करते हैं। तानाशाहियाँ और चुनी हुई सरकारें तेज़ी से उलट दी जाती हैं। अमरीका में बढ़ती संख्या में लोग यह कहने लगे हैं कि सभी स्तरों

के राजनीतिज्ञों का अपने मतदाताओं से कोई सम्पर्क नहीं रह गया है। राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक समूहों का आपसी संघर्ष मुक्त अभिव्यक्ति, निजता, भूमि उपयोग, तथा जीवन शैलियों के साथ-साथ सामाजिक हित बनाम व्यक्ति के निजी अधिकारों की बहस में आग में घी का काम करता है। इतने कोलाहल में शायद लोकतंत्र ही वह विचार है जो घटनाओं और विचारों को परखने की महत्वपूर्ण कसौटी बन सकता है।

लेकिन मूलमंत्र को और नैतिक लंगर को कई तरह के विचारों के लिए खोखली नारेबाज़ी और जनसमर्थन जुटाने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला राजनीतिक टोटका भी बनाया जा सकता है। इनके अर्थ में एक तरह की अनिश्चितता अन्तर्निहित है। "लोकतंत्र" भी इसका अपवाद नहीं है। वुड्रो विल्सन इसे अच्छी तरह समझते थे। इसलिए उन्होंने प्रथम विश्वयुद्ध में अमरीका की भागीदारी के विरोधियों को यह कहकर खामोश कर दिया कि हमारे सैनिक दुनिया को लोकतंत्र के लिए सुरक्षित बनाने की खातिर लड़ रहे हैं। तब "लोकतंत्र" शब्द के प्रयोग से बात बन गई और तब से अब तक इसके नाम पर न जाने कितनी राजनीतिक और सैनिक हरकतें की जा चुकी हैं।

हमारे समय में भी लोकतंत्र का अर्थ उतना ही अस्पष्ट है, और इस अस्पष्टता की आलंकारिक सुविधा आज पहले से भी ज़्यादा स्पष्ट है (एपल 1988)। मसलन कोई भी समझ सकता है कि कैसे लोकतंत्र के नाम पर नागरिक अधिकार आन्दोलन, विस्तीर्ण मतदान अधिकार, और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को बढ़ावा दिया जा सकता है। लेकिन मुक्त बाज़ार अर्थव्यवस्था और स्कूल चॉइस वाउचरों के हितसाधन और दो प्रमुख राजनीतिक दलों का वर्चस्व बनाए रखने के लिए भी लोकतंत्र का उपयोग किया जाता है। लोग जो भी करते हैं उसे उचित साबित करने के लिए वे लोकतंत्र को ढाल बनाते हैं। हर दिन अनगिनत बार हम सुनते हैं: "सुनो! हम लोकतंत्र में रहते हैं। ठीक है न?"

दूसरी तरफ कोई बड़ी बात नहीं यदि हम कुछ लोगों को यह भी कहते सुनें कि लोकतंत्र अप्रासंगिक हो गया है, कि यह तेज़ी से जटिल होती जा रही दुनिया में हद से ज़्यादा अक्षम, बल्कि खतरनाक हो गया है। ऐसे लोगों के लिए लोकतंत्र का पक्ष लेना एक कठिन काम बन गया है, या शायद जो वे पाना चाहते हैं, वह उसमें आड़े आता है। अमरीका जैसे समाज में जहाँ सम्पदा और सत्ता के स्पष्ट विभाजन हैं, लोकतंत्र से जुड़ी

अस्पष्टता और स्वच्छन्दता ने कुछ लोगों को दूसरों से अधिक लाभ पहुँचाया है। लोकतंत्र की परिभाषा को सुनिश्चित करना और समूचे समाज तक इसके सही अर्थ को पहुँचाना कुछ साधन-सम्पन्न लोगों को अपनी सत्ता और जीवन स्तर के लिए खतरा लगता है। इस दृष्टिकोण को समझने के लिए उस चौंकाने वाले विरोधाभास पर एक नज़र डाल लेना काफी है जो एक तरफ तो विद्यालयों से बड़ी उपलब्धियों की अपेक्षा करने वाला आन्दोलन चलाता है और दूसरी तरफ विद्यालयों पर समान व्यय का विरोध करता है।

इन जटिल परिस्थितियों में लोकतांत्रिक विद्यालयों पर पुस्तक लिखना शेखचिल्लीपन जैसा लग सकता है। आखिर जब समाज में लोकतंत्र का अर्थ ही इतना भ्रमपूर्ण बना हुआ है तो विद्यालयों के रोज़मर्रा के कामकाज में हम इसका क्या अर्थ लगा सकते हैं? इस खतरे को दिमाग में रखते हुए भी हम आगे बढ़े, क्योंकि हम एक आस्था से संचालित थे। हमें विश्वास है कि लोकतंत्र का कुछ न कुछ अर्थ ज़रूर होता है और एक ऐसे समय में जब कई लोग विद्यालयों के भविष्य पर तीखी बहस कर रहे हैं, अर्थ को सामने लाना ज़रूरी है। इसके अलावा हमें यह भी लगता है कि जो लोग लोकतंत्र के फल चख चुके हैं वे इसे छोड़ने को आसानी से तैयार नहीं होंगे। यह और भी मुश्किल है कि वे लोकतंत्र के लाभ अपने बच्चों के लिए, या सभी लोगों के लिए न चाहें। ड्यूई तथा अन्य विचारकों ने जिसे "लोकतांत्रिक आस्था" कहा है, और जिसका बुनियादी विश्वास है कि लोकतंत्र का एक शक्तिशाली अर्थ होता है, उसमें हमारी भी आस्था है। हम मानते हैं कि यह एक कारगर प्रणाली है, और यदि हम अपने सामाजिक क्रियाकलाप में स्वतंत्रता और मानवीय गरिमा बनाए रखना चाहते हैं तो लोकतंत्र आवश्यक है।

सामाजिक मामलों में लोकतंत्र कई तरह से काम करता है। हममें से अधिकांश लोगों को जिन्होंने अमरीकी (या अन्य) विद्यालयों में पढ़ाई की है, यह सिखाया गया था कि लोकतंत्र एक राजनीतिक शासन प्रणाली है जिसमें शासितों की रज़ामन्दी शामिल होती है और जहाँ सबको समान अवसर प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए, हमें पढ़ाया गया था कि लोकतांत्रिक राज्यों में नागरिक चुनावों में सीधे भाग ले सकते हैं, और संसद, विधानसभा तथा विद्यालयों के नीति निर्धारक मण्डलों-समितियों में उनके द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि उनका प्रतिनिधित्व करते हैं।

लेकिन उन परिस्थितियों के बारे में ज़्यादा विस्तार से नहीं बताया जाता था जिन पर लोकतंत्र या "लोकतांत्रिक जीवन पद्धति" निर्भर करती है (बीन 1990)। यही परिस्थितियाँ और शिक्षा द्वारा उनका प्रचार-प्रसार लोकतांत्रिक विद्यालयों का केन्द्रीय सरोकार है। इन परिस्थितियों में से कुछ इस प्रकार हैं:

1 लोकप्रियता की परवाह किए बगैर विचारों का मुक्त प्रवाह जिससे लोग अधिक से अधिक सूचित हो सकें।

2 समस्याओं के निदान हेतु सम्भावनाएँ निर्मित करने की लोगों की व्यक्तिगत और सामूहिक क्षमता पर विश्वास।

3 विचारों, नीतियों और समस्याओं के मूल्यांकन के लिए आलोचनात्मक प्रतिक्रिया और विश्लेषण का उपयोग।

4 दूसरों के कल्याण तथा "सामूहिक हित" की चिन्ता।

5 व्यक्तियों, खासकर अल्पसंख्यकों की गरिमा और अधिकारों की चिन्ता।

6 इस बात की समझ कि लोकतंत्र कोई "आदर्श" नहीं जिसे प्राप्त करने की कोशिश करना है, बल्कि वह मूल्यों का एक "आदर्शीकृत" स्वरूप है जिसे जीना है और जिससे जीवन में मार्गदर्शन प्राप्त करना है।

7 लोकतांत्रिक जीवन पद्धति को बढ़ावा देने और विस्तृत करने के लिए सामाजिक संस्थाओं का गठन।

यदि लोग लोकतांत्रिक जीवन पद्धति को बनाना और बचाए रखना चाहते हैं तो उन्हें यह सीखने का अवसर मिलना चाहिए कि इस जीवन पद्धति का अर्थ क्या है और इसे कैसे अपनाया जा सकता है (ड्यूई 1916)। हालाँकि सामान्यबोध इस कथन की पुष्टि करता है, लेकिन शिक्षा में शायद लोकतांत्रिक विद्यालयों से ज़्यादा समस्यामूलक कोई अवधारणा नहीं है। यहाँ तक कि कुछ लोग इसे एक प्रकार का अन्तर्विरोध ही समझते हैं। ऐसा कैसे हो सकता है? सरल शब्दों में कहा जाए तो कई लोग मानते हैं कि लोकतंत्र संघीय सरकार का ही एक रूप है, इससे ज़्यादा कुछ भी नहीं, और इसलिए इसे विद्यालयों और अन्य सामाजिक संस्थाओं में लागू नहीं किया जा सकता है। कई लोग यह भी मानते हैं कि लोकतंत्र वयस्कों का अधिकार है, बच्चों का नहीं। और कुछ लोगों का सोचना है कि लोकतंत्र से विद्यालयों में काम नहीं चल सकता।

कई अन्य लोगों का विश्वास है कि लोकतांत्रिक जीवन पद्धति का आधार है लोगों को इसे जानने और इसके अनुसार जीने का अवसर प्रदान करना। उनका कहना है कि विद्यालयों का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वे छात्रों को इससे परिचित कराएँ। वे अच्छी तरह जानते हैं कि इस तरह की जीवन पद्धति को सिर्फ अनुभव द्वारा ही सीखा जा सकता है। यह कोई ऐसी चीज़ नहीं है जिसे अन्य चीज़ें सीख चुकने के बाद हासिल किया जा सके। इसके अलावा इनका यह भी विश्वास है कि लोकतंत्र सबके लिए होना चाहिए — बच्चों के लिए भी। अन्त में वे मानते हैं कि लोकतंत्र न तो जटिल है, न खतरनाक। यह समाजों में भी सफलतापूर्वक काम कर सकता है और विद्यालयों में भी। जैसा कि मेक्सिन ग्रीन (1985, पृ. 4) ने लिखा है, "बेशक लोकतंत्र में शिक्षा का दायित्व है कि वह बच्चों को नागरिक बनने के लिए, सार्वजनिक जीवन में भागीदारी के लिए और उसमें मुखर भूमिका निभाने के लिए समर्थ बनाए।"

तथापि जो लोग लोकतांत्रिक विद्यालयों की रचना के लिए प्रतिबद्ध हैं वे यह भी समझते हैं कि इसके लिए सिर्फ बच्चों की शिक्षा ही काफी नहीं। लोकतांत्रिक विद्यालयों को एक ऐसा स्थान होना होता है जो लोकतांत्रिक हो। इसलिए वह उन वयस्कों पर भी लागू होता है जो विद्यालयों में विभिन्न भूमिकाएँ निभाते हैं। इसका अर्थ यह है कि पेशेवर शिक्षाकर्मियों को ही नहीं बल्कि अभिभावकों, सामुदायिक कार्यकर्ताओं तथा अन्य नागरिकों को भी अधिकार है कि वे विद्यालय की नीतियों और कार्यप्रणाली से पूरी तरह परिचित हों और उन्हें बनाने में आलोचनात्मक भागीदारी करें।

लोकतांत्रिक विद्यालयों के प्रस्तावक यह भी समझते हैं, और कई बार कष्टपूर्ण तरीकों से, कि लोकतंत्र को लागू करना तनाव और अन्तर्विरोध पैदा करता है। उदाहरण के लिए, निर्णय लेने की प्रक्रिया में लोकतांत्रिक भागीदारी चालू करने से लोकतंत्र विरोधी प्रस्ताव भी सामने आने लगते हैं, जैसे सामग्री पर सेंसर लगाने की लगातार माँग, प्राइवेट विद्यालय की ट्यूशन के लिए टैक्स व वाउचरों का उपयोग, और विद्यालय जीवन में ऐतिहासिक गैर-बराबरी को बनाए रखने की माँग। इससे भी मुश्किल बात यह है कि लोकतंत्र के नाम पर उसका मात्र आभास भर बने रहने का खतरा भी हमेशा मौजूद रहता है जिसमें प्राधिकारी भागीदारी के लिए लोगों को आमंत्रित तो ज़रूर करते हैं लेकिन सिर्फ पहले ही लिए जा चुके निर्णयों पर अनुमोदन की मोहर लगवाने के लिए (ग्रेबनर 1988)। उक्त अन्तर्विरोधों और तनावों से यही सिद्ध होता है कि सच्चे लोकतंत्र का

रास्ता कठिनाइयों से भरा हुआ है। लेकिन पेशेवर शिक्षाशास्त्रियों और नागरिकों के लिए यह एक अवसर भी है कि वे लोकतांत्रिक विद्यालयों की स्थापना के लिए मिलकर काम करें ताकि सम्पूर्ण समुदाय का सामूहिक हित सम्भव हो सके।

यह पुस्तक उन शिक्षाकर्मियों के लिए और उन्हीं के बारे में है जो लोकतंत्र के लिए प्रतिबद्ध हैं, जो लोकतांत्रिक जीवन पद्धति को महत्वपूर्ण मानते हैं, जिन्हें विश्वास है कि विद्यालय एक लोकतांत्रिक स्थान हो सकते हैं, और जिनमें इस कल्पना को कार्यरूप में परिणत करने का साहस है। आगामी अध्यायों में हम खुद उनके मुँह से सुनेंगे कि अपने विद्यालय और कक्षाओं में लोकतंत्र के विचार को मूर्त्त करने के लिए उन्होंने क्या किया। ये कहानियाँ इसलिए भी उल्लेखनीय हैं कि शिक्षा बिरादरी में लोकतांत्रिक विद्यालयों का विचार भी काफी अस्वीकार्य रहा है। इन कहानियों में आसान आश्वासन, बने-बनाए कार्यक्रम या पद्धतियों के बासी नारे नहीं हैं। इसके स्थान पर, लगभग सभी विद्यालयों की कहानियों में वास्तविक शिक्षाकर्मियों का कठोर संघर्ष दिखाई देता है — संघर्ष जो उन्होंने अपने और हमारे अटूट विश्वासों को वास्तविकता में बदलने के लिए किया। इस पुस्तक के लेखक उन रूढ़िवादी समाधानों से सन्तुष्ट नहीं हैं जिन्हें 1970 से ही रखा जा रहा है। और ये क्या हैं? ज़्यादा सख्त केन्द्रीय नियंत्रण, विषयवस्तु का मानकीकरण, खासा संकुचित मूल्यांकन वगैरह-वगैरह। हम मानते हैं कि हमें सिर्फ हाथ मलते ही नहीं रहना चाहिए, बल्कि इस प्रश्न का असली उत्तर खोजना चाहिए कि विद्यालयों में वास्तव में क्या कारगर रहता है?

लोकतांत्रिक विद्यालय क्या है?

इससे पहले कि हम सच्ची जीवन कथाएँ प्रस्तुत करें, हम उनकी प्रस्तुति का सन्दर्भ बताना चाहते हैं। लोकतांत्रिक विद्यालय क्या है? यदि हम किसी लोकतांत्रिक विद्यालय में जाएँ तो हम वहाँ क्या देखने की उम्मीद कर सकते हैं? समय के साथ कैसे विकसित हुई लोकतांत्रिक विद्यालय की अवधारणा? इसके मूलभूत सिद्धान्त क्या हैं? इन विद्यालयों के अस्तित्व को क्या खतरा है? एक ऐसे समाज में जो लोकतांत्रिक होने का दावा करता है, ये कहानियाँ उल्लेखनीय क्यों और कैसे बन सकीं?

लोकतंत्र की ही तरह लोकतांत्रिक विद्यालय भी हवा में से नहीं आए हैं।

ये उन शिक्षाकर्मियों के सतत् प्रयासों का प्रतिफल हैं जिन्होंने लोकतंत्र को जीवन में उतारने के लिए अवसरों और सुविधाओं का निर्माण किया है (उदाहरण के लिए देखें, बास्टियन तथा अन्य 1986; वुड 1988, 1992)। अवसर और सुविधाएँ पैदा करने का यह काम दो स्तरों पर चलता है। पहला है विद्यालयीन जीवन में लोकतांत्रिक संरचनाओं और पद्धतियों का निर्माण। दूसरा है ऐसे पाठ्यक्रम की व्यवस्था जिससे छात्रों को लोकतांत्रिक अनुभव प्राप्त हों।

लोकतांत्रिक संरचनाएँ और पद्धतियाँ

यह कहना एक घिसी-पिटी बात है कि लोकतंत्र शासितों की स्वीकृति पर आधारित होता है। लेकिन विद्यालयों के मामले में यह सच है कि वहाँ विद्यालय से सीधे जुड़े सभी लोगों को — छात्रों को भी — निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेने का अधिकार होता है। इस कारण, लोकतांत्रिक विद्यालय संचालन और नीति निर्धारण के मामले में व्यापक भागीदारी के लिए ही जाने जाते हैं। विद्यालय के लिए निर्णय लेने वाले समूहों, जैसे समितियों, परिषदों आदि में न केवल पेशेवर शिक्षाकर्मी होते हैं बल्कि बच्चे, उनके अभिभावक और विद्यालय समुदाय के अन्य सदस्य भी होते हैं। कक्षाओं में अध्यापक और बच्चे मिलकर अपने सरोकारों से जुड़े हुए मसलों पर बातें करते हैं, योजना बनाते हैं और निर्णय लेते हैं। विद्यालय स्तर और कक्षा स्तर पर बनाई गई यह लोकतांत्रिक योजना लोकतंत्र के नाम पर पहले से लिए गए निर्णयों पर अनुमोदन की मोहर लगवाना नहीं है, बल्कि जीवन को प्रभावित करने वाले मसलों पर निर्णय लेने के लोगों के अधिकार का सम्मान करने की ईमानदार कोशिश है।

फिर भी, हमें भूलना नहीं चाहिए कि स्थानीय निर्णय भी लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुरूप ही लिए जाने चाहिए। लोकतंत्र का यह एक अन्तर्विरोध है कि स्थानीय स्तर पर लिए गए लोकप्रिय निर्णय हमेशा लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुरूप नहीं होते। यदि सारी बात स्थानीय लोगों की मर्ज़ी पर ही छोड़ दी जाए तो फिर हमें ऐसे विद्यालय भी देखने को मिल सकते हैं जिनमें कानून-सम्मत नस्लवादी भेदभाव चल रहा हो या जिनमें अमीरों के बच्चों के अलावा सबका प्रवेश वर्जित हो। संक्षेप में, लोकतांत्रिक विद्यालयों की सफल क्रियान्विति के लिए कुछ मामलों में राज्य का हस्तक्षेप भी ज़रूरी है, खासकर वहाँ जहाँ पर स्थानीय निर्णयों से किसी समूह विशेष के लोगों का दमन या अलगाव होता हो। जिन्हें सम्पूर्ण अधिकार अपने हाथ में रखने

की इच्छा होती है उन्हें राज्य का यह हस्तक्षेप अच्छा नहीं लगता। लेकिन यह हमें याद दिलाता है कि लोकतांत्रिक मूल्यों और अधिकारों का व्यापक वितरण कागज़ पर लिखे गए सिद्धान्तों से कुछ अधिक होना चाहिए।

हमारा अपना दौर इस बात का सबूत है कि लोकतंत्र की रक्षा के राज्य के उत्तरदायित्व और अनेक हित समूहों के अभिव्यक्ति के अधिकार के बीच एक तनाव की स्थिति बनी रहती है। उदाहरण के लिए, एक लोकतांत्रिक समाज में सार्वजनिक विद्यालयों से यह अपेक्षा की जाती है कि उनमें अनेकानेक विषयों पर विचार-विमर्श और आलोचना की आज़ादी होगी। लेकिन अनेक विशेष हित समूह, खासकर धार्मिक मूलतत्ववादी, माँग करते हैं कि विद्यालयों में केवल उन्हीं विचारों और विषयों पर बात करने की छूट हो जो उनका समर्थन करते हैं (डेलफेटोर 1993)। फिर यह भी है कि वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में स्थानीय समूह राष्ट्रीय पाठ्यक्रम निर्माण के प्रयासों से दुःखी रहते हैं, क्योंकि इसमें विषय सामग्री की परिधि वहीं तक सीमित होती है जहाँ तक उसे राष्ट्रीय स्तर पर किन्हीं विशेष समूहों द्वारा महत्वपूर्ण माना जाता है। लोकतांत्रिक विद्यालयों की एक खासियत है विद्यालय के मामलों में सभी सम्बद्ध पक्षों की व्यापक भागीदारी, लेकिन यह काम इतना सरल नहीं कि सभी को आमंत्रित करने भर से पूरा हो जाए। क्योंकि अपना मत व्यक्त करने का मौका देते ही विशिष्ट समुदायों के हितों और व्यापक सामूहिक हितों के बीच पटरी बैठाने का सवाल उठ खड़ा होता है।

लोकतांत्रिक विद्यालयों से जुड़े हुए लोग स्वयं को सीखने वाले समुदाय का हिस्सा समझते हैं। अपने स्वभाव से ही ये समुदाय एक-दूसरे से भिन्न होते हैं और इस भिन्नता को समस्या नहीं समझा जाता, इसकी कद्र की जाती है। इन समुदायों में अलग-अलग आयु, संस्कृतियों, नस्लों, लिंगों, समाजार्थिक वर्गों, आकांक्षाओं और क्षमताओं के लोग होते हैं। ये विभिन्नताएँ समुदाय को समृद्ध करती हैं और इसके दृष्टिकोण को व्यापक बनाती हैं। किसी भी आयु के व्यक्ति को इन भिन्नताओं के आधार पर अलग करना या उसे खास किस्म की पहचान या नाम देना विभाजन और श्रेणी भेद पैदा करता है। ऐसा करना समुदाय की लोकतांत्रिक प्रकृति से भटकाव है और यह उन व्यक्तियों की गरिमा के भी विरुद्ध है जिनके खिलाफ इसका उपयोग होता है।

जहाँ समुदाय विभिन्नता की कद्र करता है, वहीं उसका एक साझा उद्देश्य

भी होता है। निजीकरण के समर्थक या आर्थिक तर्कसंगति चाहने वाले विद्यालय चलाने के बारे में जो भी कहें, लोकतंत्र कोई स्वार्थ-केन्द्रित सिद्धान्त नहीं है जो दूसरों की कीमत पर अपने हित साधने की छूट देता हो। सामान्य हित लोकतंत्र की केन्द्रीय विशेषता है। इसलिए लोकतांत्रिक विद्यालयों में सीखने वाले समुदाय सहयोग और सहकार पर ज़ोर देते हैं न कि प्रतियोगिता पर। लोग अपना हितलाभ दूसरों में देखते हैं, और इस बात की व्यवस्था की जाती है कि बच्चों को दूसरों की मदद करके समुदाय के जीवन को उन्नत बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

इन सब व्यवस्थाओं में और इनका समर्थन करने वाले नीतिगत निर्णयों में लोकतांत्रिक विद्यालयों के लोग ढाँचागत बराबरी पर लगातार ज़ोर देते हैं। पढ़ने के अवसर या प्रथम प्रवेश की सुविधा लोकतांत्रिक विद्यालयों का एक आवश्यक पहलू है, लेकिन प्रवेश या अवसर ही पर्याप्त नहीं है। एक प्रामाणिक लोकतांत्रिक समुदाय में सभी बच्चों को विद्यालय के सभी कार्यक्रमों में भाग लेने का और उसके मूल्यों को आत्मसात करने का अधिकार रहता है। इसी कारण लोकतांत्रिक विद्यालयों में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बच्चों के समक्ष कोई संस्थागत बाधा न आने पाए। पक्षपातपूर्ण परीक्षण, ट्रैकिंग तथा इस तरह की अन्य व्यवस्थाओं आदि को निर्मूल करने का पूरा प्रयास किया जाता है ताकि नस्ल, लिंग या वर्ग के आधार पर किसी को वंचित न रखा जा सके।

लोकतंत्र के लिए प्रतिबद्ध शिक्षाकर्मी समझते हैं कि विद्यालय में गैर-बराबरी के स्रोत समुदाय में भी पाए जा सकते हैं। कम से कम इतना तो वे समझते ही हैं कि विद्यालय से प्राप्त लोकतांत्रिक अनुभव बाहर की दुनिया में जाते ही धुल भी सकते हैं (गटमैन 1987)। अपने आपको एक व्यापक समुदाय का हिस्सा समझते हुए वे वहाँ भी लोकतंत्र फैलाना चाहते हैं, बच्चों के लिए ही नहीं, सबके लिए। संक्षेप में, वे एक वृहत् स्तर पर लोकतंत्र चाहते हैं; विद्यालय उन स्थानों में से सिर्फ एक स्थान है जिन पर उन्होंने अपना ध्यान केन्द्रित कर रखा है। यह एक महत्वपूर्ण बिन्दु है। शिक्षा का क्षेत्र असफल विद्यालय सुधारों की गर्दोगुबार से अँटा हुआ है, और इनमें से अनेक चारों ओर की सामाजिक स्थितियों के कारण ही असफल हुए थे। केवल वही सुधार बच्चों, शिक्षाकर्मियों, विद्यालयों तथा विद्यालयों द्वारा सेवित समुदायों के जीवन में कोई स्थायी अन्तर पैदा करने में सफल हो सकते हैं जो इन परिस्थितियों को ध्यान में रखें और उनसे सक्रिय भागीदारी करवा सकें।

खासतौर पर यह अन्तिम बिन्दु ही लोकतांत्रिक विद्यालयों को अन्य "प्रगतिशील" विद्यालयों से अलग करता है, मसलन सिर्फ मानवतावादी विद्यालयों या बाल केन्द्रित विद्यालयों से। लोकतांत्रिक विद्यालयों में ये तत्व भी शामिल हैं, लेकिन उनकी नज़र विद्यालय का वातावरण सुधारने या बच्चों में आत्मसम्मान की भावना पैदा करने से कहीं आगे है। लोकतांत्रिक शिक्षाकर्मियों की कोशिश विद्यालय में सामाजिक गैर-बराबरी की चुभन कम करना मात्र नहीं है, बल्कि उन परिस्थितियों को बदलना है जो गैर-बराबरी पैदा करती हैं। इसी कारण वे विद्यालय के भीतर के गैर-लोकतांत्रिक आचरण को बाहर की बड़ी दुनिया से जोड़कर देखते हैं। उदाहरण के लिए, विषम समूह बनाने का आधार संवर्धित अकादमिक और सामाजिक उपलब्धियाँ तो हैं ही, लेकिन महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों के रूप में न्याय और समान अवसर भी उसका आधार हैं (ओएक्स 1985)। अन्य प्रगतिशील शिक्षाकर्मियों की ही तरह लोकतंत्र से जुड़े शिक्षाकर्मी भी बच्चों से गहरा सरोकार रखते हैं। लेकिन वे यह भी जानते हैं कि इसके लिए उनका नस्लवाद, अन्याय, केन्द्रीकृत सत्ता, गरीबी तथा अन्य असमानताओं के खिलाफ डटकर खड़े रहना ज़रूरी है। ऐसा विद्यालय में भी ज़रूरी है और समाज में भी।

लोकतांत्रिक विद्यालयों के लिए आवश्यक संरचना और प्रक्रिया का आरम्भिक चित्र तुरन्त खींचा जा सकता है। लेकिन इसका विस्तृत और सघन चित्र आसानी से चरितार्थ नहीं होता। एक लोकतांत्रिक विद्यालय को खड़ा करने और चलाए रखने का काम मुश्किलों से भरा और थकाने वाला है। आखिर समाज में लोकतंत्र के गुणगान के बावजूद, और इस सामान्य समझ के बावजूद कि लोकतंत्र का विचार लोकतांत्रिक आचरण से ही सीखा जा सकता है, सच यह है कि हमारे विद्यालय काफी अलोकतांत्रिक संस्था रहे हैं। जहाँ लोकतंत्र का ज़ोर परस्पर सहयोग पर रहता है, वहीं बहुत सारे विद्यालयों में परस्पर प्रतियोगिता को प्रोत्साहित किया जाता है – अच्छे अंकों के लिए, श्रेणी के लिए, संसाधनों के लिए, कार्यक्रमों के लिए आदि, आदि। जहाँ लोकतंत्र सामान्यहित की चिन्ता करना सिखाता है, वहीं अनेक विद्यालय बाहर से थोपे गए राजनीतिक एजेण्डे के प्रभाव में स्वार्थ पर आधारित व्यक्तिवादिता के विचार को बढ़ावा देते हैं। जहाँ लोकतंत्र में अनेकता की कद्र की जाती है, वहीं बहुत सारे विद्यालयों ने देश के सर्वाधिक शक्तिशाली समूहों के हितों और आकाँक्षाओं का ही प्रतिनिधित्व किया है। उन्होंने कमज़ोर समूहों के हितों की हमेशा उपेक्षा की

है। लोकतंत्र में विद्यालयों को दर्शाना चाहिए कि सबके लिए समान अवसर कैसे उपलब्ध कराए जा सकते हैं, लेकिन बहुत सारे विद्यालयों में ट्रैकिंग करना और क्षमतावार समूह बनाना जैसी बुराइयाँ व्याप्त हैं जो सबको समान अवसर के सिद्धान्त का सीधा उल्लंघन करती हैं। कई लोगों पर, खासकर गरीबों, अश्वेतों और महिलाओं पर इसका बुरा असर पड़ता है।

लोकतांत्रिक शिक्षा के लिए प्रतिबद्ध लोगों को अक्सर शिक्षण की वर्चस्वशाली परम्परा के विरोध में खड़े होना होता है। हर कदम पर उनके विचारों और प्रयासों का वे लोग प्रतिरोध करते हैं जिन्हें गैर-बराबरी से लाभ होता है और जिनकी दिलचस्पी विद्यालयों के सिरे से कायापलट में नहीं सिर्फ कार्यकुशलता और श्रेणीबद्ध सत्ता में रहती है। लोकतांत्रिक विद्यालयों के निर्माण के काम में दरपेश हताशा और कुण्ठा शिक्षा नीतियों और लोकमत में व्याप्त अलोकतांत्रिक धारा के माहौल में उन्हें चलाए रखने के काम में और बढ़ जाती है। लेकिन लोकतांत्रिक शिक्षाकर्मी इस बात को समझते हैं कि लोकतंत्र कोई बनी-बनाई, सुपरिभाषित "आदर्श स्थिति" नहीं है जिसे सिर्फ प्राप्त करना है। यह तो सतत् परिश्रम से कुछ बदलाव लाने की एक कठिन चेष्टा है। चुनौती आसान नहीं है; राह में मुश्किलें हैं, विरोध और विवाद हैं। जैसा कि एक पुरानी कहावत कहती है, "जंगल में दस मील। और दस मील घर से बाहर।"

लोकतांत्रिक पाठ्यक्रम

अब तक जिन संरचनाओं और पद्धतियों की चर्चा की गई है वे आम तौर पर विद्यालयों की रोज़मर्रा की ज़िन्दगी की गुणवत्ता को परिभाषित करती हैं। विद्यालय की प्राचीन परम्पराओं और गहरी संरचना का हिस्सा होने के नाते उनसे यह सबक भी मिलता है कि विद्यालय के मूल्य क्या हैं और किसके लिए हैं। इस तरह वे एक "प्रच्छन्न" पाठ्यक्रम बनाते हैं जिसके माध्यम से छात्र न्याय, सत्ता, गरिमा और आत्मबोध के महत्वपूर्ण पाठ सीख सकें। इन संरचनाओं और प्रक्रियाओं का लोकतंत्रीकरण ऐसे विद्यालयों का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू है। लेकिन इसकी पूरी तस्वीर तब बनती है जब योजनाबद्ध और प्रकट पाठ्यक्रम में भी लोकतंत्र लाने का रचनात्मक प्रयास किया जाता है।

चूँकि लोकतंत्र में लोगों की सूचित सहमति होना ज़रूरी है, लोकतांत्रिक

पाठ्यक्रम में सूचनाओं के एक व्यापक वृत्त पर और अलग-अलग मत रखने वालों के अभिव्यक्ति के अधिकार पर ज़ोर दिया जाता है। एक लोकतांत्रिक समाज में शिक्षाकर्मियों का दायित्व है कि वे बच्चों द्वारा विभिन्न विचारों से परिचित होने और अपने विचार व्यक्त करने में सहायक बनें। दुर्भाग्य से, अनेक विद्यालय अनेक तरीकों से अपनी इस ज़िम्मेदारी से मुँह चुराते हैं। पहले तो वे विद्यालय द्वारा दिए जा रहे ज्ञान को ऊँचे दर्जे के ज्ञान या "आधिकारिक ज्ञान" तक सीमित कर देते हैं जोकि प्रभुत्वशाली संस्कृति द्वारा उत्पन्न या समर्थित होता है (एपल 1993)। दूसरे वे उन आवाज़ों को खामोश कर देते हैं जो इस प्रभुत्वशाली संस्कृति से बाहर हैं, खासकर अश्वेतों, महिलाओं और बच्चों की आवाज़ें। इसकी पुष्टि वर्तमान पाठ्यक्रम, अध्ययन के लिए सुझाई गई पुस्तकों की सूचियों और शिक्षण निर्देशों को थोड़े ध्यान से देखने पर हो सकती है।

सबसे अधिक विचलित करने वाली बात यह है कि लगभग सभी विद्यालय इस आधिकारिक, ऊँचे दर्जे वाले ज्ञान को इस तरह पढ़ाते रहे हैं मानो यह किसी अत्यन्त विश्वसनीय और अपरिवर्तनशील स्रोत से प्राप्त "सत्य" हो। जो लोग एक अधिक सहभागितापूर्ण पाठ्यक्रम के पक्ष में हैं वे जानते हैं कि ज्ञान समाज की ही उपज होता है। ज्ञान जिन लोगों द्वारा निर्मित और वितरित होता है, उनके अपने कुछ मूल्य, हित और पूर्वाग्रह होते हैं। यह जीवन का एक सरल-सा तथ्य है, क्योंकि हम सबको बनाने में हमारी संस्कृति, लिंग, भूगोल इत्यादि का हाथ रहता है। लेकिन फिर भी एक लोकतांत्रिक पाठ्यक्रम में बच्चे अपने समाज का "आलोचनात्मक अध्ययन" करना सीखते हैं। उन्हें इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाता है कि वे जब भी किसी "ज्ञान" या "दृष्टिकोण" के सामने पड़ें तो पूछें कि यह किसने कहा? उन्होंने ऐसा क्यों कहा? हम इसे क्यों मानें? और अगर हम इसे मान लें और वैसा ही करें तो इससे किसको फायदा होगा? आदि।

बात को और ठीक से समझने के लिए एक कक्षा के उदाहरण पर गौर करें जिसे इस पुस्तक के एक सम्पादक ने स्वयं देखा है। अध्यापक और बच्चे "सामयिक घटनाओं" पर चर्चा कर रहे थे। वे समाचारपत्रों से ली गई सामग्री की सहायता से "प्राकृतिक आपदाओं" को समझने की कोशिश कर रहे थे। प्राकृतिक आपदाओं से हमारा क्या आशय है और उनकी यह परिभाषा किसने बनाई है, यह प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है। मसलन हम लोग अब (दुर्भाग्य से) ऐसे चित्र देखने के अभ्यस्त हो चुके हैं जिनमें तूफान, सूखा वगैरह से हज़ारों आदमियों की जान चली जाती

है। कक्षा के बच्चों की ही तरह हमें भी यह मानने को कहा जाता है कि ये "प्राकृतिक आपदाएँ" थीं। लेकिन सामयिक घटनाओं को समझने का यह प्रकटतः तटस्थ तरीका क्या वास्तव में तटस्थ है? या बड़ी सफाई से इसमें भी कुछ खास किस्म के मूल्य घुसा दिए गए हैं या इसमें से निकाल लिए गए हैं?

उस कक्षा में हुई चर्चा का एक हिस्सा यह बताने के लिए काफी है कि यह प्रश्न क्यों महत्वपूर्ण है। छात्रों ने हाल ही में दक्षिण अमरीका में हुए व्यापक भू-स्खलन को समझा। प्रचण्ड वर्षा से पहाड़ी इलाके के लोगों के घर बर्बाद हो गए थे और बड़ी संख्या में लोग मारे गए थे या बुरी तरह घायल हो गए थे। लेकिन गहराई से देखने पर पता चलता है कि इस दुर्घटना में बहुत कम ही कुछ ऐसा था जिसे "प्राकृतिक" कहा जा सके। दक्षिण अमरीका में हर साल वर्षा होती है, और हर साल लोग मरते हैं। इस साल पहाड़ का एक तरफ का पूरा हिस्सा गिर गया और इस तरफ रहने वाले हज़ारों लोग मारे गए। लेकिन सुरक्षित और उपजाऊ घाटी में रहने वाला कोई नहीं मरा।

गरीब परिवार खतरनाक पहाड़ी ढलानों पर रहने को मजबूर हैं, क्योंकि यही ज़मीन बची है जिस पर घर बसाकर वे किसी तरह गुज़र-बसर कर सकते हैं। ज़मीन के स्वामित्व के बेहद गैर-बराबरीपूर्ण ऐतिहासिक स्वरूप और गरीबी की वजह से लोग पहाड़ी ढलानों पर रहते आए हैं। अतः समस्या हर साल होने वाली वर्षा नहीं — जोकि एक प्राकृतिक घटना है — वरन् गैर-बराबरीपूर्ण आर्थिक व्यवस्था है जो इस क्षेत्र में मुट्ठी भर लोगों को अधिकांश की ज़िन्दगी पर नियंत्रण हासिल करने की छूट देती है।

समस्या की यह बदली हुई और अधिक समग्र समझ पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र के लिए समृद्ध सम्भावनाओं से भरी हुई है। यह समझने में छात्रों का सहायक होना कि इस "सामयिक घटना" की व्याख्या भी अलग-अलग तरीकों से हो सकती है, और कि हर व्याख्या एक समूह विशेष के हितों को लाभ पहुँचाती है, अन्ततः उन्हें समाज के प्रति एक अधिक नैतिक और संवेदनशील प्रतिबद्धता का धनी बना सकता है (एपल 1990)।

एक शहरी विद्यालय में गणित की कक्षा में हुई घटना इस बात का एक और उदाहरण है कि लोकतांत्रिक कक्षा में प्रश्नों का कैसा उपयोग किया जा सकता है। इस कक्षा के छात्रों को एक सवाल नियम से दिया जाता था।

सवाल बस के मासिक पास से सम्बन्धित था। उनसे पूछा जाता था कि मासिक पास बनवाना सस्ता पड़ता है या हर बार आते-जाते बस में बैठने पर टिकट खरीदना सस्ता पड़ता है। इस खास सवाल के जवाब के अनुसार महीने के कार्यदिवसों की संख्या को देखते हुए हर बार टिकट खरीदना सस्ता पड़ता था। फिर इस सवाल में कुछ चीज़ों को मानकर चला जा रहा था। और ये चीज़ें बच्चों या उनके अभिभावकों के यथार्थ से मेल नहीं खाती थीं।

बच्चे अच्छी तरह जानते थे कि यह उत्तर गलत है। आखिर उनमें से अनेक के अभिभावक परिवार के भरण-पोषण के लिए दो-दो अल्पकालिक काम करते थे। यह काम फास्टफूड भोजनालयों में होता था और इस समुदाय को यही काम मिल सकता था। कारण यह था कि कर छूट और सस्ती मज़दूरी का लाभ उठाने के लिए यहाँ के कारखाने अन्यत्र ले जाए जा चुके थे। इस तरह इन बच्चों का अनुभव यह था कि हर आदमी को काम पर जाने और आने के लिए दिन में कम से कम चार बार बस पकड़नी पड़ती थी। और काम भी ऐसा था जिसमें न कोई भत्ता था, न कोई आगे की राह, और पगार भी कम थी।

यह पाठ्यक्रम स्पष्टतः थोड़ा पक्षपातपूर्ण और संवेदनशून्य था। लेकिन अध्यापक ने पाठ्यक्रम के इस पक्षपात का भी रचनात्मक ढंग से उपयोग कर लिया। उसने पूछा कि बताओ इस उदाहरण में क्या गलत है, और सोचो कि गणित तुम्हें अपनी और अपने अभिभावकों की रोज़मर्रा की ज़िन्दगी को समझने में कैसे मदद करता है। संक्षेप में, उसने छात्रों से ऐसे ही एक प्रश्न का उत्तर देने को कहा जैसे प्रश्न ऊपर हमने उठाए थे — दुनिया को हम किसके नज़रिए से देख रहे हैं? (लेडसन-बिलिंग्स 1995)। उक्त प्रश्न को गणित के साथ बुनकर उसने गणित को बच्चों के दैनिक जीवन से जोड़ दिया। इस तरह उसने अपने काम से उन पर ऐसा प्रभाव छोड़ा जैसा उपलब्धियों, परीक्षाओं आदि से जुड़ा और इन बच्चों के भविष्य को निर्धारित करने वाला, तथाकथित तटस्थ और मानक पाठ्यक्रम कभी न छोड़ पाता।

इन दो उदाहरणों से कम से कम यह तो स्पष्ट हो ही जाता है कि हमारे नियोजित पाठ्यक्रम में हमेशा — और कई बार छिपे तौर पर — एक परम्परा, एक धारणा अन्तर्निहित होती है। और वह धारणा यह है कि बच्चों के लिए क्या जानना ज़रूरी है, और इसका अपने पक्ष में कैसे इस्तेमाल किया जा सकता है। लेकिन "लोकतांत्रिक पाठ्यक्रम" ज्ञान की

इस "चुनिन्दा परम्परा" और प्रभुत्वशाली संस्कृति द्वारा समर्थित अर्थों को चुनौती देता है। वह इससे आगे निकलकर दृष्टियों और आवाज़ों के व्यापक फलक तक जाने की कोशिश करता है (विलियम्स, 1961; एपल 1990)। लोकतांत्रिक समाज में कोई भी एक व्यक्ति या हित समूह समस्त सम्भव ज्ञान और अर्थ के एकमात्र स्वामित्व का दावा नहीं कर सकता। इसी तरह एक लोकतांत्रिक पाठ्यक्रम में सिर्फ वही नहीं होता जिसे वयस्क महत्वपूर्ण समझते हैं। उसमें अपने और अपनी दुनिया के बारे में बच्चों की चिन्ताएँ और प्रश्न भी होते हैं। लोकतांत्रिक पाठ्यक्रम बच्चों को ज्ञान के निष्क्रिय उपभोक्ता की भूमिका छोड़ने और "अर्थप्रदाता" की सक्रिय भूमिका अपनाने के लिए आमंत्रित करता है। वह यह मानता है कि व्यक्ति बाह्य स्रोतों के अध्ययन से भी ज्ञान प्राप्त करता है और उन जटिल क्रियाओं में संलग्न होकर भी जो उसे अपना स्वयं का ज्ञान निर्मित करने को प्रेरित करती हैं।

जैसा कि हमने पहले देखा है, जीवन की लोकतांत्रिक शैली लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रचार-प्रसार के रचनात्मक प्रयासों को समाहित किए रहती है। लेकिन यह प्रक्रिया मात्र किसी विषय पर चर्चा या विचार-विमर्श नहीं है। यह हमारे सामूहिक जीवन में आने वाली समस्याओं, घटनाओं और मुद्दों पर बुद्धिमत्तापूर्वक और चिन्तनशील ढंग से सोचना है। लोकतांत्रिक पाठ्यक्रम में ऐसे मुद्दों पर विचार की, समस्याओं के हल सोचने की, और उन पर अमल करने की हमेशा सम्भावना रहती है। उदाहरण के लिए, इस तरह के पाठ्यक्रम में "संघर्ष", "हमारे समुदाय का भविष्य", "न्याय", "पर्यावरण की राजनीति" आदि मुद्दों पर विचार करने और काम करने का प्रावधान रहता है।

इसके अलावा एक बात यह भी है कि ज्ञान के विभिन्न अनुशासन मात्र "उच्च संस्कृति" की श्रेणियाँ नहीं हैं जिन्हें बच्चे सीख लें और सँजो लें। वे सूचना और अन्तर्दृष्टि के स्रोत हैं जिनका उपयोग जीवन की समस्याओं को समझने के लिए किया जा सकता है। ये वे लेन्स हैं जिनकी मदद से हम अपने चारों तरफ के मुद्दों को ज़्यादा साफ देख सकते हैं (बीन 1993)। उदाहरण के लिए, इस अन्तिम बिन्दु का उपयोग हम यह समझने के लिए भी कर सकते हैं कि वर्तमान पाठ्यक्रम के अंशों को बहस का मुद्दा बनाकर ही उसे संशोधित-संवर्धित किया जा सकता है। ऐसा करने से ही हम जान पाएँगे कि मुआमला सिर्फ इतना ही नहीं है कि वर्तमान पाठ्यक्रम के अंशों को कैसे जोड़ा जाए, बल्कि यह भी है कि ये

अन्तर्सम्बन्ध किस बारे में हैं। जैसा कि ड्यूई (1938, पृ. 49) ने कहा है:

> इतिहास-भूगोल के बारे में निर्धारित जानकारी प्राप्त कर लेने, लिखना-पढ़ना सीख लेने का भी क्या फायदा यदि इस प्रक्रिया में व्यक्ति अपनी आत्मा ही खो दे; यदि वह सार्थक चीज़ों की कद्र करना ही भूल जाए, उन मूल्यों को ही भूल जाए जिनसे ये चीज़ें जुड़ी हुई हैं; यदि वह अपने संचित ज्ञान का उपयोग करने की इच्छा ही खो बैठे; और सबसे बढ़कर यदि वह भविष्य में अपने अनुभवों का अर्थ निकालने की क्षमता से ही वंचित हो जाए।

समान अवसर के तमाम लोकतांत्रिक दावों के बावजूद हमारे विद्यालयों में वंचित वर्गों के बच्चों के रास्ते में अभी कई रुकावटें हैं — मसलन मानक परीक्षा पद्धति का ज़रूरत से ज़्यादा उपयोग। अनेक प्रगतिशील पाठ्यक्रमों की एक ऐतिहासिक समस्या (और वंचित समुदायों में उसको समर्थन न मिलने का एक कारण) यह है कि वे उस आधिकारिक ज्ञान और दक्षता पर से ज़ोर हटाने के पक्ष में हैं जिसकी बच्चों को ज़रूरत है ताकि वे समाजार्थिक प्रवेशद्वारों पर खड़े द्वारपालों को सन्तुष्ट कर सकें और अपने लिए रास्ता बना सकें (डेलपिट 1986, 1988)।

हमने ऊपर देखा कि लोकतांत्रिक विद्यालय अन्य प्रगतिशील विद्यालयों से अंशतः अलग हैं, क्योंकि वे विद्यालयों में और समाज में लोकतंत्र-विरोधी परिस्थितियों को समाप्त करना चाहते हैं। लेकिन फिर भी जो शिक्षाकर्मी लोकतांत्रिक विद्यालयों में काम करते हैं वे अच्छी तरह समझते हैं कि जब तक ये परिस्थितियाँ बदल नहीं जातीं, इन्हीं के बीच से अपना रास्ता बनाना है। इसी कारण लोकतांत्रिक पाठ्यक्रम कई तरीकों से छात्रों को सूचना-सम्पन्न और दक्ष बनाने की कोशिश करते हैं। इनमें वे तरीके भी हैं जिनके द्वारा समाजार्थिक प्रवेशद्वारों के द्वारपालों को सन्तुष्ट किया जा सके। संक्षेप में, लोकतांत्रिक शिक्षाकर्मी बच्चों के लिए एक अधिक सार्थक शिक्षा के आविष्कार और शक्तिशाली शिक्षा शक्तियों — जो और कैसी भी हों लोकतांत्रिक कतई नहीं — द्वारा वांछित चालू ज्ञान और दक्षता में बच्चों को निपुण बनाने के सतत् द्वन्द्व और तनाव में रहते हैं। इस तरह, हम प्रभुत्वशाली ज्ञान की उपेक्षा नहीं कर सकते। इसे अपनाने से कुछ दरवाज़े तो ज़रूर खुलते हैं। लेकिन अपनी इस व्याख्या को लेकर हमें सावधान रहना चाहिए, क्योंकि हम "ड्रिल एण्ड स्किल" के रूढ़ कार्यक्रमों को चालू रखने का समर्थन नहीं कर सकते जो अक्सर वंचित बच्चों के

विद्यालय का एक हिस्सा होते हैं। इन बच्चों को भी अधिकार है कि वे हमारे सर्वाधिक प्रगतिशील विचारों से परिचय प्राप्त करें। हमारा काम है कि हम प्रभुत्वशाली ज्ञान को पुनर्निर्मित करें और उसे समाज के सर्वाधिक वंचित वर्गों की सहायता के लिए इस्तेमाल करें, न कि उनके रास्ते में अड़ंगे लगाने के लिए।

लोकतांत्रिक पाठ्यक्रम के निर्माण का काम निश्चित रूप से विरोध और विवाद का काम है। यहाँ जो कुछ भी कहा गया है व्यवहारतः वह योजनाबद्ध पाठ्यक्रम की रूढ़िगत और प्रभुत्वशाली आदर्श परिकल्पना के विरुद्ध है। विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों और आवाज़ों को सुनने की गुंजाइश को अक्सर प्रभुत्वशाली संस्कृति के लिए खतरा समझा जाता है। खास तौर पर इसलिए कि ये आवाज़ें और दृष्टिकोण घटनाओं और मुद्दों की ऐसी व्याख्या पेश करते हैं जो पारम्परिक रूप से विद्यालयों में पढ़ाई जाने वाली व्याख्याओं से सर्वथा भिन्न होती है। इससे भी बुरी बात यह है कि बच्चों को घटनाओं और मुद्दों की आलोचनात्मक व्याख्या करने को प्रोत्साहित करना इस बात की आशंका पैदा करता है कि वे प्रभुत्वशाली व्याख्याओं (और शिक्षाओं) पर प्रश्न चिन्ह लगाने लगेंगे। यही बात प्रमुख सामाजिक समस्याओं और मुद्दों के गिर्द पाठ्यक्रम बनाने को लेकर है। लेकिन इसका विरोध ज्ञान और कौशल के उस वंध्यीकृत संस्करण से भी है जो पाठ्यक्रम के प्रति विषय-विभक्त, अनुशासन-केन्द्रित, "उच्च संस्कृति" रुझान का एक अंग है। और अन्त में, यदि बच्चे पाठ्यक्रम में अपने खुद के प्रश्न और चिन्ताएँ जोड़ने लगें तो इस बात का खतरा है कि समाज के नैतिक और राजनीतिक अन्तर्विरोध प्रकट हो जाएँगे और उन मूल्यों से ध्यान हट जाएगा जिन्हें समाज बनाए रखना चाहता है।

लोकतांत्रिक शिक्षण से प्रतिबद्ध लोगों ने प्रतिरोध के ऐसे स्रोतों का निरन्तर सामना किया है। वस्तुतः यह प्रतिरोध हमेशा खुले और साफ शब्दों में अभिव्यक्त नहीं किया जाता है। मसलन कुछ लोग कहते हैं कि बच्चों को सामाजिक मुद्दों से नहीं उलझना चाहिए क्योंकि वे उनकी पेचीदगी को नहीं समझ सकते, या वे उनसे अवसादग्रस्त हो जाएँगे। बेशक ऐसे तर्क इस तथ्य को उपेक्षित कर देते हैं कि बच्चे भी वास्तविक व्यक्ति हैं जो एक वास्तविक समाज में रहते हैं। उनमें से अनेक अपने अनुभवों से नस्लवाद, गरीबी, लैंगिक पक्षपात, बेघर होने आदि के बारे में पहले ही काफी कुछ जानते हैं। ज़ाहिर है ऐसे तर्क बच्चों को उनकी गरिमा का हनन करने वाले और उनके विरुद्ध कार्यरत राजनीतिक,

सामाजिक और नैतिक अन्तर्विरोधों को समझने से रोकना चाहते हैं।

ध्यान देने की बात यह है कि लोकतांत्रिक विद्यालयों की अवधारणा केवल छात्रों के अनुभव के लिए लक्षित नहीं है। विद्यालयों में पेशेवर शिक्षाकर्मियों सहित वयस्क भी लोकतांत्रिक जीवन पद्धति का अनुभव कर सकते हैं। नीति निर्माण तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदारी का एक उदाहरण हम पहले दे चुके हैं। लेकिन जिस तरह बच्चों को स्वयं अपनी शिक्षा की व्यवस्थाओं को बनाने में मदद करने का अधिकार है, उसी तरह अध्यापकों व अन्य शिक्षाकर्मियों को भी यह अधिकार है कि वे कक्षाओं, विद्यालयों और अपने व्यावसायिक जीवन में आने वाली समस्याओं और मुद्दों सम्बन्धी अपनी धारणाओं पर आधारित अपने स्वयं के कार्यक्रम बनाएँ।

इससे भी आगे, अध्यापकों को अधिकार है कि वे पाठ्यक्रम निर्माण में — खासकर उन बच्चों के लिए जिन्हें वे पढ़ाते हैं — अपनी बात रख सकें। सरसरी नज़र से देखने वाला कोई भी शख्स समझ सकता है कि अध्यापकों के इस अधिकार का पिछले कुछ दशकों में गम्भीर क्षरण हुआ है। क्योंकि पाठ्यक्रम निर्धारण, बल्कि पाठ प्रक्रिया की आयोजना का भी राज्य और ज़िला शिक्षा कार्यालयों में केन्द्रीकरण हो चुका है। इसके परिणामस्वरूप घटित अध्यापकों का "अदक्षीकरण", दूसरों के विचारों और योजनाओं के कार्यान्वयनकर्ता के तौर पर उनके काम की नई और विरूपित परिभाषा हमारे विद्यालयों से लोकतंत्र के विलयन का सबसे स्पष्ट और अशोभनीय उदाहरण है (एपल 1986)। इसके अलावा "कार्यस्थल पर प्रबन्धन" की बहुत बात की जाती है। ऐसा लगता है मानो इससे केन्द्रीकरण की प्रक्रिया उलट जाएगी। लेकिन वास्तव में होता सिर्फ यह है कि सीमित संसाधनों के लिए संघर्ष स्थानीय संघर्ष बनकर रह जाते हैं, और दूरस्थ स्थानों पर लिए गए निर्णयों, नीतियों और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए शिक्षकों को ज़िम्मेदार ठहराया जाता है।

अन्त में, अपने स्वयं के व्यावसायिक कार्य पर अध्यापकों का नियंत्रण मात्र संसाधनों और पाठ्यक्रम सम्बन्धी बाध्यता तक सीमित नहीं है, बल्कि वह शिक्षा पद्धति से भी जुड़ा हुआ है। हमने पहले बताया कि कैसे विद्यालय के शिक्षण और संरचना सम्बन्धी पहलू लोकतांत्रिक मूल्यों से निर्धारित हो सकते हैं, हालाँकि हम यह भी मानते हैं कि ऐसा शोध और तकनीकी ज्ञान के मार्गदर्शन के अनुसार भी हो सकता है। लोकतांत्रिक विद्यालयों में ऐसा ज्ञान विद्यालय से अवस्थित अकादमिक शोधनुमा "उच्चतम" स्रोतों से नहीं आता है। इससे अधिक रोचक वह ज्ञान होता

है जिसे अध्यापक अपने उपयोग के लिए स्थानीय संवाद और कार्य शोध से स्वयं पैदा करते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि व्यावसायिक ज्ञान के अन्य स्रोत अवैध या अनुपयोगी हैं। इसका अर्थ यह है कि वे महत्वपूर्ण विचारों के एकमात्र स्रोत नहीं हैं।

जब हम अपने कार्य पर सार्थक नियंत्रण के अध्यापकों के अधिकार को छात्रों तक लोकतांत्रिक जीवन पद्धति पहुँचाने के अध्यापकों और वयस्कों के कर्त्तव्य से जोड़ देते हैं, तभी इस बात की सच्ची सम्भावना पैदा होती है कि लोकतांत्रिक मूल्य विद्यालयों में जीवन के संचालन सूत्र बन पाएँ। लेकिन इस सम्भावना को वास्तविकता में बदलने के लिए हमें फिर कुछ कठिन प्रश्नों का सामना करना पड़ेगा। उदाहरण के लिए, अभिभावकों, समुदाय और राज्य को निश्चित रूप से यह कहने का अधिकार है कि उनकी दृष्टि में शिक्षा का क्या लक्ष्य है। लेकिन क्या उन्हें पाठ्यक्रम निर्धारण और संसाधनों जैसी चीज़ों के बारे में फैसले लेने का भी उतना ही हक होना चाहिए जितना पेशेवर शिक्षाकर्मियों को? अध्यापकों पर लोकतंत्र का जो भारी बोझ हमने डाला है क्या वह उन्हें सामुदायिक नियंत्रण से ऊपर कुछ व्यावसायिक स्वायत्तता देता है? इस पुस्तक में सम्मिलित कहानियाँ हमें इन सवालों के बारे में क्या बताती हैं?

एक समृद्ध विरासत पर निर्माण

अब तक हमने जो चित्र खींचा है वह सैद्धान्तिक रूप से काफी शानदार लगता है, लेकिन वर्तमान यथार्थ को देखते हुए क्या इसे चरितार्थ किया जा सकता है? यह सच है कि लोकतांत्रिक मूल्यों और स्कूली क्रियाकलापों के बीच आज जितनी बड़ी खाई है, उतनी पहले कभी नहीं थी। लेकिन जैसा कि इस पुस्तक की कहानियाँ उजागर करती हैं, वैकल्पिक विद्यालयों के निर्माण का संघर्ष कई स्थानों पर जारी है। यहाँ वर्णित प्रयास हमारे समाज की असंगतियाँ नहीं हैं; वे एक शताब्दी से चले आ रहे लम्बे काम का समकालीन पड़ाव हैं। इस तरह ये उस प्रश्न के उत्तर में प्रसूत सम्भावनाओं की एक झलक भी हैं जो आज भी लोग स्वयं से पूछ रहे हैं: विद्यालय किस तरह लोकतंत्र के अर्थ को अभिव्यक्त और विस्तारित कर सकते हैं?

मसलन हम विद्यालय के काम को समुदाय के जीवन से जोड़ने के गम्भीर प्रयासों के बारे में पढ़ेंगे। यहाँ प्रस्तुत परियोजनाओं के पीछे वे आन्दोलन हैं जो पचास से भी ज़्यादा वर्ष पहले बाल्टीमोर (मेरीलैण्ड), पुलास्की (विस्कॉन्सिन) और पासाडीना (कैलीफोर्निया) जैसे स्थानों में घटित हुए

— उन स्थानों पर जहाँ छात्रों ने समुदाय की गम्भीर समस्याओं को सुलझाने की परियोजनाएँ हाथ में लीं (उदाहरण के लिए देखें एण्डरसन व यंग 1951)। पुराने समय की वे परियोजनाएँ आज के प्रयासों की तरह ही महत्वपूर्ण होने के बावजूद छोटे अर्से की या तात्कालिक गतिविधियाँ नहीं थीं। वे समुदायों के साथ ठोस सम्बन्ध स्थापित करने के सतत् प्रयास थे।

यहाँ हम बड़े स्तर की सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के लिए पाठ्यक्रम में गुंजाइश बनाने के प्रयासों के बारे में भी पढ़ेंगे। यहाँ हम प्रसिद्ध आठ-वर्षीय अध्ययन से सम्बद्ध 1930 के दशक के प्रगतिशील विद्यालयों (आइकिन 1962) तथा 1940 और 1950 के दशकों के "कोड" आन्दोलन से निकली अनेक कक्षाओं की कहानियों (उदाहरण के लिए देखें फॉन्स और बॉसिंग 1951) का पुनरावलोकन भी कर सकते हैं।[2]

हम सहकारी शिक्षण पर भी नज़र डालेंगे जिसे अनेक आरम्भिक "कोड" विद्यालयों और रग तथा शूमेकर (1928) द्वारा वर्णित बाल-केन्द्रित कार्यक्रमों में खूब पसन्द किया जाता था। इसका उल्लेख लाइफ सिक्ल्स इन स्कूल एण्ड सोसायटी नामक पुस्तक के लेखकों ने भी किया था (रुबिन 1969)। हमारी कहानियाँ पिछले प्रयासों की ही तरह सहकारी शिक्षण को बुनियादी तौर पर लोकतांत्रिक जीवन पद्धति का एक अहम् पहलू समझती हैं, अकादमिक उपलब्धियाँ हासिल करने की रणनीति नहीं — जैसी कि आजकल की लोकप्रिय धारणा है।

इनमें से हर कहानी किसी न किसी तरह पाठ्यक्रम और दीगर योजनाओं में बच्चों की भागीदारी की बात पर ज़ोर देती है। लम्बे समय से चल रहे काम का अनुसरण करते हुए लेखक इसे कक्षा में अलगाव और विद्रोह को कम करने की तरकीब भर नहीं मानते। वे इसे बच्चों में व्यक्तिगत व सामूहिक क्षमता को बढ़ाने के व्यापक उत्तरदायित्व का अंग मानते हैं (उदाहरण के लिए देखें हॉपकिन्स 1941, गाइल्स, मेक्कुचेन और ज़ीकील 1942, जाफ 1959, वास्किन व पारिश 1967)।

ये कहानियाँ सांस्कृतिक विविधता को बचाए रखने की और सांस्कृतिक अन्तरों के गिर्द मौजूद गैर-बराबरीपूर्ण परिस्थितियों के उपशमन के प्रयासों के बारे में भी बताती हैं। इस सन्दर्भ में हमें भूलना नहीं चाहिए कि अफ्रीकी-अमरीकियों ने 1930 और 1940 के दशकों में दक्षिण के "सेगरीगेटिड" (segregated) विद्यालयों के लिए अपने खुद के इतिहास पर आधारित पाठ्यक्रम तैयार कर लिया था। इस काम का बहुत बड़ा श्रेय डब्ल्यू.

ई.बी.ड्यू बोइस को जाता है जिन्होंने अश्वेतों की शिक्षा के स्तर और अपेक्षाओं के लिए अथक परिश्रम किया। उदाहरण के लिए, उन्होंने लक्षित किया कि कार्यकौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों में नस्ल के आधार पर श्रम के भेदभाव की आशंकाएँ साफ मौजूद हैं:

> मनुष्य को पढ़ाना सिखाया जा रहा हो या हल चलाना, बुनना सिखाया जा रहा हो या लिखना, शिक्षा के आदर्शों को घिनौने उपयोगितावाद की हद तक नहीं गिरने देना चाहिए। शिक्षा को अपने सामने बड़े आदर्श रखना चाहिए और कभी नहीं भूलना चाहिए कि उसका वास्ता जीते-जागते मनुष्यों से है, डॉलरों से नहीं।
>
> (ड्यू बोइस 1902:82)

रिंज विद्यालय में सम्पन्न व्यावसायिक शिक्षा की कक्षा में हम इसी कथन की अनुगूँज सुनेंगे।

लोकतांत्रिक विद्यालयों की स्थापना एक बेहद कठिन कार्य है, खासकर जब चारों तरफ इसके बिलकुल विपरीत दिशा में लहर चल रही हो। लेकिन इस पुस्तक के लेखक उक्त तथ्य को पहचानने वाले पहले व्यक्ति नहीं हैं। रग (1939) तथा अन्य लोगों ने औद्योगिक क्रान्ति के दौरान चले सामाजिक कार्यकुशलता आन्दोलन में अनेक बार इस विषय पर अपने विचार व्यक्त किए थे। इसके अलावा 1950 के दशक में जब संयुक्त राज्य अमरीका में कुख्यात "मेकार्थीवाद" चल रहा था तो अनेक लेखकों ने अपनी पुस्तकों और लेखों में अतिरूढ़िवादी हमलों की दहला देने वाली घटनाओं का वर्णन किया था जिनकी गूँज हमारे अपने समय में भी सुनी जा सकती है (उदाहरण के लिए देखें कनिंघम 1952)।

इस संक्षिप्त ऐतिहासिक रेखाचित्र में मुख्य तौर पर विद्यालयों के भीतर लोकतांत्रिक शिक्षण की विरासत पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। लेकिन यह न समझना भूल होगी कि ऐसी कोशिशें विद्यालय से बाहर किए जा रहे समान्तर प्रयासों के सहयोग से ही सम्भव हो पाती थीं, और अब भी ऐसा ही होता है। उदाहरण के लिए, लोकतांत्रिक विद्यालयों के लिए संवेग को जॉन ड्यूई के बहुल लेखन से अपार प्रेरणा मिली है। उनकी महान पुस्तक डेमोक्रेसी एण्ड एजुकेशन (1916) ही नहीं, लोकतंत्र और वस्तुतः सामाजिक जीवन के सभी पहलुओं में लोकतंत्र पर लिखी गई उनकी ढेरों पुस्तकें और निबन्ध प्रेरणा के स्रोत रहे हैं। हम एलिज़ाबेथ हेरिसन और एला फ्लैग यंग जैसे लोगों के भी ऋणी हैं जिन्होंने बच्चों और अध्यापकों

के हितों के लिए कड़ा संघर्ष किया। इसी तरह हम जॉर्ज काउण्ट्स और हेरॉल्ड रग के भी ऋणी हैं जिन्होंने शिक्षा के सवाल को व्यापक लोकतांत्रिक सामाजिक पुनर्निर्माण का एक हिस्सा बनाने की पुरज़ोर वकालत की।

इसी तरह बड़े नागरिक अधिकार आन्दोलनों के राजनीतिक कार्यकर्ताओं ने भी शिक्षण के विभिन्न पहलुओं के लोकतंत्रीकरण के लिए कुछ कम काम नहीं किया। उनके प्रयास न होते तो विद्यालय आज भी विधिसम्मत नस्लवादी भेदभाव और अपंगों के लिए प्रवेश निषेध से ग्रस्त होते। हम अमरीकी लायब्रेरी परिसंघ जैसे समूहों के प्रयासों की भी उपेक्षा नहीं कर सकते जिन्होंने सेंसरशिप की सीमाओं से बच्चों को बचाया। जहाँ अदालतें आज भी तय नहीं कर पाई हैं कि विद्यालयों को "सम्पूर्ण लोकतंत्र" का खुला मैदान होना चाहिए या लोकतांत्रिक अधिकारों का "सीमित प्रांगण", यह आसानी से सोचा जा सकता है कि लोकतांत्रिक कार्यकर्ताओं की अनवरत अपीलें न होतीं तो शायद यह सवाल अदालतों तक पहुँचता ही नहीं।

इसलिए स्पष्ट है कि विद्यालयों तक लोकतंत्र को ले जाने और वहाँ उसे सुरक्षित रखने का विचार मात्र हमारे समय की उपज नहीं है। यहाँ हमने इसकी जिस सामान्य अवधारणा और जिन विशिष्ट लक्षणों की चर्चा की है उनकी जड़ें एक शताब्दी के प्रयासों तक फैली हुई हैं। लेकिन लोकतांत्रिक विद्यालयों के इतिहासकारों को दो बातें हमेशा दिमाग में रखना चाहिए। एक तो यह कि जिस तरह बाह्य समाज में लोकतंत्र एक अनेकार्थी शब्द है, उसी तरह विद्यालयों के सन्दर्भ में भी इसका कोई एक सुनिश्चित अर्थ नहीं है। दूसरी बात यह कि लोकतंत्र एक परिवर्तनशील अवधारणा है। समय के बदलाव के साथ इसकी निरन्तर समीक्षा आवश्यक है। इन कारणों से हमें निराशा भी हो सकती है जब हम देखते हैं कि लोकतांत्रिक विद्यालयों को स्थापित करने के कोई प्रयास वहाँ तक क्यों नहीं गए जहाँ तक हम चाहते थे? या यह सफलता और अन्तर्विरोधों का सम्मिश्रण क्यों मालूम होता है? लेकिन जो महत्वपूर्ण बात है वह यह है कि हमें अपनी विरासत में भी लोकतांत्रिक अभिरुचि के प्रमाण मिलते हैं, जिनके आधार पर हम अपने प्रयासों का स्वरूप निर्धारित कर सकते हैं।

लोकतांत्रिक विद्यालयों की ओर

इस पुस्तक के लिए हमने चार ऐसे उदाहरण चुने हैं जहाँ विद्यालयों में लोकतंत्र को जीवन्त करने का प्रयास किया गया: न्यू यॉर्क स्थित सेन्ट्रल

पार्क ईस्ट सेकण्डरी स्कूल, बोस्टन क्षेत्र में रिंज स्कूल ऑफ टेक्नीकल आर्ट्स, मिल्वॉकी में ल इस्कूला फ्रेटनी और मेडीसन, विस्कॉन्सिन में मार्क्वेट मिडिल स्कूल (जिसका नाम अब जॉर्जिया ओ'कीफ मिडिल स्कूल हो गया है) में चलने वाला एक खास कार्यक्रम। इन सभी में सीखने के वे रचनात्मक अनुभव दिखाई देते हैं जो कक्षाओं को लोकतांत्रिक व्यवहार का केन्द्र बनाने और विद्यालय तथा वृहद समाज के बीच एक पारगम्य सीमा रेखा बनाने के लोगों के संकल्प में से पैदा होते हैं।

पहले ही हमने तय कर लिया था कि ये कहानियाँ सम्बन्धित लोगों की ज़ुबानी ही कही जाएँगी। यह महत्वपूर्ण है। हताशा और कुण्ठा की भावना और कभी-कभी विद्वेष भी इस राह में चलने वाले शिक्षाकर्मी और समुदाय के सदस्य महसूस करते हैं। अक्सर ऐसा इसलिए होता है क्योंकि हम एक-दूसरे की आपबीती नहीं सुनते। कठिनाई और देरी से प्राप्त सफलता की तुलना में असफलता ज़्यादा बड़ा समाचार बन जाती है। यहाँ प्रस्तुत कहानियाँ रूमानी नहीं हैं। लोकतांत्रिक आचरण के रास्ते में हम जिन कठिनाइयों और सम्भावनाओं से दो-चार होते हैं, ये कहानियाँ उसका ईमानदारी से बयान करती हैं।

हमें यह भी याद रखना चाहिए कि यह "हम" कौन हैं? लोकतांत्रिक विद्यालय "हम" की व्यापक परिभाषा पर ही आधारित होने चाहिए, एक ऐसे समुदाय के निर्माण के लिए प्रतिबद्धता के आधार पर जो विद्यालय की भी है और उस समाज की भी जिसमें विद्यालय स्थित है। कुल मिलाकर इस पुस्तक में संकलित कहानियाँ लोकतांत्रिक विद्यालय सुधारों की हकीकत के बारे में कुछ बहुत महत्वपूर्ण बातें बताती हैं। हर मामले में सफलता की ज़रूरी शर्त थी विद्यालय के भीतर, विद्यालयों के बीच और विद्यालय तथा बाहरी विश्व के बीच सहकार की भावना का सचेष्ट निर्माण। एक भी मामले में कार्य की प्रेरणा "ऊपर" से प्राप्त नहीं हुई, वरन् सबसे निचले पायदान से – शिक्षकों के समूहों, समुदायों, सामाजिक कार्यकर्ताओं आदि ने परिवर्तन का चक्का चालू किया। अन्त में, कोई भी सुधार किसी तकनीकी, किसी भी कीमत पर सफलता की भावना से संचालित नहीं था, जैसे कि कई देशों में आम तौर पर नारेबाज़ी वाले अभियान चला करते हैं। उसके स्थान पर यहाँ हरेक के पीछे सुपरिभाषित मूल्य थे जिन्हें कार्यरूप में परिणत करना था। उन व्यक्तियों और समूहों का सशक्तीकरण करना था जिन्हें अब तक खामोश कर दिया जाता रहा।

विद्यालयों को वास्तविक दुनिया और वास्तविक सामाजिक समस्याओं से जोड़ना था ताकि वे लोगों के दैनिक जीवन के अनुभव से अविच्छिन्न रहें।

एक बात हम यहाँ ईमानदारी से कहना चाहेंगे। इस पुस्तक में शामिल कोई भी उदाहरण विद्यालयों के समक्ष आने वाली सभी समस्याओं को सुलझाने की गारंटी नहीं है। सच तो यह है कि समाज के अनेक लोगों को विचलित करने वाले आर्थिक और सामाजिक संकट के इस दौर में ऐसे विद्यालयों का काम न सिर्फ शैक्षिक बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी एकदम तय होता है (उदाहरण के लिए देखें कोज़ोल 1991)। सार्वजनिक विद्यालयों में नई, अधिक लोकतंत्र की सम्भावनाएँ निर्मित करने की कोशिश हमें फिर से यह सिखा सकती है कि वास्तव में क्या सम्भव है। इस बारे में भ्रम की गुंजाइश नहीं। बहुत कुछ दाँव पर है। जैसा कि आज से चालीस साल पहले जेम्स मुरसैल (1955, पृ. 3) ने कहा थाः

> यदि किसी लोकतांत्रिक समाज में विद्यालय लोकतंत्र के समर्थन और विस्तार के लिए अस्तित्ववान नहीं हैं तो या तो वे सामाजिक दृष्टि से बेकार हैं या सामाजिक दृष्टि से खतरनाक हैं। ज़्यादा से ज़्यादा वे ऐसे लोगों को पढ़ाएँगें जो स्कूल के बाद अपने-अपने रास्ते जाएँगे, रोज़ी-रोटी कमाएँगे, और उन्हें इस बात से कोई मतलब नहीं होगा कि सामान्यतया एक नागरिक के रूप में और विशेषकर लोकतांत्रिक जीवन पद्धति के लिए उनका क्या कर्त्तव्य बनता है। ... बल्कि ज़्यादा सम्भावना तो इसी बात की है कि वे पढ़ा-लिखाकर लोगों को लोकतंत्र का दुश्मन बनाएँगे — ऐसा व्यक्ति जो जनोत्तेजकों के बहकावे में आ जाएगा और लोकतांत्रिक जीवन के विरोधी नेताओं और आन्दोलनों के पक्ष में जा खड़ा होगा। ऐसे विद्यालय या तो व्यर्थ हैं या विनाशकारी। उनके बने रहने का कोई वैध कारण नहीं है।

टिप्पणियाँ

1 रोज़ा पार्क्स एक अफ्रीकी-अमरीकी महिला थीं जिन्हें1955 में मोण्टगोमरी, अलबामा में गिरफ्तार कर लिया गया था। कारण? नगर विभाजक कानून के अनुसार नगर पालिका की बसों में श्वेत लोगों के बैठने के लिए अलग हिस्सा सुरक्षित होता था। इसके विरोध में एक दिन वे उसी हिस्से में बैठ गईं और उन्होंने वहाँ से उठने से इन्कार कर दिया। इस घटना

से मोण्टगोमरी बस बहिष्कार आन्दोलन भड़क उठा। इसे अमरीका के नागरिक अधिकार आन्दोलन का एक महत्वपूर्ण मोड़ माना गया और रोज़ा पार्क्स इस संघर्ष की राष्ट्रीय प्रतीक बन गई। इस घटना का एक परिणाम यह भी हुआ कि विद्यालयों में अश्वेत इतिहास माह मनाया जाने लगा। यह एक वार्षिक कार्यक्रम है जिसके अन्तर्गत अफ्रीकी-अमरीकी जीवन और उसकी उपलब्धियों पर प्रकाश डाला जाता है। यूँ तो यह एक सफल कदम साबित हुआ, परन्तु कुछ समीक्षकों का विचार बना कि इस कार्यक्रम ने अफ्रीकी-अमरीकी इतिहास और संस्कृति को सारे देश के विद्यालयों में मुख्य पाठ्यक्रम का एक हिस्सा बनाए जाने के प्रयासों के रास्ते में रुकावट डाली है।

2 आठ-वर्षीय अध्ययन प्रगतिशील शिक्षा परिसंघ द्वारा प्रायोजित एक शोध परियोजना थी। इसके अन्तर्गत इस बात का अध्ययन किया गया कि30 उच्चतर विद्यालयों के संकाय कैसे पाठ्यक्रम को समेकित कर सकते हैं यदि वे छात्रों के महाविद्यालय में प्रवेश की आवश्यकताओं जैसी बाधाओं से मुक्त हो सकें। उन्होंने पता लगाया कि पारम्परिक सेकण्डरी स्कूलों से आने वाले छात्रों की तुलना में उनके विद्यार्थियों का प्रदर्शन महाविद्यालय में कैसा रहा। (अध्ययन की अवधि तक उनका महाविद्यालय में प्रवेश सुरक्षित था।) अन्त में पता चला कि पारम्परिक पाठ्यक्रम को नाटकीय ढंग से अलविदा कर देने वाले विद्यालयों के छात्र जब महाविद्यालय में पहुँचे तो शैक्षणिक तथा अन्य क्षेत्रों में भी उनका प्रदर्शन दूसरे छात्रों के मुकाबले बेहतर रहा। ध्यान देने की बात यह है कि जिन स्कूलों के छात्रों का प्रदर्शन महाविद्यालय में सबसे अच्छा रहा उन्होंने किशारों की आवश्यकताओं और सामाजिक मुद्दों के आधार पर निर्मित "कोर" के गिर्द अपना कार्यक्रम संयोजित किया था। यह कुछ ब्रिटिश विद्यालयों में जारी "समेकित" पाठ्यक्रम की तरह ही है। उदाहरण के लिए देखें डेनिस ग्लीसन व जिओफ व्हिटी(1976) डेवलपमेंट इन सोशल स्टडीज़ टीचिंग लन्दनः ओपन बुक्स।

सन्दर्भ

आइकिन, विल्फोर्ड (1962) द स्टोरी ऑफ द एट-इयर स्टडी। न्यू यॉर्कः हार्पर एण्ड ब्रदर्स.

एण्डरसन, वॉल्टर ए. और यंग, विलियम ई. (सम्पादक)(1951) एक्शन फॉर करीक्यूलम इम्प्रूवमेन्ट। वॉशिंगटन, डीसीः एएससीडी.

एपल, माइकल (1986) टीचर्स एण्ड टेक्सट्सः ए पॉलिटिकल इकोनॉमी ऑफ क्लास एण्ड जेंडर रिलेशन्स इन स्कूल्स। न्यू यॉर्क और लन्दनः रूटलेज और केगन पॉल.

एपल, माइकल (1988) रीडिफाइनिंग इक्वैलिटी।टीचर्स कॉलेज रिकॉर्ड, 90: 167-84.

एपल, माइकल (1990) आइडियॉलॉजी एण्ड करीक्यूलम, दूसरा संस्करण। न्यू यॉर्कः रूटलेज.

एपल, माइकल (1993) ऑफिशियल नॉलेजः डेमोक्रेटिक एजुकेशन इन ए कंज़रवेटिव एज। न्यू यॉर्कः रूटलेज.

बास्टियन, एन, फ्रुकटर, नॉर्म, गिटेल, मैरिलिन, ग्रीयर, कॉलिन और हस्किन्स, केनेथ (1986) चूज़िंग इक्वैलिटीः द केस फॉर डेमोक्रेटिक स्कूलिंग। फिलाडेल्फियाः टेम्पल यूनिवर्सिटी प्रेस.

बीन, जेम्स (1990) अफेक्ट इन द करीक्यूलम। न्यू यॉर्कः टीचर्स कॉलेज प्रेस.

बीन, जेम्स (1993) ए मिडिल स्कूल करीक्यूलमः फ्रॉम रेटॉरिक टू रियैलिटी, दूसरा संस्करण। कोलम्बस, ओएचः नेशनल मिडिल स्कूल एसोसिएशन।

कनिंघम, रूथ (सम्पादक) (1952) ग्रोइंग अप इन एन एंक्शियस एज। वॉशिंगटन, डीसीः एएससीडी.

डेलफेटोर, जोन (1993) वाई जॉनी कान्ट रीड। न्यू हेवनः येल यूनिवर्सिटी प्रेस.

डेलपिट, लिज़ा (1986) स्किल्स एण्ड अदर डिलेमास ऑफ ए प्रोग्रेसिव ब्लैक एजुकेटर। हार्वर्ड एजुकेशनल रिव्यू 56: 379-85.

डेलपिट, लिज़ा (1988) द साइलेंस्ड डायलॉगः पावर एण्ड पेडागॉजी इन एजुकेटिंग अदर पीपल्स चिल्ड्रन। हार्वर्ड एजुकेशनल रिव्यू 58: 280-98.

ड्यूई, जॉन (1916) डेमोक्रेसी एण्ड एजुकेशन। न्यू यॉर्कः मैक्मिलन.

ड्यूई, जॉन (1938) एक्सपीरियन्स एण्ड एजुकेशन। ब्लूमिंगटन, आइएनः कप्पा डेल्टा पाई.

ड्यू बोइस, डब्ल्यू. ई. बी. (1902) द नीग्रो आर्टिसन। अटलांटाः अटलांटा यूनिवर्सिटी प्रेस.

फॉन्स, रोलैण्ड और बॉसिंग, नेल्सन (1951) डेवलपिंग द कोर करीक्यूलम। न्यू यॉर्क : प्रेंटिस-हॉल.

गाइल्स, एच. एच., मेक्कुचेन., एस. एफ. और ज़ीकील, ए. एन. (1942) एक्सप्लोरिंग द करीक्यूलम। न्यू यॉर्क और लन्दनः हार्पर एण्ड ब्रदर्स.

ग्रेबनर, विलियम (1988) द इंजीनियरिंग ऑफ कन्सेंटः डेमोक्रेसी ऐज़ सोशल एथॉरिटी इन द ट्वेंटिएथ सेंचुरी। मेडिसनः यूनिवर्सिटी ऑफ विसकॉन्सिन प्रेस.

ग्रीन, मेक्सिन (1985) द रोल ऑफ एजुकेशन इन डेमोक्रेसी। एजुकेशनल होराइज़न्स, 63 (विशेषांक): 3-9.

गटमैन, एमी (1987) डोमोक्रेटिक एजुकेशन। प्रिंस्टन, न्यू जर्सीः प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस.

हॉपकिन्स, एल. थॉमस (1941) इनटरैक्शनः द डेमोक्रेटिक प्रोसेस। बॉस्टनः डी. सी. हीथ.

जेन्सन, कार्ल और प्रोजेक्ट सेन्सर्ड (1994) सेन्सर्डः द न्यूज़ दैट डिन्ट मेक द न्यूज़ - एण्ड वाई। न्यू यॉर्कः फोर वॉल्स एट विन्डोज़.

कोज़ोल, जोनाथन (1991) सैवेज इनइक्वैलिटीज़। न्यू यॉर्कः क्राउन.

लेडसन-बिलिंग्स, ग्लोरिया (1995) मेकिंग मैथ मीनिंगफुल इन कल्चरल कॉन्टेक्सट्स। वॉल्टर सिकाडा, एलिज़ाबेथ फेनेमा तथा लिज़ा बायर्ड-अडाज्यान द्वारा सम्पादित पुस्तक न्यू डायरेक्शन्स इन इक्विटी फॉर मैथ्मैटिक्स इंस्ट्रक्शनमें छपा लेख। न्यू यॉर्कः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

मुरसैल, जेम्स (1955)प्रिंसीपल्स ऑफ डेमोक्रेटिक एजुकेशन न्यू यॉर्कः नॉर्टन.

ओएक्स, जीनी (1985) कीपिंग ट्रैकः हाउ स्कूल्स स्ट्रक्चर इन्इक्वैलिटी न्यू हेवनः येल यूनिवर्सिटी प्रेस.

रुबिन, लुइ जे. (सम्पादक) (1969)लाइफ स्किल्स इन स्कूल एण्ड सोसाइटी। वॉशिंगटन, डीसीः एएससीडी.

रग, हेरॉल्ड (सम्पादक) (1939)डेमोक्रेसी एण्ड द करीक्यूलमः थर्ड इयर-बुक ऑफ द जॉन ड्यूई सोसायटी। न्यू यॉर्कः डी. एपलटन-सेंचुरी.

रग, हेरॉल्ड और शूमेकर, एन (1928)द चाइल्ड-सेंटर्ड स्कूल। न्यू यॉर्कः वर्ल्ड बुक.

वास्किन, यवॉन और पारिश, लुइस (1967)टीचर-प्यूपिल प्लानिंग फॉर बैटर क्लास रूम लर्निंग। न्यू यॉर्कः पिटमैन

विलियम्स, रेमण्ड (1961) द लॉन्ग रिवॉल्यूशन। लन्दनः चैटो एण्ड विन्डस.

वुड, जॉर्ज (1988) डेमोक्रेसी एण्ड द करीक्यूलम। लैण्डन बेयर और माइकल एपल द्वारा सम्पादित पुस्तक द करीक्यूलमः प्रॉबलम्स, पॉलिटिक्स, एण्ड पॉसिबिलिटीज़में छपा लेख। अलबानीः स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू यॉर्क प्रेस.

वुड, जॉर्ज (1992)स्कूल्स दैट वर्क। न्यू यॉर्कः डट्टॉन.

जाफ, रोज़ालिंड (1959) डेमोक्रैटिक प्रैक्टिसेस इन द सेकण्डरी स्कूल। इंगलवुड क्लिफ्स, न्यू जर्सीः प्रेंटिस-हॉल.

2 डेबोरा मेइयर व पॉल श्वार्ज़

सेन्ट्रल पार्क ईस्ट सेकण्डरी स्कूलः कार्यान्वयन का कठिन काम

सम्पादकों की ओर से

नौकरशाही की अतिनियमबद्धता से तंग अनेक माध्यमिक विद्यालय शिक्षाशास्त्रियों ने अधिक प्रगतिशील, लोकतांत्रिक और छात्र-केन्द्रित विद्यालयों के लिए गुंजाइश बनाने की कोशिश की है। फिर भी "सार्वजनिक" (अर्थात सत्तापोषित) व्यवस्था में व्यापक माध्यमिक विद्यालय के संसाधनों का उपयोग करने में सर्वथा वैकल्पिक विद्यालय और विद्यालयों के भीतर विद्यालय दोनों शामिल रहे हैं। चाहे जो भी हो, पारम्परिक विद्यालयों की तुलना में ये हमेशा छोटे रहे हैं और इसलिए ये बड़े विद्यालयों की गैरव्यक्तिगत गुमनामी पर पार पाने में और शिक्षण के अधिक लोकतांत्रिक समुदाय बनाने में ज़्यादा सक्षम सिद्ध हुए हैं। इस अध्याय में डेबोरा मेइयर और पॉल श्वार्ज़ संयुक्त राज्य अमरीका के सम्भवतः सबसे अधिक चर्चित वैकल्पिक माध्यमिक विद्यालय सेन्ट्रल पार्क ईस्ट सेकण्डरी स्कूल की चर्चा कर रहे हैं। यह विद्यालय न्यू यॉर्क शहर में स्थित है। इस अध्याय को पढ़ते समय इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यहाँ वर्णित "दिमाग, दिल और काम की आदतों" के निर्माण के अलावा यह विद्यालय अपने छात्रों को विभिन्न विषयों में ली जाने वाली कठोर राज्यव्यापी परीक्षाओं के लिए भी तैयार करता है।

भूमिका

सेन्ट्रल पार्क ईस्ट सेकण्डरी स्कूल (सीपीईएसएस) एक वैकल्पिक उच्च माध्यमिक विद्यालय है जो सेन्ट्रल पार्क ईस्ट प्राथमिक विद्यालयों द्वारा

विगत पच्चीस वर्षों में निर्मित शैक्षणिक वातावरण की बुनियाद पर विकसित हुआ है। यह उच्च माध्यमिक विद्यालय सामुदायिक विद्यालय बोर्ड 4, न्यू यॉर्क सिटी शिक्षा बोर्ड के वैकल्पिक उच्च माध्यमिक विद्यालय प्रभाग और अनिवार्य विद्यालय सहकार – जो कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों का राष्ट्रीय संकुल है – की एक सहकारी परियोजना है।[1]

सीपीईएसएस 1985 में आरम्भ हुआ था। उस समय इसमें सातवीं कक्षा के 80 छात्र थे। आज इसमें सातवीं से बारहवीं कक्षा तक के कुल 450 छात्र हैं। इससे अधिक बड़ा यह विद्यालय नहीं होगा। परन्तु हमने न्यू यॉर्क शहर में इसके ग्यारह नए सहभागी उच्च माध्यमिक विद्यालय स्थापित करने का काम चालू कर दिया है। सीपीईएसएस में पढ़ने वाले अधिकांश बच्चे आसपास (ईस्ट हरलेम) के ही रहने वाले हैं। 85 प्रतिशत बच्चे अफ्रीकी-अमरीकी या लेटिनो हैं, और 20 प्रतिशत से अधिक बच्चे विशेष शिक्षा सेवा के अन्तर्गत सुविधाएँ पाने के हकदार हैं। यदि वे हमारा स्कूल छोड़कर पढ़ने के लिए अन्यत्र भी चले जाएँ तो भी हम जानते हैं कि यहाँ पढ़ने वाले बच्चों में से 97.3 प्रतिशत बच्चे उच्च माध्यमिक विद्यालयों की परीक्षा पास करके आए होते हैं और उनमें से 90 प्रतिशत कॉलेज भी जाते हैं।

सीपीईएसएस का बुनियादी उद्देश्य यह है कि बच्चों को अपने दिमाग का सही इस्तेमाल करना सिखाया जाए और उन्हें एक अच्छे जीवन के लिए तैयार किया जाए जो उत्पादक हो, सामाजिक रूप से उपयोगी हो और निजी तौर पर सन्तोषदायक हो। विद्यालय का शैक्षणिक कार्यक्रम बौद्धिक उपलब्धियों पर ज़ोर देता है और सीमित संख्या में कुछ केन्द्रीय महत्व के विषयों में पारंगत होने को महत्वपूर्ण मानता है। इसके साथ ही इस दृष्टि का विकास भी होता चलता है कि हम सीखना सीखें, तर्क करना सीखें और ऐसे पेचीदा मुद्दों का विश्लेषण करना भी सीखें जिनमें सहभागिता और व्यक्तिगत जवाबदारी आवश्यक होती है।

अन्तिम उच्च माध्यमिक डिप्लोमा इस आधार पर नहीं दिया जाता कि किसने कक्षा में या कारनेगी इकाई में कितना समय गुज़ारा है, बल्कि इसके लिए हर विद्यार्थी को 14 आधारपत्रों के माध्यम से अपनी उपलब्धियाँ एक निर्णायक समिति[2] के सामने रखना पड़ती हैं। ऊँची-ऊँची अपेक्षाएँ, भरोसा, व्यक्तिगत गरिमा का बोध और विविधता के प्रति सम्मान की भावना – ये विद्यालय के मूल्य हैं। विद्यालय में कोई भी छात्र प्रवेश ले

सकता है और विद्यालय अपने हर छात्र से काफी अपेक्षा रखता है।

यह विद्यालय आवश्यक विद्यालयों के सहकार के सिद्धान्तों के अनुसार चलता है। यह सहकार उच्च माध्यमिक विद्यालयों का एक राष्ट्रीय संगठन है जिसके निदेशक टेड साइज़र हैं। सहकार के सिद्धान्तों के अनुसारः

1 कम ही ज़्यादा है। कुछ चीज़ों को अच्छी तरह जानना बेहतर है बनिस्बत बहुत-सी चीज़ों को सतही तौर पर जानने के।

2 वैयक्तीकरण। शैक्षणिक पाठ्यक्रम एकीकृत और सार्वदेशिक है, लेकिन सीखना और सिखाना निजीकृत। कोई भी अध्यापक 80 से अधिक छात्रों को पढ़ाने (सीपीईएसएस में 40) या 15 से अधिक छात्रों को मार्गदर्शन देने के लिए उत्तरदायी नहीं हो सकता।

3 लक्ष्य निर्धारण। सभी छात्रों के लिए ऊँचे लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं। छात्रों को अपने विद्यालयीन कार्य में पारंगत होने का स्पष्ट प्रदर्शन करना चाहिए।

4 छात्र कार्यकर्ता हैं। सीपीईएसएस के अध्यापक अपने छात्रों को "प्रशिक्षित" करते समय उन्हें स्वयं उत्तर खोजने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, ताकि वे स्वयं अपने शिक्षक बन सकें। इस तरह छात्र स्वयं उत्तर और समाधान खोजते हैं और पाठ्यपुस्तकों (या अध्यापकों) की बातों को दोहराकर नहीं, स्वयं करके सीखते हैं।

दिल, दिमाग और काम की आदतें

2 मई *1992*, शुक्रवार। हमारे छात्रों ने पूरे सप्ताह रॉडनी किंग के फैसले और लॉस एंजलस के दंगों के बारे में बातें कीं और इन घटनाओं से पैदा हुई प्रबल भावनाओं से दो-चार होने और उन्हें व्यवस्थित करने की चेष्टा की। होनी ऐसी हुई कि आज ही मिशिगन शहर का एक संगीत दल हमारे यहाँ गाने वाला था। उस दल में सभी गोरे थे। उधर लॉस एंजलस जल रहा था और शायद मृत्यु भय से काँप रहा था, और इधर यह दल मुख्यतया अफ्रीकी-अमरीकी और लेटिनो लड़कों के आगे खड़ा था जिनमें से कई तो विरोध प्रदर्शन के लिए मचल रहे थे। वातावरण में तनाव था। उसी समय हमारा एक वरिष्ठ साथी खड़ा हुआ और बोला कि वह कुछ कहना चाहता है।

"मुझे यह ज़रूरी लगा कि मैं यहाँ आकर खड़ा होऊँ और सभी छात्रों को

बताऊँ कि हम किन हालात से गुज़र रहे हैं। सीनियर इंस्टीट्यूट से मुझे पता चला है कि बहुत सारे छात्र लॉस एंजलस की घटनाओं के बारे में चर्चा कर रहे हैं और उन घटनाओं से विचलित हैं।

"...मैं आपसे सिर्फ एक बात कहना चाहता हूँ। मैं सिर्फ यह कहना चाहता हूँ कि यहाँ कोई हमारा दुश्मन नहीं है... और हमें अपनी एकजुटता बनाए रखनी है।

"..... और यहाँ ... मिशिगन के बहुत लोग हैं। हैं या नहीं?" छात्र हँसे। "मिशिगन के, न कि कैलिफोर्निया के। हैं कि नहीं?" छात्र और खुलकर हँसे।

"वे यहाँ जो भी कर रहे हैं हमारे लिए कर रहे हैं। वे हमें खुश करने की कोशिश नहीं कर रहे हैं। वे गा रहे हैं क्योंकि उन्हें गाना अच्छा लगता है और वे दिखा रहे हैं कि उनके पास क्या है।

"वे हमारे दुश्मन भी नहीं हैं। इस कमरे में कोई भी शख्स हमारा दुश्मन नहीं है। अगर हम एकजुट रहे और हमने अपनी एकजुटता बनाए रखी तो हम उन्हें दिखा सकते हैं कि हम औरों की तरह बिखर जाने वाले नहीं।" सारा कक्ष तालियों से और प्रशंसा की ध्वनि से गूँज उठा।

"हमें जो करना है वह तो हम करेंगे ही, लेकिन इन लोगों के सामने अपना गुस्सा प्रकट करने से हमारा कोई फायदा नहीं होगा।"

अगर जनता के टैक्स से चलने वाले विद्यालयों का बुनियादी सामाजिक दायित्व अच्छे नागरिकों की एक पीढ़ी तैयार करना है और इसी से उनका औचित्य सिद्ध होता है, तो ज़रूरी है कि विद्यालय एक ऐसा स्थान हो जहाँ छात्र दिल, दिमाग और काम की वे आदतें सीख सकें जिन पर लोकतंत्र आधारित होता है।

लेकिन चूँकि जिस चीज़ का आपको कोई अनुभव ही नहीं है – चाहे वह उलटा-टेढ़ा अनुभव ही क्यों न हो – उसमें आप निपुण भी नहीं हो सकते। इसलिए तर्कसंगत बात तो यही है कि विद्यालय में छात्रों को लोकतांत्रिक आदतों का अनुभव कराया जाना चाहिए। यह एक पेचीदा बात है – लेकिन यदि इसे समझा जाए तो बहुत सीधी-सी बात है। यदि आपने किसी खेल को खेले जाते हुए देखा ही नहीं है तो आप उसे खेलना कैसे सीख सकते हैं? अगर किसी को संगीतज्ञ बनना है तो उसे संगीतज्ञों की – और सम्भव हो तो किसी श्रेष्ठ संगीतज्ञ की – सोहबत में रहना ही होगा।

सीपीईएसएस में हमारा काम इस विचार को एक बार फिर गम्भीरता से लेना और इन्हीं बुनियादी उसूलों पर बच्चों की परवरिश करना था। इसलिए बजाय छात्रों को समानधर्मा अनाड़ियों के दल में रख देने और ऐसा माहौल बना देने के जिसमें कोई विशेषज्ञ इन नौसिखियों के आगे अपनी दक्षता का खुलासा ही न करे बल्कि सिर्फ उसकी बातें करे, हमने सारे सिलसिले को उलट दिया।

हम दोनों ने किंडरगार्टन से अपना कैरियर शुरू किया था। हमने सोचा हम उच्च माध्यमिक विद्यालय तक और सम्भव हो तो उसके आगे भी किंडरगार्टन की पद्धति को ही बनाए रखने की कोशिश करेंगे। हम लोग एक ऐसा विद्यालय चाहते थे जो रोचक होने के लिए कुदरती तौर पर संयोजित हो, बिलकुल उसी तरह जैसे कोई किंडरगार्टन। हम एक ऐसा स्थान चाहते थे जिसमें छात्र और अध्यापक उन विषयों व सामग्री पर मिलकर काम कर सकें जिनमें उनकी रुचि हो और जिनसे वे लम्बे समय तक आनन्द प्राप्त कर सकें और जहाँ बहुत ज़्यादा पूर्वकल्पित निन्दाएँ इस अध्ययन के आड़े न आएँ। हमें ऐसे अवसर निर्मित करने थे जिनमें सबसे कम जानकार ज़्यादा जानकार को ध्यान से देख सके, उसके काम का अवलोकन कर सके और फिर अपनी गति से वैसा ही काम कर सके। हमें एक ऐसा माहौल निर्मित करना था जिसमें लोग एक-दूसरे को उनके काम के आधार पर जानें, एक-दूसरे के काम का — यानी अपने साथी अध्यापकों और साथी छात्रों के काम का — नज़दीक से अवलोकन करते हुए और स्वयं वैसा ही करते हुए। इस तरह से बनेगा सच्चे अर्थों में पेशेगत शिक्षा का माहौल!

तो हम जानते थे कि हमें छोटा, बहुआयु, अन्तरंग और रोचक होना होगा। परिवार और विद्यालय को जोड़ीदार बनना पड़ेगा — क्योंकि बच्चों की परवरिश दोनों की साझा ज़िम्मेदारी है। बच्चों के पढ़ने और बड़े होने की प्रक्रिया लुभावनी और अद्‌भुत होनी चाहिए, ऐसी जिसमें सबकी भागीदारी हो सके। इसी का तरीका हम दोनों को खोजना था। एक सशक्त नागरिक जिसका धरातल निरन्तर व्यापक होता जाए और जो निजी तथा सार्वजनिक जीवन में प्रभावी भूमिका निबाहने की क्षमता रखता हो — यही था हमारा अभीष्ट। और उसका निर्माण कल्पनीय, आकर्षक और सम्भव है, यही सिद्ध करना था हमें।

और यही है जो अच्छी स्कूली शिक्षा कर सकती है। लेकिन इसके लिए आवश्यकता थी इन सब लफ्फाज़ मुहावरों को भूलकर उन छोटी-छोटी

चीज़ों को छाँटने और करने की जो वाकई मायने रखती थीं। जिस तरह अपनी किंडरगार्टन कक्षाएँ बनाने में, खास तरह की पुस्तकें छाँटने में, खास पेंसिल और रंग चुनने में और कलाकृतियाँ लगाने में हम दोनों ने किया था, कुछ खास बच्चों को ध्यान में रखते हुए और मन में हरदम कुछ खास उद्देश्य लिए हुए।

और इस तरह बना सीपीईएसएस। समय के साथ-साथ अन्य लोग, उनके विचार और प्रयास भी इसमें जुड़ते गए। बहुत सारी कहानियाँ बनती गईं, लेकिन सबका उद्देश्य एक ही रहा। हमने एक संरचना निर्मित की जिसमें सब लोग — छात्र और छात्र, छात्र और अध्यापक, अध्यापक और अध्यापक और उनके परिवार — खुलकर अपने मन की बात कह सकें और मिलकर निर्णय ले सकें। अनिवार्य विद्यालयों के समूह का सर्वप्रमुख मिशन था "अपने दिमाग का ठीक इस्तेमाल"। हमें परिभाषित करना था कि "अपने दिमाग का ठीक इस्तेमाल" क्या होता है। एक लोकतांत्रिक नागरिक किन "दिमाग की आदतों" से परिभाषित होता है? हमने अपने उन मित्रों के बारे में सोचा जो "अच्छे नागरिक" थे और सोचा कि ऐसा क्या है जो उन सबमें एक समान है। बेशक इसका सम्बन्ध तथ्य, सूचना या व्यक्तियों को याद रखने की क्षमता से नहीं था। हमारे आदर्श नागरिक को परिभाषित करने वाली जो दो चीज़ें हमें लगीं वे थीं परानुभूति और सन्देहवादः अर्थात किसी परिस्थिति को दूसरे की नज़र से देखने की क्षमता और सामने पड़ने वाली चीज़ों की वैधता के बारे में आश्चर्य करने की प्रवृत्ति।

BEò ÊÉSÉÉ¶ÉHÉ ´ÉÉCÉ EÉò ½þÉEÉò ´ÉÉ¼ÉEÉò {ÉÊ®úÉÉ– ऐसा व्यक्ति जिसके बारे में हम गर्व महसूस कर सकें कि वह हमारे विद्यालय का छात्र रहा है – एक ऐसे व्यक्ति के रूप में थी जो विभिन्न क्षेत्रों में और विभिन्न तरीकों से यह प्रदर्शित कर सके कि वह निम्न पाँच प्रश्नों से निपटने का अभ्यस्त है:

1 तुम कैसे जानते हो कि तुम क्या जानते हो? (प्रमाण)

2 यह किसके दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है? (परिप्रेक्ष्य)

3 यह घटना या कार्य दूसरों से किस तरह जुड़ा हुआ है? (सम्बन्ध)

4 यदि बात कुछ और होती तो क्या होता? (अनुमान)

5 यह क्यों महत्वपूर्ण है? (प्रासंगिकता)

हमने यही सोचकर अपने पाठ्यक्रम और मूल्यांकन का तरीका निर्धारित किया है कि जो व्यक्ति उपरोक्त पाँच प्रश्नों से जूझने का अभ्यस्त होगा

वह दी हुई परिस्थिति में अपने दिमाग का सही इस्तेमाल करेगा। हालाँकि भौतिकशास्त्र से साहित्य से रेखागणित आदि तक सूक्ष्ममार्थ, शब्दावली और विधियाँ बदलती रहेंगी। लेकिन यदि ये प्रश्न सही हैं तो इन्हें कार्यस्थल और खेल के मैदान पर भी लागू होना चाहिए। बेशक, ऐसी आदतें न तो शून्य में सिखाई जा सकती हैं, न शून्य में इस्तेमाल की जा सकती हैं। उन्हें उचित विषय सामग्री के साथ ही आत्मसात किया जा सकता है। यह आत्मसातीकरण इस बात पर निर्भर करता है कि पढ़ने, लिखने, तर्क, गणित, शोध व वैज्ञानिक जिज्ञासा के हुनर को इस्तेमाल करने की छात्र में कितनी क्षमता है। लेकिन हम यह मानते हैं कि विषयवस्तु या आयु जो भी हो, ये आदतें सार्वभौमिक हैं। जो भी इन पाँच प्रश्नों से उलझने को तैयार होगा, वह एक विचारशील व्यक्ति होगा।

दरअसल जो सबसे बड़ा कदम हमने उठाया वह यह था कि जो भी सीपीईएसएस से उत्तीर्ण होगा वह केवल इसी विचारशीलता के आधार पर होगा। उसे 14 निर्धारित कार्य-क्षेत्रों में बार-बार इस विचारशीलता का प्रमाण देना होगा। हमने इसे प्रस्तुतीकरण द्वारा उत्तीर्ण होना कहा। यद्यपि हमारे यहाँ प्रस्तुतीकरण का अर्थ मात्र लिखित कार्य का संकलन नहीं बल्कि वह सब कुछ था जो छात्र उत्तीर्ण होने के मापदण्ड के अनुरूप कहना या अभिव्यक्त करना चाहें।

प्रस्तुतीकरण के **14** क्षेत्रः छात्रों और अभिभावकों के लिए रूपरेखा

सीनियर इंस्टीट्यूट के छात्रों के लिए निम्न 14 क्षेत्रों में प्रस्तुतीकरण देना प्राथमिक उत्तरदायित्व होगा।

ये प्रस्तुतीकरण विभिन्न विषयों में विस्तृत ज्ञान और हुनर के साथ-साथ दिमाग और काम की सीपीईएसएस की विशिष्ट आदतों को भी प्रतिबिम्बित करेंगे। छात्र इन सभी 14 क्षेत्रों में अपने काम को समीक्षा व अनुमोदन के लिए ग्रैजुएशन समिति के सामने प्रस्तुत करेंगे। सात "प्रमुख" (मेजर) विषयों के प्रस्तुतीकरण, विचार-विमर्श और वाद-विवाद के लिए बैठक होगी। इसलिए दो चरणों को ध्यान में रखना होगा: (1) परामर्शदाता व अन्य लोगों के सहयोग से प्रस्तुतीकरण की सामग्री तैयार करना, और (2) इसे समिति के समक्ष अपने तर्कों

के साथ प्रस्तुत करना। हो सकता है कि कुछ छात्रों को अनुमोदन के लिए प्रस्तुत सामग्री का विस्तार से पुनर्लेखन, संशोधन और पुनर्प्रस्तुतीकरण करना पड़े। यदि छात्र चाहें तो अधिक अंक प्राप्त करने के लिए दोबारा प्रस्तुतीकरण कर सकते हैं।

यह याद रखना ज़रूरी है कि प्रस्तुतीकरण का अधिकांश कार्य छात्र के सीनियर इंस्टीट्यूट वर्षों में सम्पन्न पाठों, संगोष्ठियों, कार्य सहायक काल के अनुभवों और स्वतंत्र अध्ययन पर ही आधारित होना चाहिए। इसके अतिरिक्त जहाँ ज़रूरी हो, डिवीज़न I व II से, अर्थात् सीनियर इंस्टीट्यूट में प्रवेश से पहले के अध्ययन से सामग्री ली जा सकती है (मसलन अँग्रेज़ी के अलावा किसी अन्य भाषा के प्रस्तुतीकरण में)।

प्रस्तुतीकरण के 14 क्षेत्रों में सात प्रमुख (मेजर) और सात सहायक (माइनर) होंगे। इन आवश्यकताओं की पूर्ति या व्यवहार के लिए कोई एक नियम नहीं है। हर व्यक्ति दूसरे से भिन्न होता है, और प्रस्तुतीकरण में भी यही प्रतिबिम्बित होगा। "प्रस्तुतीकरण" शब्द में वह सब शामिल है जिसके माध्यम से छात्र अपने ज्ञान, समझ और हुनर का प्रदर्शन करना चाहे। सीपीईएसएस यथा सम्भव अन्तर-अनुशासनिक अध्ययन की अनुशंसा करता है। अतः एक ज़रूरत को पूरा करने वाला काम दूसरी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

यद्यपि अन्तिम समीक्षा व्यक्तिगत उपलब्धि पर ही आधारित होगी, प्रस्तुतीकरण की लगभग सभी आवश्यकताएँ सामूहिक प्रस्तुतियों या सहकारी कार्य से पूरी हो सकती हैं। ऐसे सहकारी कार्यों को प्रोत्साहित किया जाता है क्योंकि इससे छात्र कहीं अधिक जटिल और रोचक परियोजनाओं में प्रवृत्त हो सकते हैं।

समझ की गहराई और गुणवत्ता, सीपीईएसएस की पाँच दिमागी आदतों का सही इस्तेमाल और हर सम्बन्धित क्षेत्र में गहरी पकड़ की सक्षम और विश्वसनीय सबूतदिहानी ही वे मुख्य प्रतिमान हैं जिनका उपयोग ग्रैजुएशन समिति करती है। बेशक प्रस्तुतीकरण में वस्तु और शैली दोनों के प्रति गम्भीरता नज़र आनी चाहिए। उदाहरण के लिए, लिखित कार्य साफ और व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध भाषा में होना चाहिए, वर्तनी, व्याकरण और सुलेख तीनों के लिहाज़ से, जैसी कि उच्च माध्यमिक विद्यालय के किसी छात्र

से अपेक्षा की जाती है। समिति के समक्ष पेश करने से पहले गलतियाँ ठीक कर लेना चाहिए। लिखित कार्य सामान्यतया टंकित होना चाहिए। दूसरे कामों को प्रस्तुत करते समय भी यही सावधानियाँ रखी जानी चाहिए। प्रस्तुतीकरण छात्र का सर्वश्रेष्ठ प्रयास होना चाहिए। यही प्रस्तुतीकरण के तरीके के बारे में भी कहा जा सकता है।

प्रस्तुतीकरण के हर क्षेत्र के लिए विभिन्न गुण लगभग समान रूप से प्रासंगिक हैं। उदाहरण के लिए, प्रत्येक शिक्षा अनुशासन ने अपनी एक “अंक तालिका” बना रखी है ताकि ग्रैजुएशन समिति और छात्र समुचित मानदण्डों पर वस्तुनिष्ठ भाव से ध्यान केन्द्रित कर सकें। आगे चलकर पिछले सफल छात्रों का काम देखकर और नया मूल्यांकन पत्रक बनाकर अनुमोदन के मानदण्डों को और विकसित किया जाएगा। छात्रों को उन मानदण्डों से परिचित होना चाहिए जिनके आधार पर उनका मूल्यांकन किया जाने वाला है (इसमें मूल्यांकन पत्रक और पूर्व छात्रों का कार्य भी शामिल है)।

ग्रैजुएशन समिति की बैठकों में विद्यार्थियों की तैयारी अपने पोर्टफोलियो की विषयवस्तु के अलावा अपने कम्प्यूटर ज्ञान और काम के विशेष क्षेत्रों में तरक्की के बारे में चर्चा करने की भी होनी चाहिए।

प्रस्तुतीकरण के 14 क्षेत्र निम्नलिखित हैं:

1 स्नातकोत्तर योजना
2 विज्ञान/टेक्नॉलॉजी*
3 गणित*
4 इतिहास और सामाजिक अध्ययन*
5 साहित्य*
6 आत्मकथा
7 विद्यालय व सामुदायिक सेवा और सहायक कार्य
8 नैतिकता और सामाजिक मुद्दे
9 चित्रकला/सौन्दर्यशास्त्र
10 व्यावहारिक कौशल
11 मीडिया
12 भूगोल
13 अँग्रेज़ी के अलावा कोई भाषा/ किन्हीं दो भाषाओं में निपुणता
14 शारीरिक चुनौती

वरिष्ठ परियोजना

इनमें से किसी एक विषय या मद का अन्तिम वरिष्ठ परियोजना के रूप में अलग से मूल्यांकन किया जाएगा। हर छात्र को उक्त 14 में से 7 में प्रमुख प्रस्तुतीकरण देना होगा। इनमें से चार विषय ऊपर तारांकित हैं। इसके अलावा तीन विषय छात्र को परामर्शदाता के सहयोग से चुनने होंगे। श्रेणी निर्धारण के लिए डिस्टिंग्विश्ड (Distinguished), सेटप्लस (SatPlus), सेट (Sat) या मिनसेट (MinSat) का उपयोग किया जाएगा। सात "सहायक" प्रस्तुतीकरणों में छात्र को उत्तीर्ण/अनुत्तीर्ण घोषित किया जाएगा। छात्र के उत्तीर्ण होने का निर्णय परामर्शदाता की अनुशंसा और सम्पूर्ण ग्रैजुएशन समिति के अनुमोदन पर किया जाएगा।

तथापि छात्र किसी श्रेणी विशेष (डिस्टिंग्विश्ड, सेटप्लस आदि) के लिए अनुरोध कर सकता है। ऐसे मामलों में समिति को समस्त संगत सामग्री के पुनरावलोकन के लिए तथा इस पर चर्चा करने के लिए समय देना होगा। ऐसी श्रेणी सम्पूर्ण समिति के अनुमोदन पर ही दी जा सकेगी।

हमने ग्रैजुएशन समितियाँ गठित कीं जो कुछ-कुछ डॉक्टरल समितियों जैसी थीं। हर समिति में कम से कम दो अध्यापक, छात्र की पसन्द का एक वयस्क व्यक्ति और एक छात्र सदस्य रखा गया। समिति का काम था छात्र द्वारा प्रस्तुत सामग्री को पढ़ना, उसकी समीक्षा करना, छात्र द्वारा पेश किए गए प्रमाणों को सुनना और अनुमोदन या पुनर्लेखन के लिए समुचित अनुशंसा करना। जब हमने इसे आरम्भ किया, हमारे लिए इस प्रक्रिया का अनुमान लगाना भी कठिन था, लेकिन आज की कहानियाँ इस समय-साध्य प्रक्रिया के प्रति हमारी प्रतिबद्धता को और बल प्रदान करती हैं। प्रस्तुत है ऐसी ही एक कहानी।

ग्रैजुएशन समिति की एक बैठक

सितम्बर की एक गर्म दोपहर है, शुक्रवार का दिन है, और मोनीक की ग्रैजुएशन समिति की पहली बैठक होने जा रही है। हम मोनीक की माँ की प्रतीक्षा कर रहे हैं। (हर छात्र अपनी पसन्द का एक वयस्क व्यक्ति चुन सकता है और मोनीक ने अपनी माँ को चुना है। स्थानीय सयानेपन के अनुसार यही सबसे ठीक चुनाव है, हालाँकि इसमें जोखिम भी है।) मोनीक

इतनी उद्वेलित है कि उससे एक जगह ठीक से बैठा नहीं जा रहा। "मुझे बाथरूम जाना है," वह कहती है और पन्द्रह मिनट में तीसरी बार बाथरूम जाती है।

अन्ततः हम लोग मेरे कार्यालय में एक मेज़ के गिर्द बैठते हैं और मोनीक अपना प्रस्तुतीकरण आरम्भ करती है। उसने इसके लिए स्वास्थ्य सेवा में एड्स को लेकर भेदभाव का विषय चुना है। वह अपने आलेख में से देखती है, लेकिन सिर्फ कभी-कभी। शुरुआत में वह कुछ घबराई हुई थी, हमेशा की तरह आराम से बैठने की बजाय सीधी तनकर बैठी थी, और अपना हर वाक्य "मैंने रखा है..." से शुरू कर रही थी। मसलन, "मैंने रखा है एक साक्षात्कार एक नर्स से जो एक अस्पताल के आपातकक्ष में काम करती है, यह दिखाने के लिए कि एक ऐसे पेशेवर की क्या भावनाएँ होती हैं जिसका बुनियादी दायित्व एड्स से सम्बन्धित नहीं है।"

मोनीक ने अपना प्रस्तुतीकरण पूरा किया और पूछा कि क्या कोई सवाल है? उसे पता है कि सवाल होंगे ही। यह उस बैठक का एक अंश है जिसमें समिति के सदस्य देखते हैं कि छात्र ने सीपीईएसएस ग्रैजुएट्स की निशानी, दिमाग की पाँच आदतें सीखी हैं या नहीं? हमने बहुत प्यार से पूछा कि उसने अमुक जानकारियाँ किस स्रोत से प्राप्त कीं? मोनीक को इस प्रश्न का उत्तर देने में कोई परेशानी नहीं हुई। छात्र समिति में अपने अनुभवों को एक-दूसरे को बताते ही हैं। मोनीक को मालूम था कि जानकारी के स्रोतों के बारे में सवाल पूछा जाएगा।

लेकिन तभी प्रश्नों ने बात को एक नई दिशा में मोड़ दिया। मैंने पूछा, "मोनीक, तुमने उन चिकित्सकों की बात की जो मरीज़ की जानकारी या अनुमति के बगैर उनकी एचआईवी जाँच करते हैं। तुम्हें लगता है कि यह बुरी बात है, मरीज़ की निजता का उल्लंघन है। पिछले ही इतवार मैंने क्यूबा के बारे में और एड्स की महामारी के खिलाफ उनके प्रयासों के बारे में टीवी पर एक कार्यक्रम देखा। क्यूबा में हरेक का परीक्षण किया जाता है। इसके लिए वे किसी से अनुमति नहीं लेते। जैसे ही कोई व्यक्ति एचआइवी-पॉज़ीटिव पाया जाता है, उसे दूसरों से अलग कर दिया जाता है। उसे अच्छी आरामदेह जगह, अच्छा भोजन और अच्छी चिकित्सा सेवा दी जाती है, पर रहना उसे अलग ही होता है। इसका एक परिणाम यह हुआ है कि उन्होंने एड्स के फैलने को काफी हद तक रोक दिया है। यहाँ भी ऐसा ही किया जाए तो?"

अब मोनीक अकेली थी। उसे यकीनन ऐसे प्रश्न की उम्मीद नहीं थी। अब वह अपना उत्तर "मैंने रखा है.." से शुरू नहीं कर सकती थी। लेकिन उस क्षण उसे कुछ हुआ। उसमें कुछ भौतिक परिवर्तन जैसा हुआ। और ऐसा परिवर्तन मैंने इस तरह की बैठकों में बहुत देखा है। वह तनकर बैठ गई, थोड़ा आगे झुकी, उसने मेरी आँखों में आँखें डालकर देखा और बोली, "मेरे पिताजी की मौत एड्स से हुई थी और इसलिए मैंने सबसे पहले यह प्रस्तुतीकरण करने का निर्णय किया। यह मेरे लिए सचमुच महत्वपूर्ण है।"

वह आगे बोली, "मैं हर उस चीज़ के पक्ष में हूँ जिससे एड्स से बचाव होता हो या जिससे इसका फैलना ज़रा भी कम होता हो। लेकिन लोगों के बारे में – कि उनका परीक्षण किया जा रहा है – मुझे पता नहीं। मैं सवाल के दोनों पहलुओं को समझ रही हूँ, लेकिन मैं सही-गलत का फैसला नहीं करना चाहती। मेरे खयाल से हमें मतदान करा लेना चाहिए।"

"मतदान कौन करेगा?" मैंने पूछा।

"हम सब," उसने फौरन कहा। "छोटे बच्चों तक सभी। यह इतनी बड़ी बात है कि इसके लिए हरेक की राय ली जानी चाहिए।"

एक घण्टे तक चले प्रस्तुतीकरण और सवाल-जवाब के बाद समिति की बैठक समाप्त हुई। सीपीईएसएस में बनाए गए मूल्यांकन प्रपत्रों को समिति के सदस्यों ने भराः एक प्रमुख परियोजना कार्य के मूल्यांकन के लिए और दूसरा इसके आधार पर छात्र को दिए जाने वाले ग्रेड से सम्बन्धित। और यह मोनीक के सात प्रस्तुतीकरणों में से पहला था।

जैसे ही मैंने मोनीक के ग्रेड की घोषणा की – सन्तोषप्रद से बेहतर ग्रेड – और उसे बताया कि हमारी राय में उसके प्रस्तुतीकरण में क्या बहुत बढ़िया था और किसमें सुधार की गुंजाइश थी, वह खुलकर मुस्कराई। वह एक बार फिर जैसे एक छोटी बच्ची हो गई। उसने हमारी पूरी बात भी नहीं सुनी और बाहर भागी, बाहर इन्तज़ार करती अपनी पक्की सहेलियों यूइज़ा और फ्रांसिस से मिलने।

मैंने सारे कागज़-पत्र एक तरफ रखे और ग्रेजुएशन समिति की अगली बैठक की तैयारी करने लगी। कार्लोस साहित्य पर प्रस्तुतीकरण देने वाला था – या यूँ कहें कि वह दिमाग का सही इस्तेमाल करने वाले, या दिमाग की हमारी आदतों का उचित प्रयोग करने वाले व्यक्ति के रूप में खुद को प्रस्तुत करने वाला था। वह साहित्य के क्षेत्र में अपने काम के ज़रिए इसका प्रदर्शन करने जा रहा था।

स्कूल के बाद जब मैं कुछ मित्रों से मिली तो उन्होंने मुझसे पूछा कि मैं इतनी प्रफुल्लित क्यों हूँ? इसका कारण यह था कि कभी-कभी — जैसे आज मोनीक की समिति बैठक के बाद — मुझे हमारी सम्मिलित कोशिशों का सुफल देखने की अनुभूति होती थी। मुझे सीखने के लिए कार्यरत बहुत सारे अध्यापकों, अभिभावकों और छात्रों के संघर्ष की घण्टों लम्बी अवधि दिखाई देने लगती थी। समिति बैठक केवल अन्तिम मूल्यांकन का समय नहीं होती थी; वह हमारे बरसों तक पढ़ने-लिखने-सोचने-बहस करने और विचार करने का एक ठोस और सार्थक प्रतिदान भी होती थी।

यदाकदा मैं जादू होता हुआ भी देखती हूँ। हाथ की सफाई नहीं, बच्चे के पहले कदम या पहले शब्द का जादू। जादू जिसे कमाया गया। एक छात्र द्वारा एक विचारशील युवा के रूप में विकसित होने, आत्मविश्वास प्राप्त करने और अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का जादू — हमारी आँखों के सामने, हमारे देखते-देखते एक छोटी-सी बच्ची द्वारा एक विचारशील आत्मविश्वासी और समर्थ-सक्षम नवयुवती बन जाने का जादू।

चुनाव जो हमने किए हैं

कैसे बनाईं हमने इतनी सख्त और इतनी आत्मीय ग्रैजुएशन समितियाँ जैसी ऊपर बताईं गई हैं? कैसे हम ऐसा विद्यालय संगठन बना पाए जिसमें अध्यापक छोटी से छोटी चीज़ पर भी ध्यान दे पाएँ, जैसा कि बचपन में शुरू के अध्यापक देते हैं? जो तब्दीलियाँ हमने कीं हैं वे सरल नहीं हैं। उन्होंने हमें कठिन निर्णय लेने के लिए बाध्य किया है और उनमें से हरेक के पीछे अनेक कुर्बानियाँ छिपी हुई हैं।

आधे दिन की मुद्दा-केन्द्रित कक्षाएँ

सबसे पहले हम अध्यापक : छात्र अनुपातों की बात करेंगे। सीपीईएसएस में सातवीं से दसवीं कक्षा तक के छात्रों के लिए एक सामान्य कोड पाठ्यक्रम होता है जो दो मुख्य-धाराओं में विभक्त होता है। आधे दिन गणित और विज्ञान और शेष आधे दिन कला संकाय के विषय (चित्रकला, इतिहास, सामाजिक अध्ययन व साहित्य आदि)।

हर कक्षा एक मुद्दे पर केन्द्रित रहती है। उदाहरण के लिए, यहाँ दो मुद्दे हैं, एक विज्ञान/गणित से और दूसरा मानविकी से। दोनों नवीं व दसवीं के भाग-II के पाठ्यक्रम से हैं:

पहला है न्यायः कानून की प्रणालियाँ और सरकार। इस साल भर चलने वाले मुद्दे में न्याय सम्बन्धी कम से कम दो एकदम भिन्न अवधारणाओं पर विचार किया जाता हैः एक सहमति-जन्य और दूसरी विरोधात्मक। इनमें समदर्शिता, विवाद निस्तारण और समता के विचारों का निरीक्षण किया जाता है। अमरीकी न्याय व्यवस्था और महत्वपूर्ण विधिक सोपानों पर विस्तार से विचार किया जाता है। छात्र किसी दिए हुए कानूनी मामले पर तैयारी और उसका बचाव खुद करते हैं। उन्हें जूरी व्यवस्था और साक्ष्य की प्रवृत्ति को जाँचने का मौका मिलता है। इस अध्ययन में जो ज़रूरी सवाल हैं वे ये हैंः प्राधिकार कैसे उचित हैं? विवादों का निस्तारण कैसे होता है? क्या न्याय, नैतिकता और समदर्शिता समानार्थक हैं?

दूसरा मुद्दा, ऊर्जा की गति और बल, दो साल चलने वाला है। यह जिन आवश्यक प्रश्नों से संचालित है वे हैंः वस्तुएँ कैसे गतिशील होती हैं? ऊर्जा अपने विभिन्न रूपों में किस तरह का व्यवहार करती है? क्या ऊर्जा बनाई और नष्ट की जा सकती है? इन सवालों की छानबीन के दौरान छात्र किसी परियोजना पर काम करते हैं। मसलन किसी बालोद्यान में लगे झूले का डिज़ाइन तैयार करना और उसका विश्लेषण करना। या किसी प्रक्षेपी (मसलन हवा में जाती बास्केटबॉल या जेवेलिन) का वैज्ञानिक विश्लेषण करना। छात्रों ने दो या अधिक वस्तुओं की टकराहट या प्रोजेक्टाइल मोशन (projectile motion) का अध्ययन करने और उनका डिज़ाइन तैयार करने के लिए बाज़ार में उपलब्ध अनेक कम्प्यूटर सॉफ्टवेयरों का उपयोग किया। मुद्दे में शामिल थे – वैज्ञानिक पद्धति और सम्भाव्यता (probability) तथा सांख्यिकी (statistics) की तकनीकें। इस प्रकरण में छात्र गिनती, नाप आदि की गणितीय क्रियाओं का भी उपयोग करते हैं जो उन्हें बीजगणित, रेखागणित, त्रिज्यामिती, गणितीय रूपान्तरण, वेक्टर्स तथा मेट्रिक्स आदि की समझ की ओर प्रवृत्त करती हैं।

सातवीं से दसवीं तक की कक्षा में हर कक्षा दो घण्टे की होती है और हर शिक्षक दिन में दो कक्षाएँ पढ़ाता है, न कि पाँच, जैसा कि आम तौर पर अन्य बहुत से विद्यालयों में होता है। इस परिवर्तन का अर्थ था शिक्षण प्रक्रिया की पुनरावधारणा। दो घण्टे की कक्षा होगी तो अध्यापक को अनेक पद्धतियाँ काम में लेना पड़ेंगी, मसलन सारी कक्षा को निर्देश देना, छोटे समूहों में मिल-जुलकर काम, पुस्तकालय में जाकर काम और सवाल देना और उन्हें सुलझाना आदि। अध्यापक छात्रों को दो घण्टे तक उबाऊ भाषण नहीं दे सकता।

सीनियर इंस्टीट्यूट में (ग्यारहवीं-बारहवीं कक्षा को यह हमारा दिया नाम है) शिक्षण का तरीका कुछ अलग होता है। बदलाव के इस दौर में छात्र विद्यालय भवन से बाहर निकलकर ज़्यादा काम करते हैं: महाविद्यालय में, संग्रहालयों में, कार्य सहायक के रूप में या स्वतंत्र अध्ययन में। उनके दिन का खासा बड़ा हिस्सा उनके सलाहकारों के साथ बीतता है जो उन्हें ग्रेजुएशन की और उसके बाद उठाए जाने वाले कदमों की तैयारी करवाते हैं।

छोटी कक्षाएँ

हमारी दूसरी प्राथमिकता है न केवल कक्षाओं की संख्या कम करना बल्कि उनका आकार भी छोटा करना। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमने हमें आवंटित संसाधनों का एक बड़ा हिस्सा कोड कक्षाओं के शिक्षण पर खर्च करने का निश्चय किया है। 1985 में, जब हमने शुरू किया, हमारे यहाँ सातवीं की सिर्फ एक कक्षा थी। अब 1995 में वह अपनी अधिकतम संख्या में है। हमने अध्यापक-छात्र अनुपात को अपनी पहली प्राथमिकता बनाया है। हमारे यहाँ मार्गदर्शक सलाहकार नहीं है, कोई व्यायाम शिक्षक नहीं है (हालाँकि यहाँ खासा विस्तृत खेलकूद कार्यक्रम और विद्यालय समय के बाद खेलने की भी पर्याप्त व्यवस्था है), कोई संगीत शिक्षक नहीं है, और पूरे विद्यालय के लिए मात्र एक कला शिक्षक है। हमारे यहाँ कोई विभाग प्रधान, कोई विभागाध्यक्ष नहीं है, और मात्र एक सामाजिक कार्यकर्ता है। किसी भी कक्षा में बीस से अधिक बच्चे नहीं हैं। हमारे यहाँ कार्यरत अध्यापक ही ये सारे दूसरे काम भी करते हैं। जो भी पेशेवर अध्यापक हैं वे दो-दो साल तक 15-15 छात्रों के सलाहकार का काम करते हैं। यह समूह हर सप्ताह कई घण्टे साथ बैठता है और सलाहकार ही वह व्यक्ति है जिसका छात्र और उसके परिवार से गहरा और दूरगामी रिश्ता होता है।

आलोचक मित्र

यह शिक्षण प्रक्रिया दमदार तो ज़रूर है, लेकिन पाठ्यक्रम और मूल्यांकन वाली प्रक्रिया से इसकी पटरी नहीं बैठती जिसका सारा ज़ोर रटने और कोर्स पूरा करने पर होता है। यह शिक्षण प्रक्रिया वैयक्तिक है। इसका बीजमंत्र कठिन विचारों को मात्र कहना नहीं, बल्कि उन्हें आत्मसात करना भी है। इसमें प्रशिक्षु की सक्रिय भूमिका ज़रूरी है और अन्य रचनात्मक

गतिविधियों की ही तरह इसके परिणाम भी अकल्पित और आश्चर्य से भरे हुए हैं। इस तरह के शिक्षण में पाठ्यपुस्तकों या मानकीकृत परीक्षणों की कोई भूमिका नहीं है। वयस्कों को मिलकर लगातार पाठ्यक्रम की पुनर्रचना करनी होती है, ज्ञान के प्रदर्शन के लिए नए रूपाकार आविष्कृत करने होते हैं और खुद तय करना होता है कि कब विद्यालय को कहना चाहिए, "इसने कर लिया। इसे डिप्लोमा दे दिया जाना चाहिए।" ऐसी गुस्ताखी कर गुज़रने के लिए ज़रूरी है कि मानकों पर निरन्तर चर्चा की जाए और सहमति बनाई जाए।

बाहरी सहकर्मी, जिन्हें हम "आलोचक मित्र" कहते हैं, विद्यालय के काम को आलोचनात्मक दृष्टि से देखने में हमारी सहायता करते हैं। "स्वायत्तता" का मतलब गोपनीयता नहीं है। बात ठीक उलटी है। सीपीईएसएस और उसका सारा कामकाज सार्वजनिक है। वर्ष में अनेक बार हम अनेक प्रकार के विशेषज्ञों को आमंत्रित करते हैं कि वे आएँ, हमारे पाठ्यक्रम का परीक्षण करें और अपने मानक तैयार करने में हमारी मदद करें। उदाहरण के लिए, स्थानीय महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक हमारे यहाँ आए और उन्होंने छात्रों के प्रस्तुतीकरण की गुणवत्ता की समीक्षा की। लगभग सभी मामलों में उन्होंने हमारे अध्यापकों द्वारा किए गए मूल्यांकन की पुष्टि की। कभी-कभी हम दिन भर चलने वाले ग्रेजुएशन समीक्षा कार्यक्रमों में भी इन "आलोचक मित्रों" को बुलाते हैं। आमंत्रितों में न्यू यॉर्क शहर के पारम्परिक सरकारी विद्यालयों के अध्यापक, राज्य शिक्षा विभाग के कर्मचारी, समग्र उच्च माध्यमिक विद्यालयों के प्राचार्य, हमारे सहायक विद्यालयों के प्राचार्य और अध्यापक, पीठों के प्रतिनिधि और अन्य बाहरी विशेषज्ञ शामिल थे। इन लोगों ने अलग-अलग तरह के प्रस्तुतीकरणों को देखा, छात्रों से उनकी पढ़ाई के बारे में बातें कीं और छात्रों द्वारा बनाए वीडियो टेप देखे। वे हमसे तथा अन्य अध्यापकों से मिले और उन्होंने हमें अनेक विषयों पर बहुत विचारोत्तेजक टिप्पणियाँ, आलोचना और सुझाव दिए। इसमें शैक्षणिक आवश्यकताओं से लेकर हमारे विद्यालय की इमारत तक अनेक विषय शामिल थे। अपने कामकाज को बाहरी जाँच-पड़ताल के लिए इस तरह खोलने का कारण यह है कि हम स्वयं को जनता के प्रति जवाबदेह महसूस करते हैं। दूसरी बात यह है कि इससे हमारे कर्मचारियों को भी मिलजुलकर काम करने का काफी बढ़िया अनुभव प्राप्त होता है।

योजना, सहभाग और मूल्यांकन के लिए समय

इस प्रकार के सहभाग को सम्भव बनाने के लिए एक और चीज़ पर ध्यान देना ज़रूरी था। और वह थी अध्यापकों के काम के घण्टे। (इसके लिए हमें अध्यापकों के व्यावसायिक जीवन में अन्य वयस्कों या आलोचक मित्रों को शामिल करते हुए नई तरह की योजना, सहभाग और मूल्यांकन के लिए समय का प्रावधान करना था।) हर सोमवार को दोपहर तीन से साढ़े चार बजे तक कर्मचारियों की बैठक होती है। शुक्रवार को सुबह आठ बजे से दोपहर एक बजे तक कक्षाएँ चलती हैं और दोपहर डेढ़ से तीन बजे तक फिर बैठक होती है। इस तरह हर सप्ताह तीन घण्टे सारे कर्मचारी सिर जोड़कर बैठते हैं और पूरे विद्यालय की विभिन्न समस्याओं पर विचार करते हैं। इसमें से कुछ समय अलग समूहों में भी बिताया जाता है (मानविकी संकाय के अध्यापक एक जगह और गणित/विज्ञान समूह के अध्यापक दूसरी जगह)।

इन समूहों में सातवीं से ग्रेजुएशन तक कार्य की सम्भावना, क्रम और मानकों की चर्चा की जाती है। महीने में कम से कम एक बार हमारा सारा स्टाफ बैठकर नस्ल, वर्ग और लिंग सम्बन्धी मसलों पर विचार-विमर्श करता है। महीने में एक बार, विद्यालय की समस्याओं जैसे परिवारों से मुलाकात, प्रतिवेदन लेखन या विभिन्न उपसमूहों के प्रतिवेदनों-सिफारिशों आदि पर भी चर्चा होती है। साल में कई बार साप्ताहिक अवकाश के दौरान हम छात्रों के कार्य की सार्वजनिक समीक्षा और पाठ्यक्रम विकास आदि के लिए भी मिल-बैठते हैं। यहाँ तक कि हमने कुछ पैसा भी जमा कर लिया जिससे जुलाई के महीने में सम्मिलित परियोजनाओं पर काम करने के लिए अध्यापकों को वृत्ति दी जा सके।

इसके अलावा यदि एक ही छात्र के साथ एक से अधिक अध्यापक काम कर रहे हों तो उनके आपस में मिलने के लिए भी हमने सप्ताह में तीन घण्टे का समय निकाल लिया है। ऐसा करने के लिए हमने कक्षा 7 से 10 तक के हर छात्र के लिए सामुदायिक सेवा के लिए बाहर जाना ज़रूरी कर दिया है। एक अध्यापक छात्रों को बाहर भेजने के लिए उत्तरदायी है। हमने इसे इस तरह नियोजित किया है कि हर दिन कम से कम 80 बच्चे बाहर जाएँ। इस व्यवस्था से अध्यापकों के समूहों को आधा दिन साथ गुज़ारने के लिए समय मिल जाता है। छात्र सुबह नौ बजे अपने सलाहकार के पास आते हैं और फिर अपने नियुक्त स्थान के लिए निकल जाते हैं। दोपहर

में वे लौटते हैं, भोजन करते हैं और भोजनोपरान्त गतिविधियों (जिम, पुस्तकालय आदि) के लिए चले जाते हैं। दोपहर एक बजे तक अध्यापक आपस में बातचीत करके आगे की योजनाएँ बना लेते हैं और छात्रों को डे-केअर (day-care) कक्षाओं से लेकर संग्रहालयों, चिकित्सालयों, वृद्धाश्रमों तक अनेक प्रकार की संस्थाओं में अपनी बुद्धि से काम करने का दुर्लभ अवसर प्राप्त हो जाता है।

दिन भर चलने वाली इन औपचारिक और अनौपचारिक बैठकों में ही कर्मचारियों का विकास सम्भव हो पाता है। यहीं नए अध्यापक अपने पेशे की बारीकियाँ समझ पाते हैं और वरिष्ठ अध्यापकों द्वारा पुराने सवालों पर नए दृष्टिकोण से विचार करना सम्भव हो पाता है। यदाकदा कोई न कोई ज़रूर शिकायत करता है कि वह थक गया है — इस तरह हम कभी-कभार कोई बैठक रद्द कर देते हैं — लेकिन हम ऐसा कभी नहीं कहते कि बस, बहुत हुआ, हम चुक गए। हमारे साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया जाता कि जैसे हम उपकरण हों; हमारा अपने व्यवसाय पर पूरा नियंत्रण है।

विद्यालय को इन्हीं रूबरू बैठकों के विभिन्न रूपों से संचालित किया जाता है। जहाँ भी सम्भव हुआ, निर्णय उन्हीं के द्वारा किए जाते हैं जिन पर उन्हें लागू करने की ज़िम्मेदारी है। लेकिन हर निर्णय में कर्मचारी समुदाय, अभिभावक और छात्र भी भागीदार होते हैं, और वे किसी भी समय किसी निर्णय पर पुनर्विचार करने, उसके बारे में स्पष्टीकरण देने या उसे पुष्ट करने के लिए कह सकते हैं। इन खुले और सुगम रास्तों पर चलकर कर्मचारी और छात्र लोकतंत्र की पेचीदगियों के बारे में सीखते हैं। वे लोकतंत्र की सीमाओं से भी परिचित होते हैं और संस्थागत लेनदेन की वास्तविकताओं से भी। और इस तरह वे सोच पाते हैं कि जो है कैसे उससे बेहतर किया जा सकता है। हम स्वयं निरन्तर यह सीखने की कोशिश करते रहते हैं कि बेहतर (और कम) शासन कैसे किया जाए — दिमाग की उन्हीं आदतों का इस्तेमाल करते हुए जिनकी शिक्षा हम बच्चों को देते हैं।

परिवर्तित अनुभूतियाँ

हम व्यक्तिगत पर लौटते हैं (भूतपूर्व किंडरगार्टन शिक्षक होने के नाते हम और कर भी क्या सकते हैं)। इसमें यह भी शामिल है कि बच्चों को परिवार का एक सदस्य समझा जाए और देखा जाए कि विद्यालयीन शिक्षण से स्वयं

के बारे में बच्चों की और परिवार की अनुभूतियाँ किस तरह बदली हैं। एक माँ ने अध्यापकों की एक सभा के समक्ष बताया कि इस प्रकार के विद्यालयीन शिक्षण ने उसके परिवार को बदल दिया है। हम अपने शिक्षण से क्या उम्मीद रखते हैं, यह इस माँ के शब्दों से पता चलता है:

> जैसे ही हम (हमारा परिवार) मार्गदर्शकों के एक सहयोगी समूह के समक्ष किए जाने वाले प्रस्तुतीकरण की प्रक्रिया से परिचित हुए, हम सब इससे जुड़ गए।
>
> मुझे याद है मेरी मँझली बेटी ज़वादी फिलिप पारनेल पर एक प्रस्तुतीकरण तैयार कर रही थी। फिलिप एक नवयुवक था जिसे न्यू जर्सी में एक पुलिस वाले ने गोली मार दी थी। मैं ज़वादी के साथ पुस्तकालय गई और वहाँ हमने काफी खोजबीन की। ज़वादी ने मुझे बता दिया था कि उसे किस तरह की जानकारी चाहिए थी।
>
> मेरा भाई न्यू यॉर्क शहर की पुलिस में है। ज़वादी ने उसका साक्षात्कार लिया। और इस तरह वह समझ पाई कि जब ऐसी कोई घटना घटती है तो पुलिस वाले किस तरह सोचते हैं। ज़वादी अपने प्रस्तुतीकरण में कोई पक्षपातपूर्ण या एकतरफा बात नहीं कहना चाहती थी...।
>
> मैंने उसे अपने प्रश्न बनाते हुए देखा। मैंने उसे लोगों से साक्षात्कार लेते हुए देखा। मैंने उसे वर्षों में संचित जानकारी के आधार पर एक नाटक बनाते हुए देखा, जिसके माध्यम से वह अपनी बात कहना चाहती थी।
>
> और फिर मैंने देखा कि उसके स्कूल के दोस्त हमारे घर आ रहे हैं। और वह उन्हें निर्देशित कर रही है। वह सबकी बात ध्यान से सुन रही है, भाँप रही है कि उन्हें कैसा लग रहा है, कि उनके साथ ऐसा हुआ होता तो वे कैसा महसूस करते।
>
> मेरा बेटा बचपन में तीन अलग-अलग राज्यों में रहा है। उसने ज़वादी को अपने बचपन के अनुभव बताए और बताया कि वह आज जो भी है उसमें इन अनुभवों का क्या हाथ है।
>
> उसका यह आत्मनिरीक्षण हम सबको अन्तर्दृष्टि देने वाला था। नस्लवाद के जो किस्से उसने बताए, उसकी बहनों ने उनकी पुष्टि की और फिर सारा परिवार उनके बारे में विचार-विमर्श करने लगा और हम सबको लगा कि यदि अपने क्रोध को

शक्ति बना लिया जाए तो कैसे यही घटनाएँ हमें मज़बूत बनाने वाली हो सकती हैं।

मेरी सबसे छोटी बेटी ने परिवार के इतिहास को लिखने का काम हाथ में लिया। यह काम करते-करते सम्पूर्ण संयुक्त राज्य और कैरीबियन का इतिहास भी सामने आ गया। उसे उस मौखिक इतिहास को एकत्रित और लिपिबद्ध करने के लिए काफी मेहनत और खोजबीन करना पड़ी जो मेरे लिए महत्वपूर्ण था, क्योंकि मैं बचपन से उसे सुनती आई थी, लेकिन जिसे लिख डालने का ख्याल मुझे कभी नहीं आया था। इस प्रक्रिया ने उसे यह काम कर डालने के लिए प्रेरित किया और इसके लिए उसे समय भी दिया। अब वह कोई यांत्रिक किस्म का काम नहीं कर रही थी, जैसा कि हमारे बच्चे करते रहते थे। उसकी बजाय वह एक सार्थक और महत्वपूर्ण काम में समय लगा रही थी, और इसे लेकर काफी उत्साहित थी।

प्रगतिशील शिक्षण का इतिहास ज़्यादातर छोटे बच्चों के विद्यालयों के गिर्द लिखा गया है, जैसे किंडरगार्टन, आरम्भिक शिक्षण केन्द्र, बाल निकेतन आदि। इसके प्रवक्ता भी वही पेशेवर लोग रहे हैं जिन्होंने छोटे बच्चों का अध्ययन किया और उनके साथ काम किया, जैसे कि मारिया मॉण्टेसरी, ज्याँ पियाजे, जॉन ड्यूई, लिलियन वेबर और बारबरा बाइबर, तथा अन्य अनेक अध्यापक जो इनसे पहले जा चुके थे। इन लोगों ने ऐसे विद्यालय निर्मित किए जिनमें छात्र जो पढ़ते थे उसका उनके जीवन से गहरा सम्बन्ध होता था और जहाँ काम करते-करते सीखने के पर्याप्त अवसर थे। सीपीईएसएस में हमारी सफलता उन्हीं संरचनाओं को बड़े बच्चों की संस्था में पुनर्सृजित करना और उनको लागू करके दिखाना है। यह हमारी चुनौती भी है।

हमने एक ऐसी संरचना निर्मित की है जिसमें छात्रों को ठीक तरह समझने की कला सीखना सम्भव है, ताकि छात्र अपने दिमाग का समुचित इस्तेमाल करना सीख सकें। हमने एक ऐसी संरचना निर्मित की है जिसमें अध्यापक अपने व्यावसायिक जीवन पर उत्तरदायित्वपूर्ण नियंत्रण रख सकें और जहाँ एक सशक्त व्यावसायिक समुदाय उनके समर्थन में खड़ा हो। हमने मूल्यांकन की एक ऐसी पद्धति निर्मित की है जिसके द्वारा मानकीकरण के बगैर भी छात्रों को उच्च स्तर पर बनाए रखा जा सके। हमने एक ऐसे पाठ्यक्रम की संरचना तैयार की है जो बच्चों के दिमाग को

सोचने की आदत डाले, न कि इस-उस सूचना से उसे भर दे। और यह तो चुनौती का सरल पक्ष है। कठिन पक्ष तो इसे सचमुच में सम्भव कर दिखाना है।

टिप्पणियाँ

1 अनिवार्य विद्यालयों का समूह विद्यालयों का एक राष्ट्रव्यापी संजाल है जो शिक्षण सम्बन्धी प्रगतिशील विचारों को अमल में लाने की कोशिश कर रहा है। इसमें विद्यालयों की भागीदारी स्वैच्छिक है और विद्यालय का नियंत्रण स्थानीय विद्यालय समुदाय के हाथ में ही रहता है। एडीसन प्रोजेक्ट या एजुकेशन ऑल्टरनेटिव्स इनकॉर्पोरेटेड (ईएआइ) जैसी निजी कम्पनियों ने भी मुनाफा कमाने के लिए विद्यालय खोल रखे हैं। इन लोगों ने भी अपना एक राष्ट्रव्यापी संजाल बना रखा है। लेकिन अनिवार्य विद्यालयों का समूह उससे भिन्न है। ईएआई का विचार आजकल इंग्लैण्ड में चल रहें"एजुकेशन एक्शन जोन्स" से मिलता-जुलता है। इन विचारों की अमरीका में व्यापक आलोचना हुई है और उन्हें पर्याप्त सफलता नहीं मिली है। ऐसे विचारों की अमरीका में हुई आलोचना के लिए देखें एलेक्स मोलनर (1996) की पुस्तक गिविंग किड्स द बिज़नेसः द कमर्शियलाइज़ेशन ऑफ अमेरिकाज़ स्कूल्स। ऑक्सफोर्डः वेस्टव्यू।

2 कारनेगी यूनिटें उच्च माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों से संचित राष्ट्रीय स्तर पर मानकीकृत राशियाँ हैं। इनका आधार छात्र द्वारा विषय-विशेष कोर्सों के अध्ययन के लिए दिया गया समय है। मसलन यदि कोई छात्र इतिहास में एक सेमिस्टर/टर्म उत्तीर्ण कर लेता है तो उसे आधा कारनेगी यूनिट मिलेगी। पूरे साल के लिए एक कारनेगी यूनिट मिलेगी। कई राज्यों और समुदायों में यह नियम है कि हाईस्कूल डिप्लोमा हासिल करने के लिए छात्र को एक संख्या विशेष में कारनेगी यूनिटें प्राप्त करना ज़रूरी है। इसके आलोचकों का कहना है कि कारनेगी यूनिटों का आधार मात्र उपस्थिति है, और वे पाठ्यक्रम में लचीलेपन को रोकती हैं।

3 लैरी रोज़ेनस्टॉक व एड्रिया स्टाइनबर्ग

कार्यशाला से आगे: व्यावसायिक शिक्षा का पुनराविष्कार

सम्पादकों की ओर से

अकादमिक शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा के पृथक्करण ने अनेक लोकतंत्र-विरोधी प्रवृत्तियों को बल प्रदान किया है। मसलन इसने रोज़मर्रा के जीवन से अलग “उच्च संस्कृति” के मैयार को कायम किया है। इसने युवाओं को भी दो खानों में बाँट दिया है। एक खाने में सामान्य घरों के या गरीब वे युवा जिनकी नियति ही मज़दूर या कारीगर बनना है और दूसरे खाने में वे सुविधा-सम्पन्न युवा जिन्हें विश्वविद्यालयों में जाकर अपना भविष्य बनाना है। इस अध्याय में रिंज स्कूल ऑफ टेक्निकल आर्ट्स, केम्ब्रिज, मेसाच्यूसेट्स के निदेशक लैरी रोज़ेनस्टॉक और इसी संस्था की अकादमिक समन्वयक एड्रिया स्टाइनबर्ग ने बताया है कि किस तरह एक विद्यालय अकादमिक शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा के द्वैत और उसके प्रभावों से परे चला गया है। रिंज के शिक्षकों ने लोकतंत्र को उपभोक्ता की पसन्द मानने के सरलीकरण को अस्वीकार किया और एक ऐसा कार्यक्रम विकसित किया जिसमें हर छात्र समुदाय की आवश्यकताओं पर आधारित किसी न किसी परियोजना में भाग लेता है। इससे अध्यापकों को पाठ्यक्रम सम्बन्धी महत्वपूर्ण निर्णय लेने की सुविधा प्राप्त होती है और समुदाय-केन्द्रित परियोजनाओं के माध्यम से अकादमिक शिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा से प्राप्त ज्ञान को समेकित करना सम्भव हो पाता है। यह कार्यक्रम बेशक बहुत सफल रहा, लेकिन इसकी आलोचना भी कम नहीं हुई। आलोचना करने वाले अधिकांश लोग वे थे जिन्हें पारम्परिक विद्यालयों में व्याप्त वर्गभेद से लाभ मिलता था।

व्यावसायिक शिक्षा एक मूलभूत अन्तर्विरोध से ग्रस्त रही है। एक तरफ इसे उन बच्चों को शिक्षित करने का तरीका माना जाता रहा है, और अब भी माना जाता है, जो अन्यथा स्कूल ही न आते। दूसरी तरफ इसने एक दोगली व्यवस्था पैदा की है जिसमें गरीब बच्चों को व्यावसायिक शिक्षा की तरफ धकेल दिया जाता है और साधन-सम्पन्न बच्चों को अकादमिक शिक्षा देकर उच्च शिक्षा और बेहतर नौकरियों के लिए तैयार किया जाता है।

रिंज स्कूल ऑफ टेक्नीकल आर्ट्स 1888 में आरम्भ हुआ था। यह मेसाच्यूसेट्स का पहला और संयुक्त राज्य अमरीका का दूसरा सार्वजनिक व्यावसायिक उच्च माध्यमिक विद्यालय था। इसके लिए धन एक स्थानीय उद्योगपति फ्रेडरिक रिंज ने दिया था। स्कूल के मुख्य द्वार पर ग्रेनाइट की एक पट्टिका पर खुदे हुए रिंज के उद्गार आज भी देखे जा सकते हैं: "हमारा सबसे बड़ा वरदान काम है। हर व्यक्ति के पास ईमानदारी से किया जाने वाला काम होना चाहिए।" फ्रेडरिक रिंज ने एक किस्म की लोकतांत्रिक प्रेरणा से यह काम किया, तथापि वह एक ऐसे तंत्र के विकास में सहायक हुए जो "छात्रों को उनकी प्रत्यक्ष और सम्भावित नियति के अनुसार छाँटती है" (कारनॉय व लेविन 1985, पृ. 94)।

रिंज की इस उदात्त पहल की बुनियाद मेसाच्यूसेट्स में पचास साल पहले ही पड़ गई थी जब होरेस मान के नेतृत्व में राज्य शिक्षा बोर्ड ने प्रतिपादित किया था कि सामान्य विद्यालय व्यवस्था को इस तरह विस्तारित किया जाना चाहिए कि इसमें हर पृष्ठभूमि के बच्चे आ सकें। स्थानीय बोर्डों की चिन्ता यह थी कि अनेक ग्रामीण और मज़दूर परिवार अब भी अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते थे। समाधान स्वरूप उन्होंने स्कूलों को ही दो भागों में बाँट दिया। कुछ विद्यालय व्यावसायिक विद्यालय बन गए जहाँ कृषि और यांत्रिकी से सम्बन्धित कार्यक्रम चलते थे। सोचा गया कि ग्रामीण छात्र और आयरलैण्ड से आ बसे परिवारों के बच्चे इन विद्यालयों में तो आएँगे ही।

1880 व 1890 तक उच्च माध्यमिक विद्यालयों को नए उद्योगों के लिए मझोले प्रबन्धक तैयार करने का उचित स्थल मानने की प्रवृत्ति ज़ोर पकड़ने लगी। व्यापारी वर्ग संगठित श्रम की शक्ति के प्रति सचेत था, इसलिए उसने विद्यालयों में ऐसे कार्यक्रम चालू करवाए जिनसे छात्रों में वांछित तकनीकी कौशल भी आए, साथ ही उन्हें नियोजक के प्रति वफादारी का पाठ भी पढ़ाया जा सके और औद्योगिक अर्थनीति के लिए

समाजीकृत भी कर दिया जाए। इस तरह मेसाच्यूसेट्स में पहली दोगली व्यवस्था अस्तित्व में आईः एक मझोले और उच्च प्रबन्धकों के निर्माण के लिए और दूसरी लिपिक वर्ग तथा मज़दूर तैयार करने के लिए।

कहा गया कि व्यावसायिक शिक्षा की प्रकृति संकुचित और उपयोगितावादी है। लेकिन इस आलोचना के बावजूद व्यावसायिक शिक्षा फैलती गई। इसे उत्पादकों के नवगठित राष्ट्रीय संघ का समर्थन प्राप्त था, हालाँकि संगठित श्रमिकों ने शुरुआत में इसका विरोध भी किया था। 1906 में औद्योगिक व तकनीकी शिक्षा के मेसाच्यूसेट्स कमीशन की एक रिपोर्ट प्रकाशित हुई। इस रिपोर्ट ने मेसाच्यूसेट्स शिक्षा आयुक्त डेविड स्नेडन और जॉन ड्यूई के बीच बहस छेड़ दी। जहाँ स्नेडन इस दोगली व्यवस्था की कार्यकुशलता के समर्थक थे, वहीं ड्यूई का सोचना था कि व्यापारी वर्ग द्वारा समर्थित पृथक व्यावसायिक शिक्षा "वर्ग विभेद की भावना पैदा करेगी और विद्यालयों को अलोकतांत्रिक समाज के निर्माण का माकूल उत्पादन स्थल बना देगी" (वेस्टब्रुक 1991, पृ. 175)। ड्यूई व्यावसायिक शिक्षा को लोकतंत्र के भविष्य के लिए केन्द्रीय मुद्दा मानते थे। उनका मत आज भी हमारे मस्तिष्क में विचारों की अनुगूँज प्रस्तुत करता हैः

> [व्यावसायिक शिक्षा का] सही विकास आज विचाराधीन किसी भी उपाय से कहीं अधिक सार्वजनिक शिक्षा को सच्चे अर्थों में लोकतांत्रिक बनाने में सहायक सिद्ध होगा। इसका गलत इस्तेमाल आज की परिस्थितियों में उपस्थित तमाम अलोकतांत्रिक प्रवृत्तियों को निश्चित रूप से बढ़ावा देगा। क्योंकि यह न सिर्फ कक्षाओं में बल्कि कक्षाओं से बाहर भी वर्ग विभेद को पुष्ट करेगा... जो लोग "निचले वर्ग" या "श्रमजीवी वर्ग" की चली आती धारणा को चिरन्तन मानते हैं, वे तो खुश ही होंगे कि विद्यालयों में भी इस वर्ग को अलग-थलग कर दिया गया है। और श्रमिकों के कुछ नियोजक भी खुश होंगे कि जनता के पैसे से चलने वाले स्कूल उनके कारखानों के लिए अतिरिक्त चारा जुटा रहे हैं... कर्मचारियों के प्रशिक्षण और नागरिकता के प्रशिक्षण के बीच, बुद्धिमत्ता व चरित्र की शिक्षा और संकीर्ण औद्योगिक कार्यक्षमता के लिए शिक्षा के बीच विभेद का प्रस्ताव चाहे जिस रूप में पेश किया जाए, [शेष सभी] लोगों को इसके विरुद्ध एकजुट हो जाना चाहिए।
>
> (ड्यूई 1993)

व्यावसायिक शिक्षा की दिशा के बारे में गहरी असहमतियाँ रही हैं, तथापि इसे व्यापक समर्थन मिला। नेशनल सोसायटी फॉर द प्रमोशन ऑफ इंडस्ट्रियल एजुकेशन (औद्योगिक शिक्षा संवर्धन राष्ट्रीय समिति) एक शक्तिशाली प्रभावकारी संगठन था और इसे विविध प्रकार के अनेक समूहों का समर्थन प्राप्त था। इनमें शिक्षाशास्त्री, व्यापार वाणिज्य संघ, उत्पादकों का राष्ट्रीय संघ, अमरीकी श्रमिक महासंघ, प्रमुख कृषि संघ और श्रमिक संघ शामिल थे। (व्यावसायिक शिक्षा की अपरिहार्यता को भाँपते हुए श्रमिक चाहते थे कि इसके यूनियन विरोधी पूर्वग्रह की दिशा बदलने में उनकी आवाज़ की भी भूमिका हो।)

इस अभियान की समाप्ति 1917 में स्मिथ-ह्यूज़ एक्ट बनने से हुई। इससे अब तक चली आ रही व्यावसायिक शिक्षा को केन्द्र का सहयोग प्राप्त हो गया। व्यावसायिक शिक्षा का मूलभूत अन्तर्विरोध पक्का हो गया। व्यावसायिक शिक्षा ने मेसाच्यूसेट्स के उच्च माध्यमिक विद्यालयों की छात्र संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि की थी। 14 से 17 वर्ष के आयु वर्ग में जहाँ 1888 में मात्र 6.7 प्रतिशत बच्चे स्कूल आते थे, वहीं 1906 में 32.3 प्रतिशत बच्चे स्कूल आने लगे (क्रुग 1969, पृ. 220, मेसाच्यूसेट्स कमीशन ऑन इंडस्ट्रियल एण्ड टेक्नीकल एजुकेशन की 1906 की रिपोर्ट को उद्धृत करते हुए)। लेकिन अब यह एक अलग, दूसरे दर्जे की व्यवस्था बन गई जिसका नियंत्रण भी अलग था। (ड्यूई की एकल व्यवस्था की वकालत को एक निष्प्राण-सी विजय मिली। व्यावसायिक शिक्षा को सार्वजनिक विद्यालयों में शामिल तो कर लिया गया, लेकिन मुख्य व्यवस्था की एक पृथक उपधारा के रूप में)।

व्यावसायिक शिक्षा का पृथक्करण आगे चलकर दो परस्पर सम्बद्ध कारकों की वजह से और भी मज़बूत हुआ। इनमें से पहला था 1923 का अनिवार्य शिक्षा कानून जिसके कारण स्कूल जाने को बाध्य अनेक बच्चे व्यावसायिक शिक्षा की तरफ आए। इसके साथ ही "बुद्धिमत्ता परीक्षा" (मसलन आइ.क्यू. और बिनेट) विकसित हुई और इसके आधार पर निर्णय किया जाने लगा कि कौन-सा बच्चा अकादमिक शिक्षा में जाएगा और कौन-सा व्यावसायिक शिक्षा में।

1990 में जब कार्ल डी. पर्किन्स का "वोकेशनल एजुकेशन एण्ड एप्लाइड टेक्नॉलॉजी एक्ट" मंज़ूर हुआ, व्यावसायिक शिक्षा के व्यापक पुनर्गठन के विचार पर बात करने के लिए कांग्रेस भी तैयार हो गई।

व्यावसायिक विद्यालयों से पढ़कर निकलने वाले छात्रों को बहुत कम नौकरियाँ मिल रही थीं और बहुत कम वेतन दिया जा रहा था। इस कारण उनमें व्यापक असन्तोष था। इसके अलावा सेन्टर फॉर लॉ एण्ड एजुकेशन के नेतृत्व में राष्ट्रीय समर्थन समूहों के संगठन का दबाव भी निरन्तर बढ़ता जा रहा था। इन दोनों के सम्मिलित प्रभाव ने परिवर्तन के पक्ष में वातावरण तैयार कर दिया।[1] जिस प्रकार का प्रशिक्षण व्यावसायिक शिक्षा के अन्तर्गत दिया जा रहा था उसके आधार पर यहाँ से निकलने वाले मात्र 27 प्रतिशत छात्रों को ऐसा काम मिल पाता था जिसका सम्बन्ध उनके प्रशिक्षण से हो (व्यावसायिक शिक्षा का राष्ट्रीय मूल्यांकन 1987)। अतः समय आ गया था जब चुनिन्दा पेशों के लिए सीमित प्रशिक्षण देने की बजाय व्यावसायिक शिक्षा का दायरा "उद्योग के सभी पहलुओं" तक बढ़ाया जाता।[2]

अपनी स्थापना के महज़ सौ वर्ष बाद एक बार फिर रिंज पर यह जवाबदारी आ गई थी कि वह व्यावसायिक शिक्षा को परिभाषित करने में मुख्य भूमिका निबाहे। हमारे पास अनुभवी अध्यापक थे, एक नए कार्यकारी निदेशक थे (ये थे लैरी रोज़ेनस्टॉक, जिन्होंने कभी रिंज में बढ़ईगिरी के अध्यापक के रूप में काम किया था और जो दो साल तक सेन्टर फॉर लॉ एण्ड एजुकेशन में स्टॉफ अटॉर्नी रहे थे), एक नई शैक्षणिक समन्वयक थीं (एड्रिया स्टाइनबर्ग), और हमें केम्ब्रिज पब्लिक स्कूल की अधीक्षक मेरी लाउ मेक्ग्राथ का पूरा समर्थन प्राप्त था। मेक्ग्राथ का अनुदेश था कि हम पर्किन्स एक्ट की अनुपालना के लिए कार्यक्रम को "पूरी तरह उलट-पुलट कर दें"। अब यह हमारा काम था कि हम रिंज में पर्किन्स की अलंकारिकता और ड्यूई के प्रगतिवाद को अमल में लाने के लिए अपने अध्यापकों की मदद कैसे करते हैं।

सिटीवर्क्स

लगता है कुछ लोगों को रिंज स्कूल ऑफ टेक्नीकल आर्ट्स से कुछ समस्या है। वे हमेशा इसे नीचा दिखाने की और हमें एक साँचे में ढालकर देखने की कोशिश करते रहते हैं ...। वे कहते हैं कि रिंज स्कूल के छात्र बुद्धू हैं, वे कभी महाविद्यालय तक नहीं पहुँच पाएँगे, सब के सब पढ़ाई छोड़कर बैठ जाएँगे आदि। मैं इसे और ज़्यादा बर्दाश्त नहीं कर सकती। ...मैं रिंज स्कूल में नई-नई हूँ, लेकिन मुझे विश्वास है कि मैं महाविद्यालय

में प्रवेश पाऊँगी। मेरा यह विश्वास रिंज स्कूल के अध्यापकों के कारण आया है। रिंज स्कूल के बच्चे कठिन परिश्रम करते हैं, वे उत्साह से भरपूर रहते हैं और उन्होंने शानदार प्रदर्शन किया है। हम सिर्फ दिमाग से ही नहीं, हाथ के काम में भी होशियार हैं। हमारे पास एक उन्नत तकनीकी मस्तिष्क और अकादमिक सूझबूझ है, या शीघ्र होगी... हम इज़्ज़त देते हैं, और इज़्ज़त पाना भी चाहते हैं। सफलता की यही शर्त होती है!

मार्च 1993 में पाउलिना मॉरस ने हमारे उच्च माध्यमिक विद्यालय के समाचार पत्र में यह बयान छपवाया। पाउलिना के गुस्से में हैरत की कोई बात नहीं है। केम्ब्रिज के समेकित उच्च माध्यमिक विद्यालय की व्यावसायिक शाखा में नवीं कक्षा की छात्रा होने के नाते पाउलिना व्यावसायिक शिक्षा और उसमें दाखिला लेने वालों को दिए जाने वाले निचले दर्जे से क्षुब्ध है।

ध्यान देने की बात है कि यह चौदह साल की बच्ची इस बारे में कुछ करना चाहती है। काश! सहभागितापूर्ण लोकतंत्र का हर सदस्य पाउलिना की तरह व्यवहार कर पाताः अन्यायपूर्ण लगने वाली हर चीज़ के विरोध में सार्वजनिक रूप से बोल पाता, वर्गीय पूर्वाग्रहों को चुनौती दे पाता, अपने आप में और अपने श्रमिक वर्ग के साथियों में विश्वास प्रदर्शित कर पाता और खुद को समुदाय का एक सदस्य समझ पाता।

हाथ के काम को दिमाग के काम से जोड़ने और इसके लिए कौशल विकसित करने की पाउलिना की धारणा सीधी उसके सिटीवर्क्स के अनुभवों से आई लगती है, जो रिंज में नवीं कक्षा का प्रमुख कार्यक्रम है। केम्ब्रिज वह "पाठ" है जिसमें छात्र अपने अड़ोस-पड़ोस का, प्रणालियों का, शहरी समुदाय के लोगों और उनकी आवश्यकताओं का अध्ययन करते हैं। छात्र अकेले और सम्मिलित रूप से विभिन्न परियोजनाओं पर काम करते हैं और नक्शों, फोटोग्राफों, टेपों, मौखिक इतिहासों, त्रि-आयामी मॉडलों आदि के माध्यम से अपने समुदाय के विभिन्न पहलुओं को कक्षा में लाते हैं।

अनेक कारणों से यह कार्यक्रम असाधारण है। पहला कारण तो यह है कि सिटीवर्क्स में व्यावसायिक कार्यक्रमों के मूलभूत गुणधर्मों — परियोजना का नज़रिया, उस्ताद-शार्गिद सम्बन्ध और वास्तविक ग्राहक — को अकादमिक शिक्षा की व्यापक अन्तर्वस्तु और आवश्यक कौशल से जोड़ दिया गया है। परियोजनाओं में हाथ का काम शामिल होता है, मसलन शहर का दीवार के आकार का नक्शा बनाना और उसमें खास-खास जगहों को बिजली से चमकाना। इसके साथ-साथ समस्या निवारण का काम भी

चलता रहता है। मसलन बच्चे तय करते हैं कि शहर के नक्शे में नए युवा केन्द्र को किस जगह रखा जाए कि उसके प्रति शहर की सभी जनजातियों और नस्ली समुदायों से युवा आकर्षित हो सकें।

दूसरी बात यह है कि सिटीवर्क्स की पढ़ाई ऐसी जगह होती है जो सामाजिक परियोजना कार्य के हिसाब से ही बनाई गई है। हमें न कक्षा जैसा कुछ चाहिए था, न कार्यस्थल जैसा, इसलिए हमने डिज़ाइन स्कूलों से "स्टूडियो" की अवधारणा उधार ले ली। एक बड़ा कमरा है जो छोटे-छोटे स्टूडियों में बँटा हुआ है और इनमें अध्यापक छात्रों के छोटे-छोटे दलों के साथ परियोजनाओं पर काम करते हैं। कमरे के एक तरफ काफी बड़ी खुली जगह है जो सामूहिक प्रदर्शनियों या प्रदर्शनों के काम आती है। इस इन्तज़ाम से सहभागियों को नए समूह बनाने, नए दल में घुस जाने या एक-दूसरे से औज़ार वगैरह लेने की छूट मिल जाती है।

तीसरी बात यह है कि छात्रों के प्रयासों को एक परिप्रेक्ष्य देने के लिए समुदाय के प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया जाता है। शहर की एजेंसियों व कार्यक्रमों से आने वाले अध्यापक समुदाय की उन आवश्यकताओं की पहचान करते हैं जिनकी पूर्ति अभी नहीं हो पाई है और जिसके बारे में छात्र कुछ कर सकते हैं। वे छात्रों द्वारा तैयार किए गए सामान व प्रस्तुतीकरणों के प्रामाणिक दर्शक होने की भूमिका भी अदा करते हैं।

छात्रों के काम की एक हालिया प्रदर्शनी में छात्रों के अनेक दलों ने केम्ब्रिज के लिए एक धरोहर संग्रहालय का रेखाचित्र नमूना पेश किया। यह संग्रहालय कहाँ बनना चाहिए और उसका रूपाकार कैसा होना चाहिए, इस बारे में छात्रों के हर समूह की अलग-अलग धारणा थी। अभिभावक, शहर के पदाधिकारी और स्थानीय व्यापारी प्रदर्शनी में आते-जाते रहे और संग्रहालय निर्माता अपने-अपने नमूनों के पास बैठकर उन्हें अपनी धारणाएँ समझाते रहे।

शहर की टूरिस्ट एजेंसी संग्रहालय के लिए धन संग्रह का काम कर रही थी और उसी के अनुरोध पर छात्रों ने ये नमूने बनाए थे। इस प्रदर्शन के छह सप्ताह पहले उनके निदेशक सिटीवर्क्स आए थे और उन्होंने छात्रों से सहयोग माँगा था। शहर में हर साल हज़ारों सैलानी आते हैं। छात्रों के लिए पर्यटन उद्योग को समझना ज़रूरी था और यदि वे शहर के निवासियों की ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए पर्यटन के विकास में किसी तरह सहायक हो सकें, तो इससे अच्छा क्या हो सकता था।

संग्रहालय निर्माताओं के अलावा छात्रों के अन्य अनेक समूहों ने इस बात पर विचार किया कि पर्यटकों को इस शहर में कहाँ-कहाँ जाना चाहिए और क्या-क्या देखना चाहिए। पर्यटन के वर्तमान परिपत्र में दर्शनीय स्थानों की सूची में "ओल्ड केम्ब्रिज" और हार्वर्ड विश्वविद्यालय को भी रखा गया है। छात्रों के एक दल ने इन्हें हटाकर अपने नए परिपत्र में ऐसी जगहों को रखा जिन्हें देखने में बाहर से आने वाले युवा अधिक रुचि लें। एक अन्य समूह में "मीठी यात्रा" का एक परिपत्र तैयार किया जिसमें बताया गया था कि शहर में अच्छी मिठाइयाँ कहाँ-कहाँ मिलती हैं। एक तीसरे समूह को एक "स्थानीय नायक" को प्रमुखता देने का विचार पसन्द आया। उन्होंने केम्ब्रिज एनएएसीपी के संस्थापक जॉन ई. गिटन्स का साक्षात्कार वीडियो टेप किया। उन्हें पता चला कि श्री गिटन्स ने पड़ोसियों की एक संस्था को संगठित कर इस बात का प्रयास किया था कि शहर में एक नया खेल का मैदान बनाया जाए और इस मैदान का नाम उस बच्चे के नाम पर रखा जाए जिसे एक कार ने कुचल दिया था जब वह सड़क पर खेल रहा था। बच्चों के इस समूह ने शहर के नक्शे पर इस खेल के मैदान को अपने परिपत्र में दिखाया और उसकी कहानी भी लिखी। शहर की पर्यटन एजेंसियों के बोर्ड ने इन तीनों परिपत्रों को अपना लिया है। उन्होंने उस टी-शर्ट को भी अपना लिया है जो छात्रों के एक चौथे समूह ने बनाई थी। अब ये चारों चीज़ें पर्यटन एजेंसियों द्वारा वितरित की जाती हैं और बेची जाती हैं।

सिटीवर्क्स का लक्ष्य छात्रों में अपने समुदाय और उसकी ज़रूरतों की समझ पैदा करना है। अन्ततः इसका लक्ष्य बच्चों को यह महसूस कराना है कि वे समुदाय को प्रभावित कर सकते हैं और उसमें रहने वालों या काम करने वालों के लिए तथा स्वयं अपने लिए भी नए अवसर पैदा कर सकते हैं। सामुदायिक विकास के चश्मे के माध्यम से छात्र व्यावसायिक शिक्षा के अर्थ को देखने की एक नई दृष्टि पाते हैं। मसला सिर्फ यह नहीं है कि छात्र कुछ बनाएँ, कुछ हुनर सीखें और कोई काम पा जाएँ। मसला यह है कि वे विचारवान बनें, मिलजुलकर समस्याओं को सुलझाना सीखें और भिन्न-भिन्न प्रकार के लोगों से सरलता से संवाद कर सकें।

विद्यालय में सहभागितापूर्ण लोकतंत्र की ओर

यदि पाउलिना ने रिंज में चार साल पहले प्रवेश किया होता तो उसका शिक्षण कार्यक्रम सिटीवर्क्स से काफी अलग होता। वह 1888 के कार्यक्रम जैसा होता जब रिंज खुला था। दरअसल इस देश के हज़ारों अन्य उच्च

माध्यमिक विद्यालयों में आज भी वैसा ही कार्यक्रम चल रहा हैः व्यावसायिक शिक्षा के नए छात्रों को विद्यालय में उपलब्ध सभी कार्य स्थलों – जैसे लोहारी (धातु कर्मशाला) और सुथारी (काष्ठ कर्मशाला) का "आरम्भिक" ज्ञान देना, जिसमें वे इनका मात्र जायज़ा लेते हैं। अध्यापक अपनी कक्षाओं या कार्यस्थलों में स्वयंभू की तरह एकान्तिक काम करते रहते हैं; छात्रों से कुछ खास उम्मीद नहीं रखी जाती और उन्हें बहुत ही कम या सरसरी अकादमिक शिक्षा दी जाती है।

यह व्यवस्था सौ साल से भी पहले औद्योगिक क्रान्ति के हिसाब से बनाई गई थी और तब से आज तक ज़रा भी नहीं बदली है। यह व्यवस्था इस पुरानी और अलोकतांत्रिक मान्यता पर आधारित थी कि गरीब परिवारों के 15 साल के बच्चों को पता होना चाहिए कि बड़े होकर वे क्या काम करेंगे (रोज़ेनस्टॉक 1991)। (हम में से कौन 15 साल की आयु में जानता था कि हम वह करेंगे जो आज कर रहे हैं?) संक्षेप में, नवीं कक्षा का शिक्षण कार्यक्रम एक द्वारपाल की तरह काम करता है जो सामाजिक वर्ग, नस्ल, लिंग और भाषिक क्षमता के आधार पर व्यावसायिक शिक्षा के लिए छात्रों की सख्ती से छँटनी करता है।

अमरीका के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में प्रचलित लोकतंत्र की उपभोक्तावादी मान्यता को हमने सिटीवर्क्स में पूरी तरह अस्वीकार कर दिया। इस मान्यता का सार यह है कि जिस विद्यालय में जितने ज़्यादा पाठ्यक्रम और कर्मशालाएँ हैं वह विद्यालय उतना ही ज़्यादा अच्छा है – चाहे ये पाठ्यक्रम और शालाएँ कितनी ही सतही और छात्रों को एक घिसी-पिटी लीक पर डालने वाली क्यों न हों। हमारा लक्ष्य एक अधिक सहभागितापूर्ण प्रकल्प तक पहुँचना था जिसमें अध्यापक विद्यालय के और बच्चों के सामूहिक हितों के लिए कार्य करते हैं; जहाँ छात्रों को अपनी शिक्षा और अपने समुदाय में सक्रिय रूप से सम्बद्ध किया जाता है; और जहाँ अभिभावकों और समुदाय के सदस्यों की विद्यालय के कार्यक्रमों में सक्रिय भूमिका होती है। हमें एक नया मिशन दिखाई दियाः व्यवसाय के तरीकों का – यानी अनुभवजन्य और परिप्रेक्ष्ययुक्त शिक्षण, गुट बनाकर सिखाना, सहकारी शिक्षण और निष्पादन मूल्यांकन का शिक्षा में उपयोग ताकि व्यावसायिक शिक्षा के छात्र वही बुनियादी और ऊँचे शैक्षणिक कौशल और आलोचनात्मक चिन्तन कौशल सीख पाएँ जो हर छात्र को भविष्य की पढ़ाई या काम के लिए सीखना ही चाहिए।

1990 में नवीं कक्षा का कार्यक्रम बनाने के लिए हमने सहभागितापूर्ण आयोजन प्रक्रिया विकसित की। ऐसा हमने कुछ सोचकर नहीं किया, बस हमें लगा कि ऐसा करके देखना चाहिए। उस समय हमें यह नहीं मालूम था कि सिटीवर्क्स बनाने की यह प्रक्रिया एक लोकतांत्रिक संस्कृति के निर्माण के लिए उतनी ही महत्वपूर्ण साबित होगी जितना कि शिक्षकों पर अपने प्रभाव की दृष्टि से स्वयं कार्यक्रम।

कार्यक्रम की पुनर्रचना के दौरान हमने तीन बातों का हर समय ध्यान रखा। पहली बात यह थी कि विभाग में हर व्यक्ति को पता होना चाहिए कि हम क्या कर रहे हैं। दूसरी बात यह कि अगर कोई इसमें सहभागिता न करना चाहे तो उसे इसके लिए बाध्य नहीं किया जाएगा। तीसरी बात यह कि जो सहभागिता नहीं कर रहे हैं उन्हें सहभागिता करने वालों के काम में दखल नहीं देने दिया जाएगा। जब पहली बार डिज़ाइन दल में भागीदारी के लिए लोगों को आमंत्रित किया गया, तो छह लोग आगे आए।

अध्यापकों के मार्गदर्शन में

1991 के मध्य तक सिटीवर्क्स का एक समग्र मूलभूत ढाँचा तैयार हो गया था। इसे लागू करने के लिए विद्यालय समय में से लगभग हर दिन अध्यापकों की बैठक के लिए समय निकालना था, और यह सिलसिला अभूतपूर्व तरीके से चला। हमें नए कार्यक्रम के लिए अलग से एक जगह बनानी पड़ी। जब सत्र आरम्भ हुआ तो कक्षाओं में पढ़ाए जाने के लिए सिर्फ एक महीने की सामग्री उपलब्ध थी। बाकी सामग्री सिटीटीम की बैठकों से आनी थी, और इन बैठकों में वे सारे अध्यापक भाग ले रहे थे जिन्हें इस पाठ्यक्रम को पढ़ाना था। सिटीवर्क्स का पूरा पाठ्यक्रम उपलब्ध न हो पाना घबरा देने वाला तो था, लेकिन हम यह भी जानते थे कि अध्यापकों को बना-बनाया पाठ्यक्रम देना एक भूल होगी।

छात्रों की ही तरह अध्यापक भी कोई खाली बर्तन नहीं हैं जिनमें वर्तमान विद्वता भर दी जाए। बरसों से रिंज में व्यावसायिक शिक्षा के अध्यापक अपना लगभग सारा समय छात्रों को व्यवसाय सम्बन्धी सीमित और तकनीकी किस्म की बारीकियाँ ही सिखाने में लगा रहे थे। उनमें से ज़्यादातर यह सोचते थे कि व्यावसायिक शिक्षा के अध्यापकों का बस यही तो काम है। राज्य की ओर से अनिवार्य किया गया पाठ्यक्रम इस धारणा को पुष्ट करता था। व्यावसायिक शिक्षा के अध्यापकों को नियमावली दी जाती थी जिसमें लिखा

होता था कि किस कार्यस्थल के अध्यापक के क्या कार्य और ज़िम्मेदारियाँ हैं। इन्हीं के अनुसार वे बच्चों से काम करवाते थे।

यदि हम अपने विद्यालय को एक ऐसा स्थान बनाना चाहते थे जहाँ सारे बच्चे लोकतांत्रिक संस्कृति के सक्रिय सहभागी बन सकें, तो एक ऐसा शिक्षण कार्यक्रम बनाना ज़रूरी था जिसमें अध्यापक भी इस संस्कृति के सक्रिय सहभागी बन सकते। हमें अध्यापकों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करना था कि वे वर्तमान परिपाटी के पीछे कार्यरत कारणों की खोज कर सकें और परिवर्तनशील आर्थिक-सामाजिक वास्तविकता के सन्दर्भ में उन पर पुनर्विचार कर सकें। दूसरे शब्दों में, हमें उनकी भावनाओं का सम्मान करना था और उन्हें "करने वालों" से आगे बढ़कर "सोचने वाले" भी बनने की गुंजाइश पैदा करना था।

हमें लगा कि रिंज के अध्यापक एक संज्ञानात्मक विसंगति का अनुभव कर रहे हैं। बेशक स्कूल के बाहर अपने काम और जीवन में जिस चीज़ को वे महत्वपूर्ण समझते थे उसमें से बहुत कुछ उस पाठ्यक्रम से बाहर था जिसे वे पढ़ा रहे थे। इस बात की तरफ तुरन्त हमारा ध्यान गया जब हमने रिंज स्कूल में बरसों से बढ़ईगिरी सिखाने वाले एक अध्यापक से खुलकर बात की। अनेक व्यावसायिक अध्यापकों की तरह, विद्यालय समय के बाद वह भी एक स्वतंत्र ठेकेदार की तरह काम करता था। उसने बताया कि उसके दोनों बेटे होशियार मिस्त्री हैं और वह चाहता है कि उसके बेटे उसका धन्धा सम्हाल लें। लेकिन दिक्कत यह थी कि ठेकेदारी के धन्धे में जो दूसरी बातें भी आना ज़रूरी हैं वे उन्हें नहीं आतीं थीं, मसलन काम का ठीक प्राक्कलन करना, टेण्डर भरना, आय-व्यय का हिसाब-रखना, उप-ठेकेदारों और ग्राहकों से ठीक ढंग से निपटना आदि। ये वे हुनर हैं जो व्यावसायिक विद्यालयों में शायद ही कहीं सिखाए जाते हों।

इस अध्यापक की अनुभव भरी बातों में काम के प्रति एक नए प्रकार की दृष्टि के बीज छिपे हुए थे। इसकी कक्षा के छात्रों को सिर्फ कील ठोंकना सीखने तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए था, बल्कि वह सब उससे सीखना चाहिए था जो एक अभिभावक, नागरिक और ठेकेदार के तौर पर वह सोचता था कि उसके बेटों को सीखना चाहिए।[3] हमारी चुनौती एक ऐसी व्यावसायिक संस्कृति का निर्माण करने की थी जो अध्यापकों को अपने अनुभवों को साझा करने और अपने काम के विषय में सोचने के लिए प्रोत्साहित करे। हमारी अनेक रणनीतियाँ इस प्रयास पर केन्द्रित रही हैं।

सामान्य आयोजन समय

सबसे बुनियादी तब्दीली जो हमने की वह यह है कि अध्यापकों को औपचारिक और अनौपचारिक रूप से एक-दूसरे के साथ काम करने का मौका दिया। सिटीवर्क्स में एक-दूसरे के साथ उनकी भौतिक निकटता संयुक्त परियोजनाओं की सम्भावना का द्वार खोलती है। सिटी टीम की रोज़ होने वाली बैठकें यह निश्चित कर देती हैं कि ऐसी सम्भावनाओं पर बातचीत होगी।

विद्यालय के दैनिक कामकाज के दरमियान बैठक करने के लिए ज़रूरी था कि कार्यस्थलों को थोड़ी देर के लिए बन्द कर दिया जाए। लेकिन यह न तो हमारे अध्यापकों को पसन्द आने वाला था न उच्च विद्यालय के दूसरे हिस्सों के उन सलाहकारों को जो बच्चों को इन कार्यस्थलों के लिए चुनकर भेजते थे। लेकिन हम जो कुछ करना चाह रहे हैं उसके लिए रोज़ बैठक करना बेहद ज़रूरी है। बैठक में ही हम इस बात पर विचार करते हैं कि सिटीवर्क्स में क्या चल रहा है, उसकी समीक्षा करते हैं, और शैक्षणिक गतिविधियों में परिवर्तन और सुधार प्रस्तावित करते हैं। वहाँ हमें एक-दूसरे को समझने का मौका मिलता है और सहयोग की सम्भावनाएँ बनती हैं।

"बाहरवालों" को शामिल करना

आरम्भ से ही सिटीवर्क्स में काम करने वाले व्यावसायिक शिक्षा के अध्यापकों का साथ विभिन्न प्रकार के बाहरी लोग देते रहे थे। ये अलग-अलग पृष्ठभूमि के लोग थे जो अपना परिप्रेक्ष्य और अनुभव रखते थे। इन "बाहरी" लोगों में अनेक अध्यापक, पोलेरॉयड कॉर्पोरेशन का एक कर्मचारी जिसकी सेवाएँ हमने ले रखी थीं, व दुभाषी तकनीकी सहायक आदि होते थे। इसके अलावा हमें जब ज़रूरत पड़ती हम पाठ्यक्रम सम्बन्धी कार्य के लिए या संगठनात्मक विकास के काम के लिए सलाहकारों की सेवाएँ भी लिया करते थे। हमारा ख्याल था कि अध्यापकों और छात्रों को विद्यालय के बाहर की दुनिया में ज़रूरी मानवीय सम्बन्धों को अनुभव करने और समझने का अवसर भी मिलना चाहिए।

इस प्रकार के सम्मिश्रण से हमें एक मंच मिल जाता है जहाँ हम अपनी धारणाओं की पुनर्परीक्षा कर सकते हैं। इससे छात्रों को अपने विषय या व्यवसाय में निपुणता प्राप्त करने में आगे बढ़कर उन चीज़ों को जानने-सीखने का भी मौका मिलता है जो विद्यालय से निकलने के बाद उन्हें करना पड़ेंगी। उदाहरण के लिए, एक कठिन अवसर पर जब कार्य की विशेषज्ञता के नाम पर

व्यावसायिक शिक्षा के अध्यापक संयुक्त परियोजनाओं का विरोध कर रहे थे, पोलेरॉयड कम्पनी के कर्मचारी ने बताया कि उसकी कम्पनी में तो हर आदमी को विभिन्न प्रकार के कार्य एक साथ करने पड़ते हैं, और उच्च निष्पादन वाली अन्य जगहों में भी ऐसा ही होता है।

सच्ची अन्तर्निर्भरता का निर्माण

पाठ्यक्रम का एकीकरण अपने आप में एक उद्देश्य होने के अलावा अध्यापकों के पारस्परिक सम्बन्धों को भी परिवर्तित कर देता है। अपने विषय या कार्यस्थल पर एकाकी अध्यापक जो छात्रों को लेकर कभी-कभी परस्पर प्रतिस्पर्धा में लगे रहते थे, अब मिलकर पाठ्यक्रम और अन्तरानुशासनिक परियोजनाएँ बनाते हैं। परिणामस्वरूप अब वे छात्र के और पूरे विद्यालय के समग्र निष्पादन पर अधिक एकाग्र हैं।

दैनिक बैठकें फलप्रद होती हैं। उन्हें वैसा होना ही पड़ता है। सब अध्यापकों को पता होता है कि अगले दिन (या अगले घण्टे) उन्हें सिटीवर्क्स में जाकर पढ़ाना है। हकीकत यह थी कि वे पार उतरते हैं तो एक साथ और डूबते हैं तो एक साथ। यदि कार्यक्रम सफल हो जाता है तो अन्ततः ज़्यादा बच्चे दाखिला लेंगे और व्यापक तबके तक विद्यालय की पहुँच बनेगी। अगर कार्यक्रम सफल नहीं होता तो रिंज में भी अध्यापकों की उसी तरह छँटनी होगी जैसी अन्य व्यावसायिक विद्यालयों में होती है। पुरानी संरचना की प्रतिस्पर्धा की नैतिकता आसानी से पीछा नहीं छोड़ती, लेकिन नई संरचना में यह उत्पादकता-विरोधी ही सिद्ध होती है। इसकी बजाय नए विचारों को समर्थन देना, उनके विकास में सहयोगी बनना तथा परियोजना सम्बन्धी नए सुझावों और नई रणनीतियों की एक-दूसरे से अपेक्षा रखना ज़्यादा समझदारी की बात मालूम होती है। रिंज में इस सहभागिता की भावना ने महाविद्यालयीनता का एक नया स्तर पैदा किया है। अब अध्यापक आपस में पढ़ाने के बारे में ज़्यादा बातें करते हैं। वे साथ बैठकर योजना बनाते हैं और शिक्षण सामग्री तैयार करते हैं। वे एक-दूसरे को ध्यान से देखते हैं और एक-दूसरे की मदद करने या मदद लेने को तैयार दिखाई देते हैं।

बदलती अपेक्षाएँ

औपचारिक बैठकों और अध्यापकों की अनौपचारिक आपसी बातचीत दोनों में परिवर्तन साफ दिखाई देने लगा है। सिटीवर्क्स की टीम बैठकों में

शुरुआत के कुछ महीनों में ऐसा होता था कि शिक्षण या अध्ययन सम्बन्धी किसी भी बात पर अपनी राय प्रकट करने से पहले अध्यापक एक झिझक ज़रूर दिखाते थे। मसलन, "मैं नहीं कहता कि यह सबके लिए ठीक होगा," या "मैं तो इसी तरह करता हूँ," या "मैं जानता हूँ हर एक का अपना-अपना तरीका हो सकता है, और इसमें कोई हर्ज़ भी नहीं है" वगैरह।

जितनी बार ऐसे शब्द काम में लाए जाते थे उतनी बार इससे यह संकेत मिलता था कि दल के सदस्य किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप से बचना चाहते थे: "मैं आपकी हरकतों को बहुत ध्यान से नहीं देखूँगा, न आपसे कहूँगा कि आपको क्या करना चाहिए, और आप भी मेरे काम की नुक्ताचीनी मत कीजिए" (लिटिल 1992, पृ. 49)। पारम्परिक विद्यालयों की एकान्तिकता और वहाँ का पढ़ाई का माहौल अपने काम के प्रति जैसा दृष्टिकोण बना देता है वह किसी समय के कारीगरों के उग्र स्वाधीनता भाव की याद दिलाने लगता है (ह्यूबरमेन 1989)। व्यावसायिक शिक्षकों के लिए यह दृष्टिकोण और भी मज़बूत हो जाता है क्योंकि विद्यालय के भीतर (और उसके बाहर भी कारीगरी का) उनका काम बेहद विशेषज्ञतापूर्ण होता है।

पहले कभी रिंज के अध्यापक अपने पेशों की भिन्नता के आधार पर अपने कार्यस्थल की एकान्तिकता को उचित ठहराते थे। हरेक पेशे के लिए कुछ खास कुशलताओं की ज़रूरत होती थी। कार्यस्थलों की स्वायत्तता न सिर्फ स्वाभाविक बल्कि व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यक शर्त लगती थी। इसका सबसे साफ दुष्प्रभाव अध्यापकों में छात्रों के लिए आपसी प्रतिस्पर्धा होता था। लेकिन इससे भी खराब बात यह होती थी कि अध्यापकों को छात्रों की व्यापक शैक्षणिक आवश्यकताओं से कोई लेना-देना ही नहीं होता था और न वे इस बारे में सिर खपाते थे। उनका पूरा ध्यान इस बात पर होता था कि कैसे छात्रों की रुचि एक खास तकनीकी क्षेत्र में पैदा की जाए। सभी छात्र समस्या सुलझाने में सक्षम बनें, या बेहतर संवाद कर सकें, या पढ़ने-लिखने तथा मात्रामूलक और वैज्ञानिक सोच में समर्थ हों, यह सुनिश्चित करना उन्हें अपनी ज़िम्मेदारी नहीं लगता था।

यह बताना तो सम्भव नहीं है कि किस क्षण यह दृष्टिकोण बदल गया, लेकिन दो साल की टीम बैठकों के बाद अब समूह के भीतर अधिक उत्तरदायित्व की भावना दिखाई दे रही है। अब अध्यापक जानकारियों का आदान-प्रदान करते हैं और छात्रों की क्षमताओं के विकास के बारे में

सोचते हैं, चाहे वे जिस भी कक्षा के या व्यवसाय के हों। अध्यापकगण समय-समय पर बहुकौशल परियोजनाओं के लिए सम्बद्ध होते हैं, और कभी-कभी वे ऐसी परियोजनाओं पर भी काम करते हैं जो उनकी विशेषज्ञता के क्षेत्र से ज़रा भी सम्बन्धित नहीं है।

सिटीवर्क्स की आयोजना के आरम्भिक चरणों में समूह अतार्किक निराशावाद ("ये कभी नहीं हो सकता!") और अव्यावहारिक अतिउत्साह ("अरे, समझो हो ही गया!") के बीच झूलता रहता था। लेकिन अब पुनर्गठन के काम को अध्यापकों द्वारा कमर कसकर जुट जाने की भावना से लिया जाता है। अब अस्पष्टता के प्रति हम सबमें प्रकट रूप से अधिक सहनशीलता का भाव है। अब लोग मुद्दों को बैठकों में उठाने लगे हैं ताकि सामूहिक प्रयास से समस्याओं को सुलझाया जा सके और अब हमने असहमतियों से ज़्यादा रचनात्मकता के साथ निपटना सीख लिया है।

साथ काम करने के लिए अध्यापकों के बीच एक साझा भाषा भी विकसित हो रही है और आसन्न संकटों से निपटने के लिए भी वे मिलकर काम करने लगे हैं। लेकिन शायद इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि जो हम बन सकते हैं और जो हमें बनना चाहिए उसकी अब हमारे सामने एक ज़्यादा साफ तस्वीर है। हम एक उच्च निष्पादन कार्यशाला बन सकते हैं जहाँ अध्यापक सघन रूप से परस्पर आश्रित हैं, तथापि उनमें से हर एक सक्रिय प्रतिभागी है जो अपनी सारी शक्ति अपने हाथ के काम पर लगा रहा है।

बैठकों में जितना समय लग रहा है और शिक्षकों के कार्य की जो तीव्रता है उससे कभी-कभी हम चिन्ता में पड़ जाते हैं कि कहीं हम बहुत अधिक वयस्क-केन्द्रित तो नहीं होते जा रहे हैं। विद्यालय समिति के एक सदस्य ने एक बार कहा, "मैं यह सुनते-सुनते तंग आ गया हूँ कि रिंज में अध्यापक बहुत प्रसन्न रहते हैं। बच्चे प्रसन्न रहते हैं या नहीं?" सौभाग्य से छात्र इस तरह नहीं सोचते लगते। जब नए छात्रों से पूछा जाता है कि रिंज में उन्हें क्या विशेष या ध्यान देने लायक लगता है तो उनमें से अधिकांश एक सरल-सा उत्तर देते हैं: "यहाँ अध्यापक सचमुच बच्चों का ध्यान रखते हैं।"

बेशक, अध्यापक हमेशा बच्चों का बहुत ध्यान रखते रहे हैं, लेकिन अब इस ध्यान रखने का दायरा बहुत बढ़ गया है, इसलिए वह बच्चों को भी नज़र आता है। पुराने ज़माने के तौर-तरीके में यदि छात्र तय न कर पा रहे हों कि वे क्या करना चाहते हैं या यदि वे एक पेशे के सारे हुनर सीखने

का उत्साह न दिखा पा रहे हों तो अध्यापक अपना धैर्य खो देते थे। उन्हें लगता था एक हुनरमन्द कारीगर की उनकी पहचान खत्म हो रही है और वे मात्र "पिछड़े हुए छोकरों को सम्हालने वाले" बनकर रह गए हैं (लिटिल 1992, पृ. 26)।

सिटीवर्क्स तथा अन्य समेकित कार्यक्रम अध्यापकों को एक नई पहचान देते हैं। यदि छात्र किसी खास पेशे में ज़्यादा दिलचस्पी न लें तो भी अध्यापकों को ऐसा नहीं लगता कि वे बच्चे सम्हालने वाले होकर रह गए हैं। वे जानते हैं कि वे छात्रों में ऐसी क्षमता, रुचियाँ और रुझान पैदा करने में सहायक हो सकते हैं जो आगे उनकी पढ़ाई में या काम में काफी काम आएँगे। अध्यापकों में मौजूद आत्मसम्मान की यह भावना छात्रों से भी छिपी नहीं रहती। हाल ही हमारे विद्यालय में एक संवाददाता आई और वह प्रथम वर्ष के अनेक छात्रों से यह सुनकर हैरान रह गई कि रिंज के अध्यापक औरों से इसलिए अलग हैं कि वे अपने काम को पसन्द करते हैं।

कोई ताज्जुब नहीं कि इसकी प्रतिक्रियास्वरूप छात्र विद्यालय से अधिक जुड़ाव का परिचय देते हैं। उनकी "रचनात्मक ऊर्जा" का प्रस्फुटन होता है और अध्यापकों को उनकी प्रतिभा का श्रेष्ठ रूप देखने को मिलता है। एक-दूसरे की फिक्र और परस्पर सम्मान की भावना कक्षा तक सीमित नहीं रहती। उदाहरण के लिए, गर्मियों में एक अध्यापक ने सिटीवर्क्स की पढ़ाई अभी-अभी पूरी कर चुके छात्रों को बुलाया कि वे आएँ और नए छात्रों के चयन में उनकी सहायता करें, कुछ नए तरीके इसके लिए सुझाएँ। और वे आए। हमारे विद्यालय का संक्षिप्त नाम आर.एस.टी.ए. (रिंज स्कूल ऑफ टेक्नीकल आर्ट्स) है। इसी की तर्ज़ पर उन्होंने अपना नाम भी आर.एस.टी.ए. (रिस्पॉन्सिबल स्टूडेण्ट्स टेक एक्शन, अर्थात ज़िम्मेदार छात्र काम करते हैं) रख लिया।

जब पाउलिना और उसके साथी रिंज में आए, उन्हें एक नई छात्र हैंडबुक मिली। इसमें वह सब बताया गया जो पुराने छात्र सोचते थे कि काश! कोई उन्हें बताता। और उन्हें तत्काल आर.एस.टी.ए छात्र मार्गदर्शकों का समर्थन और सहयोग मिला जिन्होंने हॉल में अपनी मेज़ लगा रखी थी। वहाँ अलमारी के जंग लगे तालों को ठीक करने से लेकर पुराने छात्रों द्वारा परेशान किए जाने तक हर समस्या का समाधान उपलब्ध था।

इन चीज़ों से प्रभावित होकर अध्यापकों ने ऐसे और भी नए-नए मंच बनाने शुरू कर दिए हैं जिनके माध्यम से छात्रों की भागीदारी और सुझावों के

लिए रास्ते खुलें। रिंज शायद अमरीका का एकमात्र ऐसा विद्यालय है जहाँ एक नवाचार परिषद् है और जिसमें छात्रों की उतनी ही सदस्य संख्या और वोट हैं जितने अध्यापकों के। 1991 में रिंज को फोर्ड फाउण्डेशन का नवाचार पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके तुरन्त बाद नवाचार परिषद की स्थापना की गई। स्थानीय और राज्य सरकार से राष्ट्रीय स्तर पर दस में से एक नवाचार छाँटा गया था, और इसके लिए 1700 से भी अधिक आवेदन प्राप्त हुए थे। सिटीवर्क्स को यह काम "बढ़ाने और गहरा करने" के लिए एक लाख डॉलर दिए गए।

अध्यापकों की सहमति से पुरस्कार की एक तिहाई राशि तीन साल की अवधि में छोटी-छोटी वृत्तियों के रूप में केम्ब्रिज के स्कूलों के अन्य नवाचारों के लिए रखने का निर्णय किया गया। ये सिटीवर्क्स के काम को ही आगे बढ़ाएँगे। इस प्रक्रिया के संचालन के लिए एक परिषद् गठित की गई जिसमें छात्रों और अध्यापकों का समान प्रतिनिधित्व था और अनेक स्थान समुदाय के प्रतिनिधियों के लिए सुरक्षित थे।

आरम्भ की कुछ बैठकों में परिषद् ने अपने लक्ष्य निर्धारित किए और अपनी प्राथमिकताएँ तय कीं। बैठकों में छात्र खुलकर बोल रहे थे। मसलन वे इस बात पर ज़ोर दे रहे थे कि प्रत्येक प्रस्ताव कम से कम एक छात्र और एक अध्यापक द्वारा रखा जाए और प्रस्ताव में यह बात साफ की जाए कि छात्र इस कार्यक्रम के साथ किस-किस तरह से जुड़ा हुआ रहेगा।

वर्ष के मध्य तक समूचे ज़िले से परिषद् के सदस्यों को लगभग दो दर्जन प्रस्ताव प्राप्त हो गए थे जिनका अध्ययन और मूल्यांकन चल रहा था। अन्तिम दौर में पहुँचे प्रस्तावों को चुनने और प्रस्तावकों का साक्षात्कार लेने के बाद परिषद् ने नौ विजेताओं का चयन किया। इनमें नए छात्रों द्वारा चलाए जाने वाले रेडियो स्टेशन से लेकर द्विभाषी छात्रों के लिए गर्मियों में विशेष कक्षाएँ चलाने तक के प्रस्ताव थे। जब अध्यापकों और सहपाठियों ने पूछा कि रिंज स्कूल के अपने कार्यक्रमों और परियोजनाओं पर ज़्यादा पैसा क्यों नहीं खर्च किया गया तो कई छात्र बड़े आवेग से बोले कि वे व्यावसायिक कार्यक्रम की एकान्तिकता को समाप्त करना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि यह राशि ज़िले के सारे छात्रों व अध्यापकों को कन्धे से कन्धा मिलाकर नए तरीके अपनाने के लिए प्रोत्साहित करने के काम आए। पाउलिना ने अपने बयान के अन्त में जो कहा था, छात्रों की यह आशा उसी को प्रतिध्वनित करती है। उसने कहा थाः "हम सम्मान देते हैं, इसलिए सम्मान की अपेक्षा भी करते हैं। सफलता के लिए यह ज़रूरी है!"

बदलाव को खुले मैदान में लाना

विद्यालय सुधार के प्रयास में रत शिक्षाशास्त्री अक्सर अपनी गतिविधियों के गिर्द एक सुरक्षात्मक दीवार जैसी खड़ी कर लेते हैं। उन्हें लगता है कि यदि वे ऐसा नहीं करेंगे तो अभिभावक, और विद्यालय बोर्ड के सदस्य तक, उन पर यह इल्ज़ाम लगाएँगे कि तुम "हमारे बच्चों पर प्रयोग कर रहे हो"। हालाँकि कुछ समय तक अलग-थलग रहकर काम करना सम्भव तो है लेकिन लम्बे समय तक काम करने के लिए ज़रूरी है कि विशेष लोगों को सन्तुष्ट और आश्वस्त किया जाए और अपने कार्य की अपरिहार्यता सिद्ध की जाए। यही अपने काम का असली बचाव है।

रिंज में किए गए परिवर्तन कभी गुप्त नहीं रहे। छात्रों और अध्यापकों ने आमंत्रित अभिभावकों के समक्ष इस बारे में अपने विचार रखे हैं, सभी कनिष्ठ विद्यालयों में जाकर उन्होंने इस विषय पर भाषण दिए हैं, और छात्रों की कृतियों की प्रदर्शनियों में सैकड़ों लोगों को आमंत्रित किया है। व्यापक समुदाय ने सिटीवर्क्स में जो दिलचस्पी दिखाई है उसने हमारे अध्यापकों को यह नया कार्यक्रम ठीक तरह से चलाने और उसके बारे में दूसरों को ठीक तरह से बताने के लिए प्रेरित किया है।

जो कुछ हम कर रहे हैं उसके खुलेपन ने कुछ स्थानीय राजनीतिक समस्याएँ पैदा की हैं। अभिभावकों के एक छोटे लेकिन मुखर मण्डल के पक्ष में बोलते हुए विद्यालय बोर्ड के एक सदस्य ने रिंज पर आक्षेप किया कि वह मज़दूर वर्ग के बच्चों को उदार कलाएँ सिखा रहा है, जबकि उन्हें हाथ के काम के प्रशिक्षण की "ज़रूरत" हैं, और इस तरह वह उन्हें गुमराह कर रहा है। यह हमला स्थानीय समाचार पत्र में सम्पादक के नाम पत्र लिखकर किया गया, विद्यालय समिति के समक्ष रिंज के क्षुद्र मामलों में रोड़े अटकाकर भी किया गया, और यहाँ तक कि छात्रों को उकसाया गया कि वे रिंज छोड़कर पड़ोस के व्यावसायिक विद्यालय में दाखिला ले लें। लगातार तीन साल तक सरकारी ऑडिट के लिए आग्रह किया गया और एक बार तो यह कोशिश भी की गई कि हमारा कार्यक्रम अप्रमाणित हो जाए।

अब तक ऐसे आक्रमणों ने हमारा काफी समय और ऊर्जा ली है, लेकिन इन्होंने अध्यापकों, छात्रों और अभिभावकों को कार्यक्रम के पीछे मज़बूती से खड़ा भी किया है। सौभाग्य से हमें अपने काम पर बहुत सकारात्मक प्रतिक्रियाएँ भी मिलती हैं, अपने ज़िले के लोगों से भी और देश के अन्य स्थानों से भी। जैसे-जैसे पर्किन्स एक्ट के प्रति जागरूकता बढ़ी है, हमारा

कार्यक्रम देखना चाहने वालों या हमारे अध्यापकों को अपने यहाँ बुलाना चाहने वालों की संख्या भी बढ़ी है। वास्तव में यह माँग इस कदर बढ़ गई कि हमें इससे निपटने के लिए विशेष व्यवस्था करना पड़ी। हमने सेन्टर फॉर लॉ एण्ड एजुकेशन के साथ मिलकर द हैण्ड्स एण्ड माइण्ड्स कोलेबोरेटिव का औपचारिक गठन किया। इसके लिए हमें ड्यूइट वॉलेस-रीडर्स डाइजेस्ट फाउण्डेशन और मॉट फाउण्डेशन से वित्तीय सहयोग प्राप्त हुआ।

अन्य अध्यापकों और अन्य विद्यालय व्यवस्थाओं के साथ सम्पर्क से हमारे अध्यापकों को बड़ा फायदा हुआ है। दूसरे विद्यालयों के अध्यापकों की टिप्पणियों, प्रश्नों और सुझावों से हमारे अध्यापकों को अपने द्वारा तय किए गए फासले को मापने का मौका मिलता है। इससे अन्य अध्यापकों तथा व्यावसायिक शिक्षा के अध्यापकों के बीच जो "सामान्य शारीरिक, सामाजिक और शैक्षणिक अलगाव" है वह भी कम हो सकता है (लिटिल 1992, पृ. 6)।

जून 1993 में सेन्टर फॉर लॉ एण्ड एजुकेशन, मेसाच्यूसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी और द हैण्ड्स एण्ड माइण्ड्स कोलेबोरेटिव के संयुक्त तत्वावधान में एक राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ। इसमें रिंज के एक दर्जन अध्यापकों ने वर्कशॉप मार्गदर्शकों का काम किया। इन लोगों का काम लगभग दो सौ प्रतिभागियों की ऐसी परियोजनाएँ बनाने में मदद करना था जिनसे वे अपने विद्यालयों में पर्किन्स एक्ट को लागू कर सकें। अन्तिम सत्र में अनेक अध्यापकों ने कहा कि पेशेवराना प्रशिक्षण में बहुत वक्त बर्बाद होता है। इस पर रिंज के विद्युत व्यवसाय अध्यापक टॉम लिविडोटी बोले, "पहले मैं भी ऐसी ही बातें करता था। सबसे ज़्यादा मैं ही कहता था कि विद्युत कार्यस्थल को बहुत कम समय मिल रहा है। लेकिन जो कुछ हम लोग अब कर रहे हैं उससे छात्रों की ऐसी रचनात्मक प्रतिभा उभरकर आ रही है जिसका हमें ज़रा भी गुमान नहीं था। पढ़ाई में भी वे कल्पनातीत तरक्की कर रहे हैं। हो सकता है कि हम दूसरे साल में एपरेंटिस इलेक्ट्रिशियन तैयार न कर पा रहे हों, लेकिन मैं जानता हूँ कि हम बेहतर हरफनमौला छात्र बना रहे हैं।"

सिटीवर्क्स कार्यक्रम के साथ जुड़े अकादमिक अध्यापकों के पास भी अपने सहकर्मियों को बताने के लिए बहुत सारी बातें हैं। 1993 के वसन्त में सिटीसिस्टम्स के एक अध्यापक अलिफ मोहम्मद ने केम्ब्रिज अध्यापकों के लिए कार्यशाला की एक Üृंखला आयोजित की जिसका नाम था

"गणित और विज्ञान में फिर से काम करो"। रिंज मानविकी दल के एक सदस्य रॉब रिऑर्डिन ने हाल ही अमेरिकन काउन्सिल ऑफ लर्नेड सोसायटीज़ द्वारा प्रायोजित एक राष्ट्रीय बैठक में मानविकी के अध्यापकों और अध्येताओं को सम्बोधित करते हुए कहा थाः "मैंने इस वर्ष की शुरुआत यह सोचकर की थी कि मेरा ध्येय व्यावसायिक शिक्षा में मानविकी को लाना है। लेकिन अब मुझे विश्वास हो गया है कि हमें मानविकी में व्यावसायिक पद्धतियों को लाना होगा।"

शेष संशय और चुनौतियाँ

जब हमने अपनी पुनर्रचना का कार्य आरम्भ किया हम जानते थे कि हम अपने विद्यालय को सभी स्तरों पर लोकतांत्रिक बनाना चाहते हैं। इसमें प्रशासन और कर्मचारियों के बीच का सम्बन्ध समतामूलक होगा और निर्णय लेने की प्रक्रिया में अध्यापकों की सार्थक भागीदारी होगी। अध्यापकों के आपसी सम्बन्ध लोकतांत्रिक होंगे, अर्थात अध्यापकों के लिए अपनी भूमिका को नया रूप देने का अवसर सुलभ होगा, वे दल के रूप में पढ़ाएँगे और नियमित रूप से मिलकर योजना बनाएँगे। अध्यापकों और छात्रों के बीच के सम्बन्ध भी लोकतांत्रिक होंगे, अर्थात् अध्यापक दूरस्थ व्याख्याता की बजाय प्रशिक्षक और सलाहकार की तरह काम करेंगे।

कार्यप्रणाली और पाठ्यक्रम भी लोकतांत्रिक होगा, अर्थात् हम साँचे नहीं बनाएँगे और इसलिए सभी छात्रों से हमारी समान रूप से उच्च अपेक्षाएँ होंगी। हम अपने मूल्यांकन को छात्र द्वारा निर्मित परियोजनाओं पर केन्द्रित रखेंगे न कि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा पर। विद्यालय और समुदाय के बीच के सम्बन्ध भी लोकतांत्रिक होंगे, अर्थात् हम अपने छात्रों को समुदाय की वास्तविक आवश्यकताओं की पहचान करने और उनकी पूर्ति के लिए क्रियाशील होने का समुचित अवसर प्रदान करेंगे। और अन्त में हम अपने भौतिक पर्यावरण को — अपने कार्यस्थल को — जितना लोकतांत्रिक बनाना सम्भव होगा बनाने की कोशिश करेंगे। अमरीकी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के भवन आम तौर पर औद्योगिक कारखानों जैसे लगते हैं, और सामूहिक कार्य में "बाधक जैसे" होते हैं। इसके बरक्स हम अपने विद्यालय को खुले स्थानों से भरपूर बनाएँगे, ऐसे नूमने का जो हमारे लोकतांत्रिक ध्येय को आगे बढ़ाए।

लेकिन फिर भी व्यावसायिक शिक्षा की बुनियादी पहेली अब भी पूरी तरह

सुलझ नहीं पाई है। बहुत से लोग अब भी सोचते हैं कि व्यावसायिक शिक्षा गरीब बच्चों के लिए उपयुक्त है और उसमें फालतू का तामझाम नहीं होना चाहिए। जबकि हम ड्यूई से सहमत हैं जिनका कहना है कि व्यावसायिक शिक्षा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा का कायान्तरण करने का माध्यम है और इसकी सहायता से ऐसे विद्यालय बनाए जा सकते हैं जहाँ का हर छात्र "होशियार" हो।

रिंज के हमारे अनुभव का सबसे विचलित करने वाला पहलू है लोगों की सोच में स्थायी वर्गीय पूर्वाग्रह, जिसके चलते समुदाय के सदस्य यह मानते हैं कि किसे व्यावसायिक शिक्षण कार्यक्रम में जाना चाहिए और किसे नहीं, और जिसे जाना चाहिए उसे वहाँ जाकर क्या करना चाहिए। एक आलोचक ने हम पर यह टिप्पणी की कि रिंज "कारीगर नहीं, नवजागरण व्यक्ति बना रहा है"। कहना न होगा कि अपनी स्वयं की बेटियों के लिए उसने क्या पसन्द किया, लेकिन इसके बावजूद वह इस बात पर अड़ा हुआ था कि गरीब छात्रों के लिए छोटी-मोटी कारीगरी सीखना काफी है।

इस पूर्वाग्रह की जड़ें हमारे विद्यालयों की अन्तर्विरोधपूर्ण उत्पत्ति में निहित हैं, और केम्ब्रिज में या कहीं भी यह आसानी से मिटने वाला नहीं है। यहाँ तक कि ड्यूई ने भी इस पूर्वाग्रह के बारे में लिखते हुए व्यंग्यपूर्वक कहा था, "जब हम कुछ सफल नेताओं को यह कहते सुनते हैं कि जैसी सम्पूर्ण शिक्षा उनके बच्चों को सहज रूप से प्राप्त हो रही है, वैसी ही शिक्षा जनता के खर्चे पर सबको देने की कोशिश अलोकतांत्रिक है, तो मैं समझता हूँ कि शिक्षा के इतिहास में इससे ज़्यादा मार्मिक बात कोई नहीं हो सकती" (वेस्टब्रुक 1991, पृ. 178)। तत्वतः रिंज के प्रयोग से जो हासिल करने की कोशिश की गई है वह है "शिक्षा को कार्य प्रशिक्षण तक घटा देने का प्रतिवाद" (डेविस तथा अन्य 1989, पृ. 109) क्योंकि यह "गरीब छात्रों के लिए उच्च स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के रास्ते में और अवरोध खड़े कर देता है" (रोज़ेनस्टॉक 1992)। रिंज प्रयोग ने कोशिश की कि सभी छात्रों के लिए रचनात्मक बौद्धिक कार्य के दायरे को बढ़ाया जाए।

टिप्पणियाँ

1 सेन्टर फॉर लॉ एण्ड एजुकेशन केम्ब्रिज, मेसाच्यूसेट्स, और वॉशिंगटन, डीसी में स्थित है। यह सारे अमरीका में निम्न आय वर्ग के छात्रों और अभिभावकों के लिए शिक्षा के

अधिकार की वकालत करता है। केन्द्र के संयुक्त निदेशक पॉल वेकस्टाइन पर्किन्स एक्ट के अनुगमन में नई दिशाओं के प्रमुख अन्वेषक और समर्थक थे।

2 पर्किन्स एक्ट इस बात को अनिवार्य बनाता है कि व्यावसायिक शिक्षा के सभी "छात्र उस उद्योग के सभी पहलुओं की समझ और ज़ोरदार अनुभव हासिल करें जिसमें जाने की वे योजना बना रहे हैं। इन पहलुओं में वित्त, आयोजना, प्रबन्धन, तकनीक के मूल सिद्धान्त और उत्पादन कौशल, श्रम सम्बन्धित मुद्दे, समुदाय के मुद्दे, स्वास्थ्य तथा सुरक्षा सम्बन्धी मुद्दे और पर्यावरण सम्बन्धी मुद्दे शामिल हैं"।

3 "सबसे बुद्धिमान और श्रेष्ठ अभिभावक अपने खुद के बच्चे के लिए जो चाहते हैं, समुदाय को अपने सभी बच्चों के लिए उसी की इच्छा करनी चाहिए"। जे. ड्यूई (1990) द स्कूल एण्ड सोसायटी, पृ. 7। शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।

4 एसेम्बली लाइन स्थापत्य एसेम्बली लाइन पद्धतियों और पाठ्यक्रम द्वारा समर्थित है। देखें ए. स्टाइनबर्ग (1993) बियॉण्ड द एसेम्बली लाइन,द हार्वर्ड एजुकेशन लैटर9 (2):1.

सन्दर्भ

कारनॉय, एम. और लेविन, एच. (1985) स्कूलिंग एण्ड वर्क इन द डेमोक्रेटिक स्टेट। स्टेनफोर्ड, सीए: स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

डेविस, जे., हुओट, जे., जेक्सन, एन., जॉनस्टन, आर., लिटिल, डी., मारटेल, जी., मॉस, पी., नोबेल, डी., टर्क, जे. और विल्सन, जी. (1989) इट्स अवर ओन नॉलेज। टोरोन्टो: ओन्टारियो फेडरेशन ऑफ लेबर कॉन्फ्रेन्स ऑन एजुकेशन एण्ड ट्रेनिंग।

ड्यूई, जे. (1993) सम डेन्जर्स इन द प्रेज़ेन्ट मूवमेन्ट फॉर इंडस्ट्रियल एजुकेशन। जे. बॉयड्स्टोन द्वारा सम्पादित द मिडिल वर्क्स: *1899-1924* से। कार्बनडेल: सदर्न इलिनॉय यूनिवर्सिटी प्रेस।

ह्यूबरमैन, एम. (1989) द मॉडल ऑफ द इंडिपेंडेन्ट आरटीसन इन टीचर्स प्रॉफेशनल डेवलपमेंट। जे. डब्ल्यू. लिटिल और एम. डब्ल्यू. मेकलॉलिन द्वारा सम्पादित टीचर्स वर्क : इंडीविजुअल्स, कॉलीग्स एण्ड कॉन्टेक्ट्स से। न्यू यॉर्क: टीचर्स कॉलेज प्रेस।

क्रुग, ई . (1969) द शेपिंग ऑफ द अमेरिकन हाईस्कूल,*1880-1920*। मेडिसन: यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कॉन्सिन प्रेस।

लिटिल, जे. डब्ल्यू. (1992) वर्क ऑन द मार्जिन्स: द एक्सपीरियंस ऑफ वोकेशनल टीचर्स इन कम्प्रीहेन्सिव हाईस्कूल्स। बर्कले: नेशनल सेन्टर फॉर रिसर्च इन वोकेशनल एजुकेशन।

नेशनल असेसमेंट ऑफ वोकेशनल एजुकेशन (1987) वॉशिंगटन, डीसी: यूनाइटेड स्टेट्स डिपार्टमेंट ऑफ एजुकेशन।

रोज़ेनस्टॉक, एल. (1991) द वॉल्स कम डाउनः द ओवरड्यू रीयूनिफिकेशन ऑफ वोकेशनल एण्ड एकेडेमिक एजुकेशन।फाई डेल्टा कप्पन 72 (6): 434-36.

रोज़ेनस्टॉक, एल. (1992) ईज़िंग स्टूडेंट्स प्रेशर टु प्रिडिक्ट द फ्यूचर [सम्पादक के नाम पत्र] न्यू यॉर्क टाइम्स, 10 दिसम्बर, पृ. 20.

वेस्टब्रुक, आर. (1991) जॉन ड्यूई एण्ड अमेरिकन डेमोक्रेसी। इतहाका, न्यू यॉर्कः कॉरनेल यूनिवर्सिटी प्रेस।

4 बॉब पीटरसन

ल इस्कूला फ्रेटनीः लोकतंत्र की ओर एक यात्रा

सम्पादकों की ओर से

लोकतांत्रिक विद्यालयों के पक्षधर लम्बे समय से कहते आ रहे हैं कि सार्थक और दीर्घजीवी परियोजनाएँ अक्सर निचले स्तर से, शिक्षाशास्त्रियों, अभिभावकों तथा अन्य नागरिकों के स्थानीय विद्यालय के स्तर पर परस्पर सहयोग से आरम्भ होती हैं। इस अध्याय में पाँचवीं कक्षा (*10-11* वर्ष के बच्चों की कक्षा) के अध्यापक बॉब पीटरसन बता रहे हैं कि केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकारियों की आपत्तियों और अवरोधों के बावजूद कैसे प्रगतिशील अध्यापकों और अभिभावकों के एक दल ने विसकॉन्सिन के मिल्वॉकी नामक स्थान पर एक दुतरफा द्विभाषी बुनियादी विद्यालय स्थापित किया। यह विद्यालय खासकर अपने द्विभाषी कार्यक्रम, बहुसांस्कृतिक और नस्लवाद विरोधी पाठ्यक्रम तथा अपने सहकारी संचालन के लिए जाना जाता है। लेकिन इसके अतिरिक्त वहाँ कुछ प्रगतिशील प्रणालियाँ भी अपनाई गई हैं, जैसे सम्पूर्ण भाषिक साक्षरता शिक्षण, सामुदायिक शिक्षण और समस्या आधारित पाठ्यक्रम का प्रयोग। पीटरसन सहित यहाँ के अनेक अध्यापक "रीथिंकिंग स्कूल्स" (विद्यालयों के बारे में पुनर्विचार) से अपनी सम्बद्धता के लिए भी जाने जाते हैं। रीथिंकिंग स्कूल्स प्रगतिशील शिक्षा का एक सहभाग है जो सारे देश में वितरित होने वाले इसी नाम के एक समाचार पत्र को भी प्रायोजित करता है।

यह विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत किया जाने वाला एक सामान्य अभिनय कार्यक्रम था जिसके बाद इस पर समूह चर्चा होनी थी। छात्र ऐसी गतिविधियों में भाग लेने के अभ्यस्त थे। लेकिन, जैसा कि अक्सर होता

है, मेरे पाँचवीं कक्षा के छात्रों ने मुझे हैरान कर दिया। जब गिलबर्टो, हुआन और कार्लोस मंच पर आए, मुझे पता था कि वे भेदभाव के किसी पहलू पर अभिनय करके दिखाएँगे, क्योंकि आज का विषय भेदभाव ही था। लेकिन मैं और कक्षा के अन्य छात्र यह देखकर दंग रह गए कि गिलबर्टो और हुआन दो समलैंगिक व्यक्तियों का अभिनय कर रहे हैं जो कार्लोस के पास किराये का मकान माँगने जाते हैं, और कार्लोस, जो कि मकान मालिक है, उन्हें किरायेदार बनाने से इन्कार कर देता है।

मैं कुछ तो इसलिए हैरान था कि पिछली बार जब हमने भेदभाव पर खुलकर बहस की थी तो किसी ने समलैंगिकों के साथ भेदभाव का ज़िक्र तक नहीं किया था। दूसरे, मेरे छात्रों ने पहले ही दिखा दिया था कि वे समलैंगिकता के विरुद्ध प्रचलित पारम्परिक मान्यता के पूरी तरह पक्ष में हैं। लेकिन अब गिलबर्टो, हुआन और कार्लोस अपनी मर्ज़ी से इस प्रकार का अभिनय कर रहे थे और इसके द्वारा नस्ल के आधार पर भेदभाव की हमारी बातचीत को सेक्स के आधार पर भेदभाव में रूपान्तरित कर रहे थे।

इनके अभिनय पर पहले तो ठहाके लगे और हूटिंग हुई, लेकिन फिर छात्रों ने उनके प्रदर्शन को ध्यान से देखा और सुना। कार्यक्रम के बाद मैंने कक्षा में पूछा कि कार्यक्रम में किस प्रकार का भेदभाव दिखाया गया था।

"समलैंगिकतावाद!" एक छात्र ने चिल्लाकर कहा।

यह एक नया शब्द था, लेकिन इसे सब समझ गए थे। कक्षा में "समलैंगिकतावाद" पर चर्चा होने लगी। ज़्यादातर बच्चे इस बात पर सहमत थे कि यह भी एक प्रकार का भेदभाव है। चर्चा के दौरान एक बच्चे ने वॉशिंगटन में समलैंगिकों के अधिकारों के लिए एक सप्ताह पहले हुए एक प्रदर्शन का भी ज़िक्र किया। (गिलबर्टो, हुआन और कार्लोस ने कहा कि वे इससे अनभिज्ञ थे।)

एलविस, जिसने "समलैंगिकतावाद" शब्द बनाया था, बोलाः "हाँ! मेरी चचेरी बहन लेस्.... लेस्..."

"लेस्बियन," मैंने वाक्य पूरा किया।

"हाँ, लेस्बियन है," उसने कहा, और उत्साहपूर्वक जोड़ा, "वह भी वॉशिंगटन गई थी अपने अधिकारों के लिए प्रदर्शन करने।"

"यह तो बिलकुल वैसा ही है जैसा वॉशिंगटन के प्रदर्शन में डॉ. किंग का स्वप्न वाला भाषण था," किसी और ने कहा।

कुछ ही देर में कक्षा दूसरे अभिनय प्रदर्शन में व्यस्त हो गई, लेकिन यह प्रदर्शन मेरे ज़ेहन में अटका रह गया। मुझे गर्व महसूस हुआ कि समलैंगिकता के प्रश्न पर मेरी कक्षा सामान्य चर्चा से आगे बढ़ी। यह चर्चा एक ही बात पर केन्द्रित रहती थी। वह बात यह थी कि मैं हमेशा छात्रों को बताता था कि क्यों उन्हें एक-दूसरे को "चूतिया" नहीं कहना चाहिए। लेकिन ज़्यादा गहराई से देखें तो इस घटना ने मुझे कक्षा और समाज के अन्तर्निहित जुड़ाव की याद दिलाई। यानी हमारी कक्षा में दिन में छह घण्टे उपस्थित रहने वाले छात्र पर समाज किस तरह प्रभाव डालता है और कैसे समाज सुधार के व्यापक आन्दोलन कक्षाओं के दैनिक कामकाज को प्रभावित करते हैं।

कुछ लोगों को पाँचवीं कक्षा के छात्रों द्वारा समलैंगिकों के प्रति भेदभाव को अपने अभिनय का विषय बनाना असामान्य लग सकता है। लेकिन ल इस्कूला फ्रेटनी में ऐसी बहुत-सी बातें हैं जो पारम्परिक शिक्षण के अभ्यस्त लोगों को हैरान कर सकती हैं।

ल इस्कूला फ्रेटनी की स्थापना के लिए संघर्ष

हठधर्मी विद्यालय प्रशासन से निरन्तर युद्ध की प्रक्रिया में बना ल इस्कूला फ्रेटनी मिल्वॉकी, विस्कॉन्सिन में स्थित है। यह एक ऐसे विद्यालय की स्थापना के लिए जारी यात्रा का स्थल है जो अभिभावकों और अध्यापकों द्वारा संचालित हो। हम अपने आप को दुतरफा द्विभाषी, बहुसांस्कृतिक, सम्पूर्ण भाषा विद्यालय कहते हैं, जिसका संचालन वहीं रहने वाली एक परिषद् करती है। वर्तमान में इस विद्यालय में 360 छात्र हैं। इसमें चार साल के बच्चों के लिए किंडरगार्टन से लेकर पाँचवीं तक कक्षाएँ हैं। छात्रों में 65 प्रतिशत हिस्पानिक, 20 प्रतिशत अफ्रीकी-अमरीकी, 13 प्रतिशत गोरे और शेष एशियाई या अधिवासी अमरीकी हैं। लगभग 70 प्रतिशत छात्र दोपहर के मुफ्त भोजन के अधिकारी हैं। हमारे यहाँ अक्षमता सम्बन्धी शिक्षण का अलग कार्यक्रम है जो मूलतः दल शिक्षण द्वारा चलाया जाता है, और तीन से पाँच वर्ष तक के ऐसे बच्चों के लिए जिनकी आवश्यकताएँ भिन्न हैं, हमारे यहाँ एक पृथक कार्यक्रम है।

अपनी यात्रा के हर नए पड़ाव पर हमें ढेर सारी समस्याओं का सामना करना पड़ा है। इससे यही सिद्ध होता है कि लोकतांत्रिक नारेबाज़ी के बावजूद हमारा समाज कई मामलों में कितना अलोकतांत्रिक है। और समस्याएँ क्या थीं? तानाशाही तरीकों से चलता एक केन्द्रीय कार्यालय,

एक ऐसा विद्यालयीन ढाँचा जो सहभागितापूर्ण शिक्षण प्रणाली का निषेध करता है, अभिभावक और अध्यापक जो अपनी खुद की शिक्षा की तानाशाही आदतों में जकड़े हुए हैं, छात्र जो उस मास मीडिया संस्कृति द्वारा अनुकूलित हैं जो व्यक्तिगत उपभोग को सार्वजनिक हित से अधिक मूल्यवान मानती है, और एक ऐसी समाजार्थिक व्यवस्था जो शहरी विद्यालयों और उनसे लाभान्वित होने वाले परिवारों को बहुत ज़्यादा महत्वपूर्ण नहीं मानती।

इस अध्याय में आप जानेंगे कि कैसे प्रतिबद्ध अध्यापकों और अभिभावकों के एक दल ने इन समस्याओं का सामना किया। आपको पता चलेगा कि कैसे विद्यालय अपने काम में सारे अभिभावकों की सार्थक भागीदारी प्राप्त करने की कोशिश करता है, न केवल शिक्षित और सुलझे हुए अभिभावकों की वरन् सबकी। आप यह भी जानेंगे कि कैसे बजट से लेकर हिंसा और नशीली दवाइयों तक के दबावों के बावजूद विद्यालय अपने लोकतांत्रिक आदर्शों को सुरक्षित रखने का प्रयास करता है।

राजनीतिक संघर्ष

90 साल पुराने फ्रेटनी स्ट्रीट स्कूल को गिराया जाने वाला था। अप्रैल 1988 में विद्यालय के छात्रों और अध्यापकों को छह ब्लॉक आगे स्कूल की नई इमारत में जाना था। फ्रेटनी के अड़ोस-पड़ोस में नस्ल की दृष्टि से एकजुट श्रमिक लोग रहते थे। लेकिन विद्यालयीन नौकरशाही को इससे कोई मतलब नहीं था। फिर भी कुछ लोग सोचते थे कि फ्रेटनी को एक ऐसा शिक्षा संस्थान बनाया जा सकता है जो इस प्रकार के विशिष्ट अड़ोस-पड़ोस का पूरा लाभ उठा सके। जैसा कि एक अभिभावक ने कहा, "हमने एक ऐसे विद्यालय का सपना देखना शुरू कर दिया जो हमारे सारे बच्चों को – चाहे वे हिस्पानिक हों, चाहे काले, चाहे गोरे – उच्चतम स्तर की शिक्षा प्रदान कर सके।"

1 जनवरी 1988 को अध्यापकों, अभिभावकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं के इस छोटे-से गुट ने "एक नए फ्रेटनी के लिए पड़ोसी" के नाम से एक प्रेस विज्ञप्ति जारी की और इसके माध्यम से अपने सपने को सार्वजनिक किया। प्रेस विज्ञप्ति में मिल्वॉकी स्कूल बोर्ड को आह्वान किया गया कि वह एक समग्र-भाषी, द्विभाषी, बहुसांस्कृतिक, स्थानीय प्रबन्धन वाले विद्यालय के प्रस्ताव का समर्थन करे और इसे वहीं बनाया जाए जहाँ फ्रेटनी स्कूल

है। हमने इस नए स्कूल का नाम "ल इस्कूला फ्रेटनी" रखा।

लेकिन विद्यालय प्रशासक इस भवन में एक नया विद्यालय बनाना चाहते थे, एक ऐसा शिक्षा केन्द्र जिसमें मेडलीन हंटर की प्रविधियों का इस्तेमाल करने वाले सिद्ध अध्यापक हों और जो एक उदाहरण प्रस्तुत कर सके।[1] तब कक्षाओं में कठिनाई का अनुभव करने वाले ज़िले के अध्यापक अढ़ाई सप्ताह के लिए यहाँ आएँगे और सिद्ध अध्यापकों से प्रशिक्षण पाएँगे। कई अभिभावकों ने सवाल उठाया कि क्या बच्चों को लगातार खराब अध्यापकों से पढ़ना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि प्रशिक्षण केन्द्र तो कहीं भी बनाया जा सकता है, जबकि ल इस्कूला फ्रेटनी की सफलता ऐसी बहुसांस्कृतिक बस्ती में होने पर ही निर्भर करती है। और ऐसी बस्तियाँ मिल्वॉकी में हैं कितनी?

"एक नए फ्रेटनी के लिए पड़ोसी" (एनएनएफ) ने बैठकें कीं और एक बड़ी जनसुनवाई की तैयारी की। लेकिन जनसुनवाई के दिन भयानक बर्फीला तूफान आ गया जिसकी वजह से अगले दिन सभी स्कूलों को बन्द करना पड़ा। इसके बावजूद जनसुनवाई में आने वालों की संख्या इतनी ज़्यादा थी कि स्कूल बोर्ड को एनएनएफ के प्रस्ताव पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने को मजबूर होना पड़ा। उन्होंने विद्यालय प्रशासकों को हमसे मिलने और एक संशोधित संस्तुति प्रस्तुत करने का निर्देश दिया।

शुरू से ही ऐसा लग रहा था कि केन्द्रीय कार्यालय के नेता एनएनएफ के प्रस्ताव को समझने के लिए तैयार नहीं हैं। हालाँकि उन्होंने एक समझौता प्रस्ताव भी पेश किया जिसमें उनके अनुसार शिक्षण प्रशिक्षण केन्द्र की योजना को हमारे प्रस्ताव से जोड़ दिया गया था, लेकिन हमारे प्रस्ताव की बहुत-सी बातें उनके प्रस्ताव के ठीक विपरीत थीं। उदाहरण के लिए, हमारे प्रस्ताव का केन्द्रीय विचार यह था कि विद्यालय का संचालन अध्यापकों और अभिभावकों की एक स्थानीय परिषद् करेगी, जबकि प्रशासक शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र बनाना चाहते थे जिसका संचालन और नियंत्रण केन्द्रीय कार्यालय के हाथ में हो। अधीक्षक के सभा कक्ष में सर्वोच्च प्रशासकों से चर्चा करते समय इस स्थिति की विसंगति पूरी तरह उजागर हो गई। मैंने तत्कालीन अधीक्षक हॉथोर्न फैज़ॉन को बताया कि शिक्षण विकास अकादमी द्वारा स्कूल चलाने में और अभिभावकों-अध्यापकों की स्थानीय परिषद् द्वारा स्कूल चलाए जाने में बुनियादी अन्तर्विरोध है। इसे अनुकरणीय प्रशिक्षण केन्द्र बनाने के केन्द्रीय कार्यालय के प्रस्ताव में अभिभावकों का कहीं ज़िक्र तक नहीं था।

"ठहरिए!" एक उच्चस्तरीय प्रशासनिक अधिकारी ने जवाब दिया, "यह ठीक है कि हमारे प्रस्ताव में अभिभावकों का कोई ज़िक्र नहीं है, लेकिन आपके प्रस्ताव में भी तो केन्द्रीय कार्यालय का कोई ज़िक्र नहीं है।"

हम अपने प्रस्ताव पर अड़े रहे और समुदाय में अपना समर्थन जुटाने की कोशिश करते रहे। अनेक बातें ऐसी हुईं जिनसे हमारे काम को और रफ्तार मिल गई। कुछ महीने पहले स्कूल बोर्ड ने सार्वजनिक रूप से कहा था कि विद्यालय का प्रबन्धन मौके पर मौजूद लोगों द्वारा होना चाहिए। स्कूल बोर्ड के सदस्य समग्र भाषा शिक्षण पद्धति के लाभों से भी परिचित थे। इसका कुछ श्रेय रीथिंकिंग स्कूल्स नामक त्रैमासिक समाचारपत्र को भी जाता है जो मिल्वॉकी से प्रकाशित होता था और जिसके सम्पादक मण्डल में एनएनएफ के दो सदस्य थे (पीटरसन 1987, 1988; टेनोरियो 1986, 1988)। इसके अलावा अफ्रीकी-अमरीकी समुदाय के सदस्य हॉवर्ड फुलर (हमारे वर्तमान अधीक्षक) के नेतृत्व में एक स्वतंत्र विद्यालय ज़िले की माँग कर रहे थे। और चीज़ों के अलावा उनका यह भी आरोप था कि नौकरशाही अफ्रीकी-अमरीकी अभिभावकों की बात सुनने-समझने में असमर्थ है।

कुल मिलाकर यह हुआ कि स्कूल बोर्ड ने प्रस्ताव पारित कर दिया और पहला शहरव्यापी विशेषज्ञता विद्यालय खोल दिया जिसमें विद्यालय के पास-पड़ोस में रहने वाले बच्चों को प्रवेश के मामले में प्राथमिकता दी जानी थी। बोर्ड ने केन्द्रीय कार्यालय को भी निर्देशित किया कि वह एनएनएफ के साथ सहयोग करे।

बोर्ड के निर्णय में एक अन्य कारक की भूमिका रही लगती थी, कम से कम उसके एक सदस्य के निर्णय में। मतदान के कुछ महीनों के बाद इस सदस्य ने मेरे समक्ष स्वीकार किया कि पहली कक्षा में पढ़ने वाला उसका बेटा समग्र-भाषा शिक्षक से बहुत ही अच्छी शिक्षा पा रहा था और ल इस्कूला फ्रेटनी को अनुमोदन देने के पीछे इस बात का भी काफी प्रभाव रहा। स्कूल बोर्ड की एक महत्वपूर्ण बैठक में उसने कहा कि चाय के अन्तराल में वह फ्रेटनी प्रस्ताव के बारे में एक उच्चस्तरीय प्रशासक से चर्चा कर रहा था और उसने पाया कि प्रशासक को ज़रा भी पता नहीं है कि प्रस्ताव में क्या है। "ईमानदारी की बात यह है," बोर्ड सदस्य ने मुझसे कहा, "कि मैं भी नहीं जानता था कि आप क्या चाह रहे हैं, लेकिन मैं इतना ज़रूर जानता था कि मेरा बच्चा पहली कक्षा में पढ़ता है, और जो अध्यापिका उसे पढ़ाती है वह उसके अनुसार समग्र-शिक्षा पद्धति से पढ़ाती है। आधे सत्र के भीतर ही (थेंक्सगिविंग पर्व तक) मेरा बच्चा लिखना

सीख गया था, और अपनी खुद की किताबें प्रकाशित कर रहा था। वह लिखने-पढ़ने के बारे में उत्तेजित था, उसे पढ़ना और किसी को पढ़ते हुए सुनना बेहद पसन्द था। तो मुझे तो आपके प्रस्ताव का समर्थन करना ही था।"

स्कूल बोर्ड के अनुमोदन ने हमारे संघर्ष के पहले चरण का समापन कर दिया। यह संघर्ष था राजनीतिक सत्ता के लिए। और यह आठ सप्ताह तक चला।

प्रशासनिक लड़ाइयाँ

दूसरे चरण में हमें अपना कार्यक्रम विकसित करने के बुनियादी कामों से दो-चार होना पड़ाः मसलन सुविधाओं का पुनर्निर्माण, प्राचार्य तथा अन्य कर्मचारियों का चयन, पाठ्यक्रम का निर्धारण और तत्सम्बन्धी अन्य बातें। दुर्भाग्य से प्रशासन बोर्ड स्तर पर राजनीतिक रूप से जो नहीं कर पाया था, वह उसने प्रशासनिक स्तर पर करने की चेष्टा की।

उदाहरण के लिए, एनएनएफ के साथ सहयोग करने के स्कूल बोर्ड के स्पष्ट निर्देशों के बावजूद दो सप्ताह तक दोनों गुटों के बीच न कोई बैठक हुई न कोई करार। आखिर केन्द्रीय कार्यालय में कार्यरत एक मित्र के माध्यम से हमें पता चला कि अगले दिन, यानी शुक्रवार को सुबह ग्यारह बजे इस बारे में एक महत्वपूर्ण बैठक होने वाली है। एनएनएफ ने एक अभिभावक से कहा कि अनामंत्रित रूप से ही सही, पर वह इस बैठक में भाग लेने जाएँ। इन अभिभावक को यह पता नहीं था कि बैठक किस जगह होने वाली है, इसलिए वे ग्यारह बजकर पाँच मिनिट तक तो इन्तज़ार करती रहीं और फिर इन्होंने प्रभारी प्रशासक के सचिव से कहा कि वह उन्हें बैठक में पहुँचा दे। सचिव को पता नहीं था कि इन्हें आमंत्रित नहीं किया गया है, इसलिए वह इन्हें उस सभाकक्ष में ले गया जहाँ बैठक चल रही थी। इन्हें देखकर बैठक में उपस्थित प्रशासकों के मुँह खुले के खुले रह गए। निश्चय किया गया कि नए फ्रेटनी विद्यालय की योजना पर विचार करने के लिए एक संयुक्त बैठक आयोजित की जाएगी।

फिर आगामी कई महीनों यानी मार्च से सितम्बर तक प्रशासक नए कार्यक्रम के निर्माण में एक के बाद एक रोड़े अटकाते रहे। हमारा मुकाबला एक लाख छात्रों वाली एकदम नौकरशाही वाली स्कूली व्यवस्था से था जिसके चलते कोई मूलगामी नवाचार सम्भव नहीं था। ये समस्याएँ और भी बढ़ गईं क्योंकि एनएनएफ के बहुत ही कम सदस्यों के पास इतना

समय या इतनी विशेषज्ञता थी कि वे प्रशासन के गलियारों में अपना रास्ता बना सकें। हमारे ज़्यादातर साथी दिन भर के काम के बाद बचे समय में फ्रेटनी परियोजना पर काम कर रहे थे। हमारी सिफारिशें अक्सर उपेक्षित कर दी जाती थीं या अगर उन पर कुछ कार्यवाही होती भी थी तो बहुत देर से।

उदाहरण के लिए, यूनियन के वरिष्ठता सम्बन्धी नियम ऐसे थे कि किसी भी विद्यालय से कोई अध्यापक स्थानान्तरित होकर फ्रेटनी में आ सकता था, चाहे वह हमारे कार्यक्रम सम्बन्धी दृष्टिकोण से असहमत ही क्यों न हो। एनएनएफ ने सुझाव रखा कि फ्रेटनी में रिक्ति की सूचना के साथ ही हम एक पृष्ठ का दृष्टिकोण सम्बन्धी स्पष्टीकरण लगा देंगे। मिल्वॉकी शिक्षक शिक्षा एसोसिएशन यह सुझाव मान गई। निचले स्तर के प्रशासकों को भी इस पर कोई आपत्ति नहीं थी। लेकिन उच्च अधिकारियों ने यह बात नहीं मानी।

एनएनएफ ने कहा कि प्राचार्य की खोज सारे देश में से की जाए। प्रशासन ने इसे ठुकरा दिया और किसी न किसी बहाने नियुक्ति को टालते रहे। आखिर स्कूल खुलने से सिर्फ एक महीने पहले और अभिभावकों की समिति की सिफारिशों के खिलाफ प्रशासन ने एक ऐसी महिला को प्राचार्य बनाने की अनुशंसा की जिसका अनुभव कस्बाई विद्यालयों तक सीमित था। उसे दो भाषाएँ ज़रूर आती थीं, लेकिन अँग्रेज़ी और जर्मन न कि अँग्रेज़ी और स्पेनिश। एनएनएफ के अनुसार प्रशासन का यह कदम समुदाय के प्रति शत्रुता जैसा था, और एक बार फिर उसके विरुद्ध समुदाय को लामबन्द किया गया। दर्जनों अभिभावक स्कूल बोर्ड की बैठकों में आए। उनमें से कइयों के हाथों में नारे वाली दफ्तियाँ थीं। प्रचार और दबाव के समक्ष नवनियुक्त अधीक्षक रॉबर्ट एस. पीटरकिन (जो केम्ब्रिज, मेसाच्यूसेट्स से आए थे) को झुकना पड़ा। उन्होंने समस्या को समझा और नियुक्ति को रद्द कर दिया। उन्होंने अस्थायी तौर पर एक ऐसे व्यक्ति को नियुक्त किया जो समुदाय को स्वीकार्य था।

पाठ्यक्रम निर्माण में और भी ज़्यादा समस्याएँ आईं। जून के अन्त और जुलाई में केन्द्रीय कार्यालय भवन में तीन अध्यापक पाठ्यक्रम की रूपरेखा बनाने बैठे। इन अध्यापकों को स्रोत कहीं दिखाई नहीं दे रहे थे। वे प्रश्न पूछते तभी उन्हें कुछ सूचनाएँ दी जातीं। उनके लिए टाइपिस्ट वगैरह की व्यवस्था भी यदाकदा ही हो पाती। एक अध्यापक का तो कहना था कि केन्द्रीय कार्यालय में बैठकर फ्रेटनी परियोजना पर काम करना पेण्टागन

यानी अमरीकी रक्षा और युद्ध कार्यालय में बैठकर शान्ति के लिए काम करने से कम नहीं है।

गतिरोध जारी रहा। उदाहरण के लिए, बार-बार अनुरोध करने के बावजूद फर्नीचर खरीदने वाले प्रशासक ने हमारे स्कूल की पुरानी "बायसिकल डेस्कें" (जुड़ी हुई मेज़-कुर्सी) बदलने से इन्कार कर दिया। हम चाहते थे कि मेज़ें और कुर्सियाँ अलग-अलग हों जो समूह बनाकर काम करने के लिए बेहतर होता। एक दिन एनएनएफ के एक सदस्य ने जाकर प्रशासक से कहा कि वे हमारे यहाँ बायसिकल डेस्क ही रहने दें, क्योंकि स्कूल के पहले दिन छात्र, अध्यापक और अभिभावक खेल के मैदान में इन डेस्कों का ढेर लगाने वाले हैं। इसके बाद एक प्रेस कॉन्फ्रेंस बुलाई जाएगी और उसमें इस बात का खुलासा किया जाएगा कि किस तरह प्रशासन हमारे कार्यक्रम से सहयोग करने में असफल रहा है। अगले ही दिन स्कूल में दो ट्रक भरकर नई डेस्कें आ गईं।

अगस्त के मध्य में नए अध्यापक आ गए। हमारा ख्याल था कि कुछ सप्ताह बाद आरम्भ होने जा रहे नए सत्र के लिए अन्तिम तैयारियाँ करेंगे, लेकिन पता चला कि इमारत की ज़रूरी मरम्मत हाल ही में शुरू हुई है और सफाई तो महीनों से नहीं हुई है। एक अजीब बात यह भी थी कि जिन चीज़ों को खरीदने का आदेश हमने जुलाई में दिया था, वे अभी तक नहीं आई थीं। हमने दुकानदारों को फोन किया तो पता चला कि उन्हें हमारा क्रयादेश ही नहीं मिला था। यह देखकर तो हम दंग ही रह गए कि जिस माँगपत्र पर 18 जुलाई या उससे भी पहले सहायक अधीक्षक ने हस्ताक्षर कर दिए थे वह महीने भर तक क्रय विभाग में पड़ा रहा, सिर्फ इसलिए कि सहायक अधीक्षक के हस्ताक्षर के साथ प्राधिकार पत्र नत्थी नहीं था। खोया हुआ सामान भी एक गम्भीर समस्या था। विद्यालय बन्द होने के बाद बहुत सारी किताबें गायब हो गई थीं। दुतरफा द्विभाषी कार्यक्रम के लिए नए सामान की ज़रूरत थी और पुस्तकालय की बची-खुची पुस्तकें सन्दूकों में बन्द थीं क्योंकि पुस्तकालय की मरम्मत का काम देर से शुरू हुआ था। हमें लगभग बगैर किसी सामान के स्कूल शुरू करना था। एक अध्यापक ने आशा भरे स्वर में कहा, "चलो, कम से कम हमने एक शानदार ज़ेरॉक्स मशीन तो मँगवा ही ली। स्कूल के कुछ सप्ताह इसी के दम पर काम चलाएँगे।" लेकिन एक फोन ने यह भ्रम भी तोड़ दिया। पता चला कि ज़ेरॉक्स मशीन का आदेश भी विक्रेता तक पहुँचने की बजाय बीच में ही कहीं खो गया है।

हम लोग धड़धड़ाते हुए केन्द्रीय कार्यालय भवन में घुसे। सौभाग्य से अब वहाँ हमारे दो समर्थक थेः अधीक्षक पीटरकिन और उनके सहायक डेबोरा मेकग्रिफ जो हमारी बात सुनकर दंग रह गईं। हमने इशारों-इशारों में बता दिया कि हमारा अगला कदम स्कूल पर चौबीसों घण्टे धरना देना होगा। वे हमारी बात ध्यान से सुनती रहीं। उन्होंने प्रशासन को रास्ते पर लाने के लिए तत्काल कदम उठाए। अगले ही दिन स्कूल में फोटोकॉपी मशीन पहुँच गई। सामान एयरमेल से आने लगा। अगले दिन एक बैठक हुई, और हमेशा हमारे रास्ते में रोड़े अटकाने वाला प्रशासन हमारी हर फरमाइश पूरी करने को तत्पर दिखाई देने लगा।

स्कूल के पहले दिन अधीक्षक पीटरकिन ल इस्कूला फ्रेटनी में आए और उन्होंने इसे अपने आदर्शों का प्रतिरूप बताया। उन्होंने अभिभावकों की सक्रिय भागीदारी और स्कूल की एकीकृत परिकल्पना के महत्व पर खासतौर से ज़ोर दिया। अन्ततः बाज़ी पलट चुकी थी।

कार्यान्वयन सम्बन्धी संघर्ष

अब जबकि ल इस्कूला फ्रेटनी वास्तव में खुल गया था, हमें लगा अब हम अपना ध्यान और अपनी ऊर्जा अपने कार्यक्रम के क्रियान्वयन सम्बन्धी काम पर लगा सकते हैं। दुर्भाग्य से महीनों तक निष्क्रिय रहने की मजबूरी और कमज़ोर आयोजना का असर पूरे पहले वर्ष पर बना रहा। स्कूल की आयोजना के लिए हमें बहुत ही कम समय मिल पाया और प्रशासन के साथ झगड़ेबाज़ी के कारण हमें ऐसी चीज़ों पर ध्यान केन्द्रित करना पड़ा, जिनमें वास्तव में कोई समस्या होनी ही नहीं चाहिए थी। लेकिन इस लड़ाई से एक फायदा भी हुआ। इससे अभिभावकों और अध्यापकों को एकजुट होने का मौका मिला और इससे हमें यह शिक्षा मिली कि एक शहरी स्कूल की सफलता के लिए अभिभावकों, अध्यापकों और समुदाय की एकजुटता ज़रूरी है। हमें यह भी पता चला कि स्कूल के लक्ष्य को लेकर भी इन तीनों का दृष्टिकोण समान होना चाहिए। इन समस्याओं से सफलतापूर्वक निपटने की हमारी क्षमता ने हमें भावी समस्याओं से निपटने की ऊर्जा और हिम्मत दी।

फ्रेटनी कार्यक्रम के मुख्य घटक

लेकिन इस संघर्ष से प्राप्त ज़बर्दस्त ऊर्जा के बावजूद अनेक महत्वपूर्ण घटकों वाले एक नए विद्यालय को आरम्भ करना एक बहुत बड़ी चुनौती था। कागज़

पर हर घटक एकदम सही लगता था, लेकिन व्यवहार में उनमें से हरेक को लागू करना काफी मेहनत का काम था। लेकिन इनमें से प्रत्येक घटक विद्यालय सम्बन्धी हमारी परिकल्पना का एक अविभाज्य हिस्सा था।

दुतरफा द्विभाषी कार्यक्रम

फ्रेटनी कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण घटक दुतरफा द्विभाषी कार्यक्रम है जिसके लिए हम प्रतिबद्ध हैं। इसके अन्तर्गत स्पेनिश भाषी मूलनिवासी बच्चों और अँग्रेज़ी भाषी बच्चों को एक ही कक्षा में बैठना होता है। पढ़ाई आधी स्पेनिश में होनी होती है और आधी अँग्रेज़ी में। यह व्यवस्था भाषिक आधार पर बच्चों के विभाजन को रोकती है और दो भाषाएँ सीखने को अर्थपूर्ण और तात्पर्यपूर्ण बनाती है।

इस दृष्टि के पीछे विचार यह है कि हर बच्चे को अपनी मातृभाषा सहित दो भाषाएँ सीखने का अधिकार है। अपने विद्यालय में दो अलग-अलग भाषाएँ बोलने वाले बच्चों को योजनाबद्ध रूप से एक साथ रखकर हम बच्चों में समानता की व्यापक अवधारणा को आधार दे रहे थे। भाषा और संस्कृति के बीच परस्पर गहरा सम्बन्ध होता है। इसलिए दो भाषाओं में पढ़ाई बहुसांस्कृतिक समझ को बढ़ावा देती है। दुतरफा द्विभाषी प्रणाली का एक और फायदा है। इससे हर बच्चे को यह लगता है कि चाहे वह जिस सामाजिक वर्ग का हो, वह अपने साथ कक्षा में कुछ मूल्यवान लाया है: और वह है उसकी भाषा। और इससे उसका आत्मसम्मान बढ़ता है।

लेकिन अमरीका में दुतरफा द्विभाषी कार्यक्रम के साथ असंख्य समस्याएँ जुड़ी हैं (एडेल्स्की 1991)। मूलतः इसलिए कि इस देश में किसी भी दूसरी भाषा की राजनीतिक रूप से दूसरे दर्जे की या सहायक भूमिका ही हो सकती है। फ्रेटनी का कार्यक्रम भी इसका अपवाद नहीं है। हम समझ चुके हैं कि द्विभाषी शिक्षण की सफलता के लिए दोनों भाषाओं को और उनके परिवेश को एकदम अलग-अलग रखना ज़रूरी है, ताकि बच्चे दूसरी भाषा सीखने के लिए बाध्य हों, और अध्यापक निर्दिष्ट भाषा में ही शिक्षण करें। यदि हर कक्षा द्विभाषी रूप में चले (यानी अध्यापक किसी चीज़ को पहले एक भाषा में समझाए और फिर दूसरी भाषा में) तो शायद छात्र सिर्फ अपनी मातृभाषा पर ही ध्यान रखेगा।

दूसरे साल के अन्त तक हमने महसूस किया कि हमारे स्कूल में अँग्रेज़ी का दबदबा अब भी बना हुआ है। हमने अन्य शहरों में चल रहे दुतरफा द्विभाषी विद्यालयों के अनुभव का अध्ययन किया और अपने काम की भी

आलोचनात्मक परीक्षा की। इस विषय पर अध्यापकों के बीच स्थानीय परिषद् में, और अभिभावकों की भी एक विशेष बैठक में चर्चा हुई। यह बैठक उन दो किंडरगार्टन कक्षाओं में रखी गई जहाँ द्विभाषी अध्यापन सारे विद्यालय से अलग एक अनूठे तरीके से किया जा रहा था। तीसरे साल के शुरू से सारे विद्यालय में किंडरगार्टन वाला तरीका अपना लिया गया। 54-60 छात्रों की कक्षा के दो समूह बना लिए गए। हर समूह में 27 से 30 तक बच्चे होते। एक दिन ये बच्चे स्पेनिश वाले कमरे में जाते और एक अध्यापक उन्हें स्पेनिश में पढ़ाती। दूसरे दिन वे अँग्रेज़ी वाले कमरे में जाते और इसी कक्षा की एक और अध्यापक यही पाठ अँग्रेज़ी में पढ़ाती। दोनों अध्यापकों को दोनों भाषाएँ आती थीं, लेकिन एक सिर्फ अँग्रेज़ी में पढ़ाती और दूसरी सिर्फ स्पेनिश में। इससे हमारे विद्यालय में स्पेनिश भाषा के प्रयोग में बढ़ोत्तरी हुई है और टीम शिक्षण को बढ़ावा मिला है। पर साथ ही इससे पढ़ाने की योजना बनाने में लगने वाले समय सम्बन्धी समस्याएँ बढ़ी हैं और मूल्यांकन, रिपोर्ट कार्ड तथा अध्यापक-अभिभावक भेंट जैसी चीज़ों में कुछ पेचीदगी पैदा हुई है। सातवें साल चौथी और पाँचवीं कक्षा के अध्यापकों ने इसका समाधान इस तरह निकाला कि हर कक्षा दो सप्ताह तक एक भाषा में होती और दो सप्ताह तक दूसरी भाषा में। इससे पढ़ाई अधिक सुसंगत हो गई है और छात्रों का कोर्स भी समय से पूरा होने लगा है।

फ्रेटनी कार्यक्रम इस मायने में तो ज़रूर सफल रहा कि स्पेनिश-भाषी बच्चे जो अच्छी अँग्रेज़ी नहीं जानते थे स्पेनिश के साथ-साथ अच्छी अँग्रेज़ी भी सीख गए, लेकिन अँग्रेज़ी-भाषी बच्चों को स्पेनिश सिखाने में इसे इतनी सफलता नहीं मिली। अध्यापक और अभिभावक इस समस्या को समझने और सुलझाने की कोशिश कर रहे हैं। वे सलाहकारों के अवलोकन द्वारा, इस मामले में अधिक सफल रहे दूसरे विद्यालयों के अनुभव के शोध द्वारा और कार्यक्रम में आगे रहे अँग्रेज़ी-भाषी बच्चों और पिछड़ गए अँग्रेज़ी-भाषी बच्चों के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा इस समस्या का समाधान खोजने की कोशिश कर रहे हैं।

इन समस्याओं के बावजूद दुतरफा द्विभाषी कार्यक्रम फ्रेटनी की ताकत है। यह छात्रों और अभिभावकों तक बहुत निष्ठा से यह सन्देश पहुँचाता है कि स्पेनिश भाषा का महत्व अँग्रेज़ी से कम नहीं है। स्पेनिश भाषी अभिभावक जानते हैं कि विद्यालय उनकी भाषा की कद्र करता है, इसलिए वे विद्यालय में आने और हमारे काम में हाथ बँटाने के लिए हमेशा तैयार रहते

हैं। पास-पड़ोस के बहुसंख्यक स्पेनिश-भाषी समुदाय को द्विभाषी कार्यक्रम ने यह सन्देश दिया है कि ल इस्कूला फ्रेटनी के अध्यापक और अभिभावक समता के व्यापक आदर्श के प्रति पूरी तरह प्रतिबद्ध हैं।

बहुसांस्कृतिक, नस्लवाद विरोधी पाठ्यक्रम

बहुसांस्कृतिकता की हमारी परिकल्पना दूरगामी है। हालाँकि हमारी कक्षाओं में मानवीय सम्बन्धों पर केन्द्रीकृत परियोजनाएँ होती हैं, लेकिन उनमें नस्ल और सत्ता पर पाठ भी होते हैं। हम अपने विद्यालय के कार्यक्रमों में अश्वेत लोगों के अनुभवों पर ज़ोर देते हैं, और हमारी कोशिश रहती है कि अफ्रीकी-अमरीकी, हिस्पानी, आदिवासी-अमरीकी और एशियाई-अमरीकी जैसे विभिन्न भू-राजनीतिक समूहों के संगीत, इतिहास, कला, कविता, कहानी और साहित्य से भी बच्चे परिचित हों। हम अपने बच्चों को नस्लवाद विरोधी होना सिखाते हैं। हम उन्हें सिखाते हैं कि नस्लवाद अवैज्ञानिक और अनैतिक है, कि यह सम्पूर्ण अमरीकी इतिहास में एक विनाशकारी सामाजिक रोग की तरह रहा है। अध्यापकों को रूढ़िवाद, पूर्वाग्रहों और हर प्रकार के भेदभाव के बारे में बच्चों को शिक्षित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

हमारे छात्रों और उनके परिवारों की विविधता तथा अनेकता को देखते हुए ऐसी बहुसांस्कृतिक, नस्लवाद विरोधी नीति का महत्व भी बढ़ जाता है, न सिर्फ दूरगामी शिक्षण सम्बन्धी लक्ष्यों के लिए बल्कि सीखने वालों के एक समुदाय के रूप में हमारे बने और बचे रहने के लिए भी।

इस कार्यक्रम की सफलता निर्विवाद नहीं रही। कुछ मुखर, मध्यवर्गीय गोरे अभिभावकों ने शिकायत की कि हम अपने स्कूल में सिर्फ अल्पसंख्यकों का इतिहास पढ़ा रहे हैं और छात्रों को यूरोपीय विरासत से वंचित कर रहे हैं। कुछ दूसरों का कहना था कि उनके बच्चे राष्ट्रगीत और राष्ट्र के प्रति निष्ठा की शपथ नहीं सीख रहे हैं। कुछ अध्यापकों का विचार था कि यदि इस प्रकार की आलोचना को रोका नहीं गया तो फ्रेटनी एक बार फिर मुख्यधारा में जा गिरेगा, जहाँ पाठ्यक्रम में तो लोकतंत्र की बातें होती हैं लेकिन व्यवहार में लोकतंत्र के मूल आधार — सभी व्यक्तियों की समानता — का निरन्तर उल्लंघन किया जाता है क्योंकि वहाँ हर चीज़ को यूरोप की नज़र से देखा जाता है।

कई बार बैठकों में इन सवालों पर बावेला मच जाता। उदाहरण के लिए,

एक बार स्कूल में चल रही परिषद् की एक बैठक में एक गोरे अभिभावक ने सवाल उठाया कि कक्षाओं में राष्ट्रनिष्ठा की शपथ क्यों नहीं दोहराई जाती। इस पर प्यूर्टोरिको से आई एक युवा अध्यापिका बोल पड़ी कि जब भी कहीं यह निष्ठा की शपथ दोहराई जाती है वह गुस्से में जल-भुन जाती है। यह शपथ उसे इस बात की याद दिलाती है कि प्यूर्टोरिको दसियों सालों तक अमरीकी उपनिवेशवाद तले छटपटाता रहा है जिसमें न तो स्वतंत्रता नाम की कोई चीज़ थी न न्याय नाम की। अभिभावक ने कहा कि उसने कभी सोचा भी नहीं था कि इस स्कूल में कोई इस तरह सोचने वाला भी हो सकता है।

ऐसे मतभेद समाप्त नहीं होते और यदि वे विद्यालय में दिखाई नहीं देते तो इसका मतलब यह नहीं होता कि वे हैं ही नहीं। इसका मतलब सिर्फ यह होता है कि शायद लोग नस्ल जैसे संवेदनशील मुद्दे पर चुप रहने का सामाजिक शिष्टाचार बरत रहे हैं। यदि कोई विद्यालय एक स्वस्थ, बहुसांस्कृतिक वातावरण को बढ़ावा देना चाहता है तो उसे सुनिश्चित करना होगा कि नस्ल और संस्कृति जैसे मामलों पर निरन्तर खुलकर बातचीत हो, और वह भी ऐसे कि हर प्रकार की आवाज़ को सुना जाए और स्थापित, मान्य तथा जड़ विचारों को साफ चुनौती दी जाए।

विभिन्न दृष्टिकोणों की अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करने के लिए फ्रेटनी ने एक रणनीति बनाई। हमने साल भर की एक परियोजना बनाई जिसमें अध्यापकों और अभिभावकों को बताना होता था कि बहुसांस्कृतिक, नस्लवाद विरोधी शिक्षा से हमारा क्या तात्पर्य है। अध्यापकों और अभिभावकों ने अभिभावकों की पाठ्यक्रम समिति, विद्यालय में रहने वाली प्रबन्धन परिषद् और कर्मचारियों की बैठकों में भाग लिया और एक संयुक्त वक्तव्य तैयार किया जिसका प्रारूप पाँच बार बनाया गया। इस वक्तव्य में बहुसांस्कृतिक, नस्लवाद विरोधी शिक्षा के दर्शन और ल इस्कूला फ्रेटनी में इसके कार्यान्वयन सम्बन्धी रूपरेखा प्रस्तुत की गई थी।

शुरुआत करने के लिए और नए अध्यापकों तथा अभिभावकों को विषय से परिचित कराने के लिए यह एक अच्छा वक्तव्य था, लेकिन कोई भी दस्तावेज़ सीखने की उस प्रक्रिया को पूरी तरह नहीं समेट सकता था जो उस साल भर लम्बी बहस से उभरी थी। इसलिए हमने इस बहस को जारी रखने के नए तरीके खोजने का निश्चय किया ताकि बहुसांस्कृतिक शिक्षण को हम और ज़्यादा अच्छी तरह समझ सकें।

शिक्षाविद जेम्स बैंक (1991) और एनिड ली (माइनर 1991) ने बहुसांस्कृतिक, नस्लवाद विरोधी शिक्षा की जो परिभाषा दी है वह हमें उपयोगी लगी। यह परिभाषा शिक्षा-सम्बन्धी कुछ क्रियाकलापों के एक विशेष क्रम के दौरान उभरती है। शिक्षक इस क्षेत्र में अपने विकास का ठीक से आकलन कर सकें, इसके लिए ऐसी रूपरेखा सहायक होती है। क्रम इस तरह बनता है कि पहले अध्यापक अश्वेत लोगों के योगदान की चर्चा करते हैं, फिर इस सामग्री को मौजूदा पाठ्यक्रम में शामिल कर लिया जाता है। फिर अनेक विषयों में गैर-यूरोपीय संस्कृतियों से सम्बन्धित पाठ जोड़े जाते हैं। अन्ततः यह क्रम एक अधिक रूपान्तकारी और सक्रिय चरण में पहुँचता है जहाँ छात्र और अध्यापक टेलीविज़न, बच्चों की किताबों और पाठ्यक्रमों से मिलने वाले संदेशों की मीमांसा करते हैं। अन्तिम लक्ष्य यह है कि छात्र और अध्यापक दुनिया को न सिर्फ समझें, वरन् इसे बदलने के सामाजिक काम में भी शामिल हों।

विद्यालय के नीतिगत वक्तव्य और इस रूपरेखा में भी हमें कुछ समस्या महसूस हुई। पहली बात तो यह है कि जो पहले ही लिया जा चुका है उसका अनावश्यक दोहराव हो रहा था, और कुछ चीज़ें छूट रही थीं। उदाहरण के लिए, छात्र किंडरगार्टन से लगाकर पाँचवीं कक्षा तक एशियाई-अमरीकी इतिहास बहुत कम पढ़ पाता था और अफ्रीकी-अमरीकी इतिहास ज़्यादा पढ़ता था जिसके केन्द्र में हेरियट-टबमैन और मार्टिन लूथर किंग जूनियर होते थे। दूसरी बात यह थी कि जब विद्यालय में कोई नया अध्यापक आता था तो उसे नीतिगत वक्तव्य और इस रूपरेखा द्वारा प्रदत्त सामग्री से अधिक विशिष्टता की ज़रूरत पड़ती थी।

कार्यरत अध्यापकों और विद्यालय में ही होने वाली प्रबन्धन बैठकों से एक दूसरी प्रक्रिया निकली। इसके द्वारा हमने एक और दस्तावेज़ तैयार किया जिसमें एक ढाँचा प्रस्तुत किया गया था। इस ढाँचे में बताया गया कि किस स्तर पर किस भू-राजनीतिक समूह पर बल देना है। इससे यह निश्चित हो गया कि फ्रेटनी में अध्ययन के वर्षों में हर छात्र हर प्रमुख समूह के इतिहास और संस्कृति से कम से कम दो बार अच्छी तरह परिचित हो जाए।

सम्पूर्ण भाषा शिक्षण और द्वितीय भाषा शिक्षण

हमारा विश्वास है कि बच्चे सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना सुनकर, बोलकर, पढ़कर और लिखकर ही सीखते हैं। हम अपनी कक्षाओं को

अनुभव आधारित, छात्र केन्द्रित और भाषिक दृष्टि से समृद्ध बनाना चाहते हैं। इसका क्या मतलब है? हमारे सारे छात्र रोज़ पत्र-पत्रिकाओं में लिखते हैं। हम बड़ी पुस्तकों का, मिल-बाँटकर पढ़ने का, पुस्तक क्लबों का, कहानी सुनाने का, लेखन प्रक्रिया का, अन्तर्सक्रिय पत्रिकाओं का तथा नाटक और कठपुतलियों का प्रयोग करते हैं। अनेक कक्षाएँ हमारे छात्रों द्वारा लिखी गई पुस्तकें प्रकाशित करती हैं, और फिर उन पुस्तकों को सूची-पत्र में शामिल कर स्कूल पुस्तकालय में रख दिया जाता है।

ऐसा करने के पीछे बुनियादी कारण हमारा यह विश्वास है कि भाषिक कलाओं का शिक्षण बच्चों के अनुभवों पर आधारित होना चाहिए, और उनके जीवन, परिवार और समुदाय के लिए प्रासंगिक होना चाहिए। अपने समुदाय के बारे में सोचते, पता करते और लिखते समय बच्चे स्वयं अपनी और अपने परिवार की मूल्यवत्ता की पुनर्पुष्टि करते हैं। साथ ही वे उन समस्याओं से भी परिचित होते हैं जिनका सामना उन्हें और सारे समाज को करना है। अनेक अध्यापक होमवर्क देते हैं जिससे बच्चे समुदाय का सर्वेक्षण करने तथा अपने परिवार के सदस्यों और पड़ोसियों का साक्षात्कार लेने को प्रेरित होते हैं। इस प्रकार की गतिविधि से आम आदमी की सोच को मान्यता मिलती है और परिवार, विद्यालय तथा समुदाय के बीच के रिश्ते मज़बूत होते हैं।

भाषिक कलाओं के शिक्षण के हमारे तरीके पर फ्रेटनी बिरादरी में काफी वाद-विवाद हुआ है। हालाँकि अभिभावक अपने बच्चों को फ्रेटनी में स्वेच्छा से भेजते हैं, फिर भी उनमें से अनेक हमारे विशिष्ट शिक्षा दर्शन से अनभिज्ञ होते हैं, और इस कारण कभी-कभी बड़ी समस्या होती है। कुछ अभिभावकों को हमारा पढ़ाने का तरीका अजीब लगता है क्योंकि वे इस तरह नहीं पढ़े थे। कुछ अन्य हमारे तरीके को पसन्द नहीं करते क्योंकि उनके ख्याल से बच्चे जब वास्तविक दुनिया में जाएँगे, तब उन्हें पाठ्यपुस्तकों, हिज्जे परीक्षा और मानक परीक्षा जैसी चीज़ों के बारे में कुछ पता नहीं होगा। तो उनका काम कैसे चलेगा?

हमारी पाठ्यक्रम सम्बन्धी बैठकों में बच्चों को हिज्जे या वर्तनी सिखाए जाने के बारे में शायद उतना ही समय लगा होगा जितना और किसी भी विषय के बारे में। इस बारे में अनेक परस्पर विरोधी मान्यताएँ थीं, और इन्हें सुलझाना आसान नहीं था, क्योंकि सच तो यह है कि हिज्जे या वर्तनी सिखाने का कोई एक सर्वसम्मत तरीका है ही नहीं। हमने वर्तनी और समग्र भाषा पर अनेक कार्यशालाएँ और परिसंवाद आयोजित किए हैं

और हमेशा इस बात पर ज़ोर दिया है कि भाषा शिक्षण की सफलता का राज़ पढ़ने और लिखने में संलग्नता का सार्थक अनुभव है। लेकिन स्थानीय समाचारपत्रों में छपने वाले वार्षिक परीक्षा परिणामों से उठने वाले राजनीतिक दबावों से भी हम बच नहीं सकते। इसलिए हमने इनके साथ एक तरह का समझौता कर लिया है। और वह यह है कि हम परीक्षा देने की निपुणता को एक जीवन-रक्षक कुशलता के रूप में सिखाते हैं।

सहभागी अध्ययन और अनुशासन

विद्यालयों में लोकतंत्र पर जब भी चर्चा होती है सहकारी अध्ययन और कक्षा प्रबन्धन की बात आ ही जाती है। पहले साल फ्रेटनी का कार्यक्रम संकट के कगार पर पहुँच गया था क्योंकि हमने छात्रों से उन उत्तरदायित्वों की पूर्ति की उम्मीद लगा ली थी जो उनके लिए सम्भव ही नहीं थे। खासतौर पर हम एक चीज़ का अन्दाज़ा नहीं लगा पाए, और वह यह कि बहुत सारे बच्चे जो हमारे स्कूल में प्रवेश लेने आए हैं वे अपने पिछले स्कूलों में ज़्यादा कामयाब नहीं रहे थे। कई छात्रों में आत्मप्रबन्धन के बुनियादी गुणों का भी अभाव था। कई छात्र अपनी मर्ज़ी से (यानी बगैर अध्यापक से इसकी अनुमति लिए) पास लेकर पेशाबघर चले जाने जैसे सरल अधिकार का उपयोग करने में भी समर्थ नहीं थे। हमें लगा हमें प्रयत्नपूर्वक इन छात्रों को उस अतीत से निकलने में मदद करनी होगी जहाँ इनके साथ भेड़-बकरियों की तरह सलूक किया जाता था, और उस भविष्य में जाने के लिए मदद करनी होगी जहाँ हम चाहते थे कि वे एक ज़िम्मेदार नागरिक की तरह व्यवहार करें।

दूसरे साल हमने चेप्टर I नाम का एक प्रस्ताव रखा जिसमें कहा गया था कि हमारे विद्यालय में एक पूर्णकालिक आत्मसम्मान विशेषज्ञ रखा जाए।[2] इसने अध्यापकों के साथ मिलकर कक्षाएँ लीं और अपने विशिष्ट हस्तक्षेप द्वारा छात्रों का स्वाभिमान बढ़ाने की कोशिश की। हमने चौथी और पाँचवी कक्षा के छात्रों को लेकर मार्गदर्शक द्वारा मध्यस्तता का एक कार्यक्रम शुरू किया, लेकिन इसे बहुत ज़्यादा सफलता नहीं मिली। हमने अन्तर-आयु शिक्षण के भी कुछ प्रयोग किए जिसके अन्तर्गत बड़ी कक्षाओं के छात्र छोटी कक्षाओं के छात्रों के साथ पढ़ते और लिखते हैं और इस तरह पढ़ने-लिखने में उनकी सहायता करते हैं। इस प्रकार की गतिविधि से छोटे-बड़े दोनों छात्रों को लाभ होता है। उदाहरण के लिए, चौथी कक्षा के एक अध्यापक इसलिए परेशान थे कि जब भी उनकी कक्षा

के छात्र भूमिदर्शन कार्यक्रम के अन्तर्गत मिल्वॉकी नदी की तरफ घूमने जाते हैं, वे मना करने के बावजूद पानी के एकदम पास तक चले जाते हैं। तब उन्होंने पहली कक्षा के हर छात्र के साथ चौथी कक्षा के एक छात्र को रखना शुरू किया। इससे बच्चों के व्यवहार में नाटकीय परिवर्तन आ गया। अब बड़े बच्चे छोटे बच्चों को पानी के पास नहीं जाने दे रहे थे।

हमारे अध्यापक कक्षा की बैठकें भी करते हैं। न सिर्फ इसलिए कि हर सत्र के आरम्भ में कक्षा के नियम बनाए जा सकें, बल्कि कक्षा की समस्याएँ सुलझाने और विद्यालय के कार्यक्रमों में कक्षा की भागीदारी का स्वरूप निश्चित करने के लिए भी फैसले लिए जा सकें।

हमारे कई अध्यापक सहकारी प्रबन्धन का तरीका अपनाते हैं जिसके अन्तर्गत कक्षा को अनेक समूहों में बाँट दिया जाता है। उदाहरण के लिए, मैं अपनी कक्षा में रखी डेस्कों को पाँच समूहों में जमाता हूँ। हर समूह में छह डेस्कें होती हैं। हर समूह के पास किताबों की एक अलग अलमारी है जिसमें सामान और किया हुआ होमवर्क रखा जाता है। हर समूह अपना एक कप्तान चुनता है जो सामान का ध्यान रखता है। वह यह भी निश्चित करता है कि उसके समूह के छात्र कक्षा में ध्यान दें और कक्षा की गतिविधियों में बराबर भाग लें।

मैं छात्रों की भाषा, लिंग, नस्ल, और विशेष आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए हर नौ सप्ताह बाद उनका एक नया मिला-जुला समूह बनाता हूँ। दिन भर छात्र जिस समूह में चाहें जाकर काम कर सकते हैं, लेकिन उनका आधार समूह वही रहता है। आधार समूहों वाली यह व्यवस्था कक्षा के प्रबन्धन सम्बन्धी बहुत से काम करने की छूट छात्रों को देती है जिससे उनमें कक्षा के प्रति ज़िम्मेदारी की भावना पैदा होती है। इससे उन पर उनके सहपाठियों का भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है जिस कारण बच्चे कक्षा में बेहतर काम करते हैं।

लेकिन इस सबके बावजूद अनुशासन की समस्या तो रहती ही है, और कभी-कभी गम्भीर रूप में। इससे निपटने के लिए कुछ दूरगामी कदम उठाना ज़रूरी होता है। मसलन बच्चों को "स्व-सन्देश" सिखाना और सहपाठियों का हस्तक्षेप आयोजित करना। लेकिन इसके लिए कुछ त्वरित कदम उठाना भी ज़रूरी होता है। हमारी संस्कृति बच्चों को हज़ारों कारणों से दूसरों का अनादर करना सिखाती है, और ऐसा वह बहुत अच्छी तरह सिखाती है। जब तक बच्चा फ्रेटनी में रहता है उसके बहुसांस्कृतिक

पाठ्यक्रम में इस समस्या से निपटने के लिए आवश्यक सामग्री होती है। लेकिन छात्रों का व्यवहार सुधारने के लिए अध्यापकों को त्वरित और सख्त कदम भी उठाने पड़ते हैं। हमारे विद्यालय की पुस्तकालय प्रभारी मैगी मेलविन ने टीचिंग टॉलरेंस नामक पत्रिका से बात करते हुए बताया कि कक्षा में ऊधम और व्यवधान पर काबू पाने के लिए अध्यापक क्या करते हैं। उन्होंने कहा, "अक्सर जब ऐसी कोई घटना कहीं होती है तो यह कोशिश की जाती है कि मामला फटाफट निपट जाए, सब कुछ जल्दी से ठीक-ठाक हो जाए और पाठ पढ़ाने का काम शुरू हो जाए। लेकिन यहाँ [फ्रेटनी में] जब भी ऐसी कोई घटना होती है, हमारी कोशिश होती है कि समस्या की जड़ तक जाया जाए... परस्पर सम्बन्धों की समझ बढ़ाने के लिए ऐसे क्षण सचमुच शिक्षाप्रद होते हैं। और अगर आपको लगता है कि इसे सीखना ज़िन्दगी भर काम आएगा, तो आप थोड़ी देर के लिए पढ़ाई रोक देंगे और इससे निपटेंगे"(अहलग्रेन 1993, पृ. 30)।

विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम का तरीका

हर साल हम हर कक्षा के पाठ्यक्रम को यथासम्भव चुने हुए कुछ विषयों के माध्यम से विषय एकीकृत करने की कोशिश करते हैं। ये विषय अध्यापक और अभिभावक मिलकर चुनते हैं। हमारे द्वारा चुने गए विषय आम तौर पर सामाजिक उत्तरदायित्व और सक्रियता पर ज़ोर देते हैं। हमारे द्वारा चुने गए कुछ विषय हैं: "हम अपना खुद का और विश्व का सम्मान करते हैं", "जब हम संवाद करते हैं, हम सन्देश भेजते हैं", "हम पृथ्वी पर बदलाव ला सकते हैं", "हम दुनिया की कहानियाँ सुनाते हैं"। हर विषय के परिप्रेक्ष्य में हम विद्यालय के लिए एक परियोजना भी चुनने का प्रयास करते हैं। उदाहरण के लिए, "जब हम संवाद करते हैं, हम सन्देश भेजते हैं" विषय जब चुना गया तो छात्रों ने एक उपविषय "टीवी देखना स्वास्थ्य के लिए घातक हो सकता है" का अध्ययन किया। हमने एक "टीवी रहित सप्ताह" आयोजित किया। इस में छात्रों, उनके परिवारों और अध्यापकों ने शपथ ली कि वे पूरे एक सप्ताह तक टीवी नहीं देखेंगे।

"हम पृथ्वी पर बदलाव ला सकते हैं" विषय के अन्तर्गत हर कक्षा ने एक योजना हाथ में ली जिससे वे दिखा सकें कि वे बदलाव ला सकते हैं। नौ सप्ताह तक चलने वाली इस योजना का समापन एक प्रदर्शनी से हुआ जिसमें छात्रों ने बताया कि उन्होंने इस दौरान क्या किया। इसमें पुनर्चक्रण से लेकर अल सल्वाडोर के बेघर बच्चों के लिए पैसे इकट्ठे करना, कक्षा

में एक-दूसरे से अच्छा बर्ताव करना और एक जनसुनवाई में बताना कि मिल्वॉकी के बगल में संरक्षित वन क्यों बनना चाहिए जैसे काम शामिल थे।

विद्यालयव्यापी विषय चुनने का एक लाभ यह भी होता है कि नवनियुक्त अध्यापकों को जल्द ही हमारा दर्शन और कार्यपद्धति समझ में आ जाती है। इससे छात्रों और अध्यापकों को परियोजनाओं पर मिलजुलकर काम करने और ऐसी चीज़ों को रेखांकित करने का मौका मिला है जो हम सब में हैं।

आलोचनात्मक चिन्तन

एक ऐसे समाज में जहाँ की जनसंस्कृति राजनीतिक उदासीनता से लेकर नस्लवाद और लिंगवाद की संस्थानीकृत प्रवृत्तियों का प्रदर्शन करती हो, वहाँ बच्चों में लोकतांत्रिक भावनाओं को जगाना एक चुनौती है। फ्रेटनी में बच्चों को विश्व के बारे में गहराई से सोचने तथा समाज और उसमें अपनी भूमिका की आलोचना की क्षमता विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। यह हमारी प्रतिबद्धता है।

ऊपर उल्लिखित "टीवी निषेध सप्ताह" ऐसे ही मुद्दों को उठाने की हमारी एक कोशिश है। पहले साल जब हमने यह अभियान चलाया था तो लगभग आधे छात्रों, अभिभावकों और अध्यापकों ने शपथ ली थी कि वे एक सप्ताह तक टीवी नहीं देखेंगे। एक सप्ताह बाद अभिभावक पाठ्यक्रम समिति और स्थानीय प्रबन्धन परिषद् की बैठक में इस प्रयोग पर चर्चा हुई। बैठक का अभिमत था कि एक सप्ताह तक टीवी नहीं देखने से कुछ बच्चों की आदत बदल सकती है, लेकिन ज़रूरत बच्चों को यह सिखाने की है कि मीडिया को आलोचनात्मक तरीके से कैसे देखा जाए, क्योंकि हकीकत यह है कि बच्चे टीवी देखना नहीं छोड़ेंगे।

इस निष्कर्ष की वैधता को स्वीकार करते हुए अगले साल यह कोशिश की गई कि बच्चे टीवी देखते समय और विज्ञापन पढ़ते समय अपनी आलोचना क्षमता को जाग्रत रखने का विवेक सीख सकें। उदाहरण के लिए, दूसरी कक्षा की एक अध्यापिका ने बच्चों से कुछ पोस्टर बनवाए। ये पोस्टर पत्रिकाओं में छपने वाले विज्ञापनों की मदद से बनाए गए थे और उनसे यह पता चलता था कि मीडिया द्वारा किस तरह के व्यक्तियों को आदर्श और अनुकरणीय बताया जा रहा है। पता चला कि इनमें नस्लगत पूर्वाग्रह और लिंग सम्बन्धी रूढ़िबद्धता है, और इनमें मोटे व्यक्ति और चश्मा

लगाने वाले व्यक्ति लगभग पूरी तरह गायब हैं। अध्यापकों के एक दल ने "म्यूटेन्ट निंजा टर्टल्स" नामक टीवी शो और उसके साथ दिखाए जाने वाले विज्ञापनों की विडियो क्लिपिंग दिखाई ताकि छात्रों को टीवी पर दिखाई जा रही हिंसा की समीक्षा करने में मदद मिले।

हर साल स्थानीय प्रबन्धन परिषद तय करती है कि इस साल हमें "टीवी निषेध सप्ताह" मनाना है या नहीं और मनाना है तो किस रूप में। हमें कुछ मुश्किल सवालों से भी दो-चार होना पड़ता है: हम बचपन की एक ऐसी गतिविधि को कैसे नियंत्रित कर सकते हैं जो, अमरीकी बालरोग अकादमी के अनुसार, सोने के अलावा बच्चों का अधिकतम समय लेती है? हम एक ऐसी गतिविधि का मुकाबला किस तरह करें जो:

- मानसिक और शारीरिक निष्क्रियता को बढ़ावा देती है और रचनात्मकता की अवज्ञा करती है?
- यौनवादी और नस्लवादी रूढ़ियों का प्रचार करती है, हिंसा को बढ़ावा देती है तथा अनुपयोगी या महँगे उत्पाद और अस्वास्थ्यकर भोज्य पदार्थ खरीदने के लिए उकसाती है?
- यथार्थ का विरूपित चित्र पेश करती है?

कैसे हम ऐसी पारिवारिक गतिविधियों को प्रोत्साहित करें जो टीवी और विडियोगेम की लत का सही विकल्प हों, पर जो अकेले अभिभावक वाले परिवारों के दबावों के प्रति भी संवेदनशील हैं।

ऐसी चर्चाओं में सफलता की अनेक कहानियों को याद किया जाता है। उदाहरण के लिए, एक अभिभावक ने बताया कि "टीवी निषेध सप्ताह" से पहले उनका परिवार रात के भोजन के समय हमेशा टीवी देखता था। एक सप्ताह तक टीवी नहीं देखने के बाद उन्होंने अपने बच्चों से कहा कि रात के भोजन के समय टीवी नहीं चलेगा ताकि परिवार के सदस्य आपस में बातचीत कर सकें।

एक और अभिभावक ने अपने परिवार में हर सप्ताह में तीन या चार दिन "टीवी निषेध दिवस" बना लिए। एक और परिवार ने तो अपना टीवी अटारी पर ही रख दिया ताकि सदस्य टीवी देखने के लिए हतोत्साहित हों। एक और अभिभावक ने बताया कि उनके बच्चे आजकल "टीवी निषेध रात्रि" की माँग करने लगे हैं ताकि उस रात वे मम्मी-पापा के साथ खेल सकें।

इस प्रकार के अभियान से उठने वाली समस्याओं से निपटने के सबसे

अच्छे तरीके के बारे में अलग-अलग राय होने के बावजूद फ्रेटनी के अध्यापकों और अभिभावकों ने उसे समर्थन देना जारी रखा है, लेकिन थोड़े-बहुत परिवर्तनों के साथ ताकि ज़्यादा से ज़्यादा लोग इसमें शामिल हो सकें। हर साल छात्र और वयस्क एक "टीवी निषेध अनुबन्ध" पर हस्ताक्षर करते हैं, एक डायरी रखते हैं जिसमें वे लिखते जाते हैं कि कब-कब उन्होंने कितने-कितने समय टीवी देखा, "टीवी निषेध सप्ताह" के अपने अनुभवों को लिपिबद्ध करते हैं, परिवार के सदस्यों का साक्षात्कार लेते हैं जिसमें उनसे पूछा जाता है कि टीवी का उनके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा, और टीवी पर दिखाए जाने वाले विज्ञापनों और रूढ़ियों की समीक्षा करते हैं।

नियंत्रण

अपनी स्थापना के समय से ही फ्रेटनी की यह प्रतिबद्धता रही है कि स्कूल का नियंत्रण अध्यापकों और अभिभावकों के हाथ में रहना चाहिए, क्योंकि वे ही इसके मुख्य कर्ता-धर्ता हैं। लेकिन यह निर्णय विवादों से परे नहीं रहा है। उदाहरण के लिए, विद्यालय चलाने के लिए बनाई जाने वाली परिषद् के गठन को लेकर मतभेद उभरे। स्कूल आरम्भ होने के पहले के महीनों में एनएनएफ की संचालन समिति ही विद्यालय सम्बन्धी सभी निर्णय ले रही थी। इस समिति के अधिकार उन अध्यापकों को दिए जाने थे जो यहाँ पढ़ाएँगे और उन अभिभावकों को जिनके बच्चे यहाँ पढ़ेंगे। संचालन समिति के एक सदस्य ने सुझाव दिया कि परिषद् में ग्यारह कक्षाओं में से हरेक से दो-दो निर्वाचित अभिभावक रहें और केवल दो अध्यापक प्रतिनिधि रहें। एक और सदस्य ने सुझाव दिया कि परिषद् में अभिभावकों और अध्यापकों की संख्या बराबर होनी चाहिए। इसी समय हमें विद्यालय बोर्ड और अध्यापक यूनियन के बीच हुए एक समझौते का पता चला जिसके अनुसार ऐसी सारी परिषदों में अध्यापकों की संख्या 50 प्रतिशत से एक अधिक होना चाहिए। इससे मामला अंशतः सुलझ गया। काफी वादविवाद के बाद एनएनएफ ने तय किया कि विद्यालय बोर्ड और अध्यापक यूनियन से इस मामले में उलझने का कोई फायदा नहीं होगा; अच्छा यही रहेगा कि उनके समझौते के अनुसार ही चला जाए। लेकिन हमने परिषद् की कार्यप्रणाली में अभिभावकों की फेरबदल का प्रावधान रख दिया ताकि स्थानीय परिषद् की बैठकों में उनकी आवाज़ समान रूप से सुनी जा सके।

अध्यापकों और अभिभावकों की स्थानीय प्रबन्धन परिषद् की हर महीने बैठक होती है जिसमें विद्यालय सम्बन्धी सभी महत्वपूर्ण निर्णय लिए जाते हैं। हमने अपने प्रधानाध्यापक का चुनाव किया, रिपोर्ट कार्ड को नए सिरे से लिखा, अभिभावकों की सहभागिता और बहुसांस्कृतिक शिक्षा के बारे में नीति बनाई, स्कूल बजट का नए तरीके से आवंटन किया और समसामयिक घटनाओं पर आलोचनात्मक चर्चा को प्रोत्साहित करने के लिए नीति निर्धारित की। हमने पाठ्यक्रम समिति, धनसंग्रह समिति और भवन समिति बनाईं। भवन समिति में वे अध्यापक हैं जो निरन्तर बैठकें करते हैं और विद्यालय की तात्कालिक आवश्यकताओं पर विचार करते हैं। उदाहरण के लिए, भवन समिति ने इस मामले को सुलझाया कि परेशानी में पड़े नए अध्यापक की सारा विद्यालय कैसे मदद करे और यदि कोई शिक्षण सहायक बीमारी या किसी और कारण से लम्बी छुट्टी पर चला जाए तो उसका काम किसे सौंपा जाए।

अभिभावकों की उल्लेखनीय भागीदारी

अभिभावकों की भागीदारी लगभग हर सफल विद्यालय की अनिवार्य शर्त है। ल इस्कूला फ्रेटनी की स्थापना के लिए हमारे संघर्ष में और इसका पाठ्यक्रम विकसित करने में अभिभावकों ने उल्लेखनीय भागीदारी की। एक बार जब विद्यालय चालू हो गया तो आरम्भिक उत्साह ठण्डा पड़ गया और अभिभावकों की भागीदारी कम हो गई। जो अभिभावक इसके बाद भी सक्रिय रहे वे ज़्यादातर गोरे और मध्यवर्गीय थे, हालाँकि हमारे विद्यालय में गोरे छात्रों का प्रतिशत बहुत कम है।

इस असन्तुलन को मिटाने के लिए हमने तीन काम किए। पहला तो यह कि हमने स्थानीय प्रबन्धन परिषद् में कोटा निर्धारित कर दिया ताकि परिषद् में अफ्रीकन-अमरीकन और लेटिनो अभिभावकों का स्थान सुनिश्चित रहे। दूसरा यह है कि अपने बजट से पैसा निकालकर हमने दो अंशकालिक अभिभावक संगठक नियुक्त किए। इनमें से एक मेक्सिकन-अमरीकन था और दूसरा अफ्रीकन-अमरीकन। आगे चलकर इन दो अंशकालिक पदों के स्थान पर एक पूर्णकालिक पद कर दिया गया। और तीसरा यह कि हमने विस्कॉन्सिन राइटिंग प्रोजेक्ट (जो नेशनल राइटिंग प्रोजेक्ट का एक हिस्सा है) की मदद से एक अभिभावक परियोजना बनाई। हमने छह सप्ताह की एक सायंकालीन कार्यशाला आयोजित की और 15 अभिभावकों को पैसे देकर इसमें भाग लेने के लिए बुलाया। कार्यशाला में आमंत्रित अभिभावकों ने विद्यालय सम्बन्धी मुद्‌दों पर चर्चा की और अपने बच्चों

के बारे में लिखा। आम तौर पर जो अभिभावक विद्यालय गतिविधियों में भाग नहीं लेते थे, उन्हें भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया गया। कार्यशाला में कई अभिभावकों ने निश्चय किया कि वे विद्यालय के दूसरे मामलों में भी दिलचस्पी लेंगे और सक्रिय रहेंगे।

अभिभावकों के बीच का तनाव भी कभी-कभी समस्या पैदा कर देता था। उदाहरण के लिए, मध्यवर्गीय गोरे अभिभावक अफ्रीकन-अमरीकन या लेटिनो मूल की अकेली माताओं से उलझ पड़ते थे। जैसा कि क्रिस्टीन बाउडिच (1993) कहती हैं, "अभिभावकों की भागीदारी का शब्द आडम्बर बहुत से मामलों में परिवार के एक विशेष प्रकार के स्वरूप को मान्य करता है, उसे वैधता प्रदान करता है और उसे लागू करवाने की कोशिश करता है, और यह स्वरूप अब किसी भी सामाजार्थिक वर्ग के अमरीकी परिवार का प्रतिनिधित्व नहीं करता है।" फ्रेटनी में इस समस्या को इस रूप में देखा जा सकता है कि कुछ मध्यवर्गीय अभिभावक सोचते हैं कि जो अभिभावक जितनी ज़्यादा बैठकों में उपस्थित रहता है वह विद्यालय के लिए उतना ही फ्रिकमन्द है। ऐसे अभिभावकों को बैठकों की लत पड़ जाती है। वे चाहते हैं कि बैठकें जल्दी-जल्दी हों जिनमें देर तक बैठें। आने-जाने का और छात्र कल्याण का खर्चा उनके लिए कोई महत्व ही नहीं रखता।

इस समस्या का निदान हमने ऐसे किया है कि बैठकों का एजेण्डा योजनाबद्ध हो, बैठक ठीक से संचालित हो, और ज़्यादातर वास्तविक कार्य उपसमितियों में हो जाए और उपसमितियों की बैठकों का समय और स्थान अभिभावकों की सुविधा के अनुसार तय किया जाए। उदाहरण के लिए, पड़ोस में स्थित एक समुदाय समूह के सहयोग से हमारी स्थानीय परिषद् ने अभिभावकों का एक नया समूह गठित किया जिसका नाम था "द फ्रेण्डस ऑफ फ्रेटनी" (फ्रेटनी के मित्र)। इस समूह की बैठकें महीने में एक बार स्कूल खुलने के समय के तुरन्त बाद होती हैं, ताकि अकेली माँएँ बच्चों को स्कूल छोड़ने के बाद बैठक में आ सकें (बशर्ते गोदी के बच्चों को साथ लाने की मनाही न हो)।

समुदाय से सम्पर्क

ल इस्कूला फ्रेटनी समुदाय की सहभागिता के लिए प्रतिबद्ध है क्योंकि हमारा मानना है कि छात्रों, अध्यापकों, और अभिभावकों का जीवन विद्यालय तक ही सीमित नहीं है, वह समाज तक फैला हुआ है, और दूसरी तरफ समुदाय भी छात्रों के जीवन को सीधे तौर पर प्रभावित करता है।

उदाहरण के लिए, अपने तीसरे वर्ष में हमने अपने विद्यालय के छोटे बच्चों के लिए एक खेल का मैदान बनाने के लिए सामुदायिक कार्यकर्ताओं के साथ काम किया। इस समय तक छोटे बच्चों के खेलने के लिए हमारे मैदान का मुख्य आकर्षण टैंक के आकार का एक जंगल जिम ही था। जब हमने स्कूल को हाथ में लिया तो इसे हटाने का आसान रास्ता नहीं पकड़ा जिसकी सलाह कुछ शान्ति आन्दोलन वाले हमें दे रहे थे। इसके स्थान पर हमने अभिभावकों और छात्रों को साथ में लिया और शान्ति शिक्षा के व्यापक सन्दर्भ में अपना लक्ष्य निर्धारित किया।

हमारी तैयारी रंग लाई। हमने अनुरोध किया कि शहर प्रशासन हमें नए मैदान के लिए 70,000 डॉलर दे। महापौर के कार्यालय ने शुरू में तो हमारा विरोध किया – यह कहकर कि वे साल में सिर्फ दो नए मैदानों के लिए पैसा दे सकते हैं और हमारा नम्बर इस क्रम में साठवाँ है। तीस साल तक प्रतीक्षा करने का विचार हमें कुछ जँचा नहीं। उनका दूसरा तर्क यह था कि यदि वे फ्रेटनी को पैसा देंगे तो दूसरे स्कूलों के छात्र और अध्यापक भी माँगेंगे। हमने सोचा यही तो होना चाहिए और हम अपने काम में लग गए और नए मैदान के लिए पैसा पाकर ही रहे।

समुदाय की सहायता से किया गया दूसरा काम हमारे खेल के मैदान के सामने सड़क पार स्थित शराब की दुकान को हटवाना था। इसकी वजह से स्कूल की ज़मीन पर गन्दगी फैलती थी और वहाँ की गतिविधियों का पास-पड़ोस पर बुरा असर पड़ता था। अतः स्थानीय प्रबन्धन परिषद्, छात्रों और अध्यापकों ने शराब की दुकान का लाइसेंस रद्द करवाने की मुहिम चलाने का फैसला किया।

वर्तमान में हमारा स्कूल स्थानीय सामुदायिक संस्थाओं के साथ मिलकर हमारे स्कूल समय के बाद के कार्यक्रमों को विस्तारित करने और इसके लिए धन संग्रह करने का प्रयास कर रहा है, ताकि न केवल अपने छात्रों के लिए बल्कि पास-पड़ोस के उन बच्चों के लिए भी ज़्यादा काम किया जा सके जो दूसरे स्कूलों में पढ़ते हैं।

हमने क्या सीखा है?

फ्रेटनी परियोजना पर वार्षिक बजट की खींचतान का बहुत प्रभाव पड़ा है। हर सत्र के अन्तिम दो महीनों में हम अपनी प्रगति के परिणाम सामने रखने और अगले सत्र के लिए सुधार और संशोधन निश्चित करने की आशा रखते थे। लेकिन पिछले तीन साल से हो यह रहा था कि बजट

कटौती और उस कारण हमारे कार्यक्रम की गुणवत्ता का ह्रास रोकने के लिए अध्यापक और अभिभावक समुदायव्यापी प्रयासों में सारा समय लगा रहे थे। हालाँकि अब तक हम बजट की भयानक कटौती से खुद को बचाने में किसी तरह कामयाब रहे हैं, लेकिन इसमें जो समय और ऊर्जा लगी है उसने फ्रेटनी कार्यक्रमों को बेहतर बनाने के हमारे प्रयासों में निश्चित रूप से अवरोध पैदा किया है।

स्थानीय प्रबन्धन की हमारी प्रतिबद्धता के कारण अनेक अध्यापकों और अभिभावकों को कभी-कभी ऐसा लगा है जैसे उनका सारा समय स्कूल सम्बन्धी चिन्ताओं और झँझटों में ही खत्म हो जाता है। स्वाभाविक है कि स्कूल चलाना हमारी पहली प्राथमिकता है, लेकिन हम ज़िला स्तर पर नीतियों में बदलाव के लिए भी प्रयत्नशील रहे हैं क्योंकि इससे फ्रेटनी की स्थिति सीधे तौर पर सुधर सकती है। उदाहरण के लिए, अनेक अध्यापक न सिर्फ कक्षाओं में पढ़ाने का अपना काम करते हैं बल्कि साथ ही साथ पाठ्यक्रम निर्धारण समिति में भी काम करते हैं (पीटरसन 1989)। वे शहर शिक्षक संगठन में भी काम करते हैं जो समग्र भाषा शिक्षण और बहुसांस्कृतिक पाठ्यक्रम का काम देखती है। इसके अलावा वे ज़िला पुस्तकालय परिषद्, अनेक कार्यदलों और कमीशनों (खासकर वे जो ज़िलावार पाठ्यक्रम सुधार के लिए बनाए जाते हैं) में भी काम करते हैं (लीवाइन 1991)।

शुरुआत में इस परियोजना से हमने जो उम्मीदें रखी थीं उनमें से कई औंधे मुँह गिरी हैं। कम ही लोगों ने सोचा था कि इस स्कूल के चलने की सचमुच कोई सम्भावना है। इनमें से भी बहुत कम थे जो स्कूल सम्बन्धी हमारी परिकल्पना को साकार करने की कठिनाई को समझ पाए। ल इस्कूला फ्रेटनी को अस्तित्व में लाना एक कठिन लेकिन फलदायक अनुभव रहा है जिससे हमें काफी कुछ सीखने को मिला है।

पहला सबकः सतह से उठने वाले आन्दोलन सही अर्थों में परिवर्तनकारी हो सकते हैं

हमारे संघर्ष के आरम्भिक चरण में मिले महत्वपूर्ण सबक को मारग्रेट मीड के शब्दों में इस तरह व्यक्त किया जा सकता हैः "विचारवान और प्रतिबद्ध नागरिकों का एक छोटा-सा समूह भी दुनिया को बदल सकता है, इस बात पर कभी शंका मत करना। सच तो यह है कि दुनिया इसी तरह बदलती है।" हमारी आरम्भिक कामयाबियों से मिल्वॉकी का प्रगतिशील

राजनीतिक समुदाय और शिक्षा समुदाय दोनों समान रूप से चौंक गए थे। लोग सामाजिक संघर्षों में पराजित होने के इतने अभ्यस्त हो चुके थे कि एक स्पष्ट विजय उनके लिए अनापेक्षित थी। जब लोगों ने पूछा, "आपने यह कैसे किया?" तो हमने कहा, "कड़ी मेहनत, सुसम्बद्धता और मौका मिलने पर तुरन्त हरकत में आ जाना।" अध्यापकों और अभिभावकों को उनकी बचपन की शिक्षा ने यही सिखाया था कि समृद्ध और प्रसिद्ध लोग ही असली इतिहास निर्माता होते है। इसलिए वे बदलते समाज में सतह से उठने वाले संगठित आन्दोलनों की शक्ति और महत्व को कभी नहीं समझ पाए। सतह से उठने वाले आन्दोलनों का अध्ययन स्कूली पाठ्यक्रम का एक अनिवार्य हिस्सा होना चाहिए।

हालाँकि व्यक्तियों के एक छोटे-से समूह ने संघर्ष में विजय प्राप्त कर फ्रेटनी की स्थापना का पथ प्रशस्त किया, लेकिन महत्व की बात यह भी थी कि स्कूल बोर्ड ने जागरूक और प्रबुद्ध अधीक्षकों को नियुक्ति दी। इससे हम केन्द्रीय कार्यालय से हर समय उलझे रहने की बजाय शिक्षा सम्बन्धी महत्वपूर्ण मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करने में सफल हो पाए। इन अधीक्षकों ने न सिर्फ सुधारों का समर्थन किया अपितु यह भी माना कि निचले स्तर पर सहभागिता को बढ़ाकर ही इन सुधारों को सम्भव बनाया जा सकता है।

स्कूल सुधारों के लिए ज़िला नेतृत्व और निर्माण तथा समुदाय दोनों के स्तरों पर प्रतिबद्ध व्यक्तियों के समूह का होना ज़रूरी है। यदि सिर्फ ज़िला स्तर पर ही प्रतिबद्धता है तो स्कूल स्तर पर सुधार असफल हो जाएँगे, क्योंकि यह "ऊपरवालों का हुकुम" हो जाएगा जिससे वे अध्यापक कोई जुड़ाव महसूस नहीं कर पाएँगे जिन्हें अन्ततः कक्षाओं में इन सुधारों को लागू करना है। यदि निचले स्तर पर उत्साह है लेकिन ज़िला स्तर पर उदासीनता है तो सुधारों के रास्ते में इतने रोड़े अटकाए जाएँगे कि नीचे के लोगों की सारी ऊर्जा फालतू की झगड़ेबाज़ी में ही खत्म हो जाएगी और सचमुच में जो करना है वह रह ही जाएगा।

दूसरा सबकः सफल स्कूली सुधारों के लिए अन्तर्नस्ली एकता अनिवार्य है

हमने जो दूसरा सबक अपने अनुभव से सीखा वह यह है कि स्कूली सुधारों को आगे बढ़ाने के लिए अन्तर्नस्ली एकता अनिवार्य है। यदि अफ्रीकी-अमरीकी, लेटिनो और गोरे लोग मिलकर काम नहीं करते तो हमारे

आरम्भिक संगठनात्मक प्रयास भी असफल हो गए होते। नस्ल के आधार पर बँटे हुए समाज में बहुनस्ली समूह बनाकर काम करना बहुत मुश्किल है। लेकिन फिर भी बहुधा ऐसे प्रयासों की सफलता परियोजना में अन्तर्निहित राजनीति और उससे जुड़े व्यक्तियों पर निर्भर करती है।

समानता और बहुसंस्कृतिवाद पर विचार करते समय सबसे पहले सत्ता और स्वर का ध्यान रखा जाना चाहिए। वास्तविक नियंत्रण किसके हाथ में है? किसकी आवाज़ सचमुच सुनी जा रही है? फ्रेटनी में हमने तय किया कि नस्लवाद विरोध और सभी व्यक्तियों की समानता हमारे लिए जीवनमूल्य होंगे जिन्हें हर स्तर पर, हर कक्षा में सिखाया जाएगा। कुछ अश्वेत लोगों ने इसे बहुनस्लीय एकता के निर्माण के प्रति हमारी गम्भीरता का स्पष्ट संकेत समझा। हमने निर्णय लेने वाले समूह भी गठित किए जिनमें अध्यापकों के साथ अभिभावक भी निर्णय लेकर स्कूल चलाने में सहभागी होते थे। और अन्ततः हमने बहुभाषी छात्रों और अल्पभाषी छात्रों के बीच सत्ता सम्बन्धों को सुलझाने के लिए दोनों भाषाओं को यथासम्भव समान महत्व दिया।

तीसरा सबकः सीखने के लिए और पुनरावलोकन के लिए समय रखो

सामान्यतया किसी स्कूली कार्यक्रम की रूपरेखा जल्दबाज़ी में नहीं बनाई जा सकती। कार्यक्रम की योजना बनाने के लिए और बाद में अपनी प्रगति की समीक्षा करने और विद्यालय का संचालन करने के लिए शिक्षाशास्त्रियों और अभिभावकों के पास पर्याप्त समय और इच्छा होनी चाहिए। हम अध्यापकों के लिए अतिरिक्त समय जुटाने में सफल हुए क्योंकि (1) हमने मध्याह्न के अन्तराल को दोपहर के भोजन के अन्तराल से जोड़ दिया, ताकि दोपहर के भोजन की आयोजना अवधि को बढ़ाया जा सके; (2) चित्रकला, संगीत और शारीरिक शिक्षा के घण्टे इस तरह रखे कि इनके अध्यापकों को एक साथ रहने का अवसर मिल सके; (3) स्कूल आरम्भ होने का समय दस मिनिट पहले कर दिया ताकि महीने में एक दिन बच्चों की जल्दी छुट्टी हो जाए और अध्यापकों को आगे की योजना बनाने के लिए आधा दिन मिल सके।

अध्यापकों के लिए योजना बनाने आदि के कामों के लिए समय निकालना जितना कठिन है, उससे कहीं अधिक कठिन है अध्यापकों और अभिभावकों

को मिलकर काम करने के लिए समय निकालना। हम भी इस समस्या का कोई आसान समाधान नहीं ढूँढ पाए। लेकिन हमने इतना ज़रूर सुनिश्चित किया कि स्थानीय प्रबन्धन परिषद् की बैठकें नियम से हों और ठीक तरह से हों, ताकि उनका अधिक से अधिक लाभ मिल सके।

जैसे-जैसे स्कूल बढ़ता गया, समय की समस्या प्रमुख समस्या बनती गई। नए अध्यापकों को प्रशिक्षित करने के लिए, नए पाठ्यक्रम की रूपरेखा बनाने के लिए, मूल्यांकन के बेहतर तरीके सोचने और लागू करने के लिए और एक-दूसरे से सीखने के लिए... हर काम के लिए समय का होना ज़रूरी था। यदि स्कूल ज़िला चाहता है कि नए और वरिष्ठ अध्यापक अपने तरीकों में परिवर्तन करें और दिन-ब-दिन कठिन होती जाती सामाजिक परिस्थितियों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलें तो संयुक्त आयोजना, शिक्षक विकास और पुनरावलोकन के लिए स्कूल की दिनचर्या में अधिक समय निकालना पड़ेगा।

चौथा सबक: अभिभावकों की सच्ची भागीदारी सबसे महत्वपूर्ण है

अभिभावकों की भागीदारी ठोस और सतत् होनी चाहिए। अभिभावकों का काम धन उगाहना और यात्राओं की योजनाएँ बनाना ही नहीं, उससे कहीं अधिक है। सत्ता, उपस्थिति और संसाधन असली मुद्दे हैं। क्या अभिभावक जब स्कूल में होते हैं तो सत्ता का असली उपयोग करते हैं? क्या वे स्कूल और कक्षा में लगातार अपनी उपस्थिति महसूस कराते हैं? क्या अभिभावकों की भागीदारी के लिए आवश्यक संसाधन स्कूलों के पास होते हैं? फ्रेटनी का अनुभव बताता है कि अभिभावक तभी स्कूल आते हैं जब उन्हें स्कूल के भविष्य और अपने बच्चों के जीवन को सीधे प्रभावित करने वाले निर्णय लेने की प्रक्रिया में अपनी सत्ता का इस्तेमाल करने का अवसर प्राप्त हो। फ्रेटनी में इसका मतलब था पाठ्यक्रम, बजट, सुविधाओं का नवीनीकरण और कर्मचारियों की नियुक्ति जैसे मसलों पर अध्यापकों और अभिभावकों के संयुक्त निर्णय (पीटरसन 1993)।

अभिभावकों का सशक्तीकरण कभी-कभी लोकतांत्रिक विद्यालय के सिद्धान्तों के प्रतिकूल लग सकता है, क्योंकि कुछ अभिभावकों की सोच न प्रगतिशील होती है न लोकतांत्रिक। उदाहरण के लिए, अमरीका भर के अभिभावक पुस्तकों पर प्रतिबन्ध लगाने के पक्षधर रहे हैं, उन्होंने स्कूल में प्रार्थना किए जाने के लिए प्रचार किया है तथा समानता, वर्णभेद निषेध,

विकासवाद और बहुसांस्कृतिकता की शिक्षा का विरोध किया है (कार्प 1993)।

एक तरफ अभिभावकों के सशक्तीकरण की आवश्यकता और दूसरी तरफ प्रगतिशील शैक्षणिक और सामाजिक नीतियों का प्रसार – इस अन्तर्विरोध से कोई विद्यालय कैसे निपटे? सबसे पहले तो ऐसे ढाँचे बनाए जाने चाहिए जिनके तहत यह सतत् संवाद और लगातार बहस जारी रह सके। ये ढाँचे ऐसे नहीं होने चाहिए जिनसे उच्च शिक्षा प्राप्त या अधिक अवकाश वाले लोग लाभान्वित होते हों। बहस को कार्यक्रम के लक्ष्यों, अपेक्षित परिणामों और वैकल्पिक रणनीतियों पर खुले विचार-विमर्श से कतराना नहीं चाहिए। दूसरे, स्कूल के भीतर ही एक समूह को प्रगतिशील नीतियों को बढ़ावा देने और अपने साथियों को ऐसे मामलों में चुनौती देने का काम हाथ में लेना चाहिए।

पाँचवा सबकः परिवर्तन को बढ़ावा देने वाले ढाँचों का संस्थानीकरण होना चाहिए

हालाँकि हर विद्यालय के पुनर्जागरण की हिमायत की जानी चाहिए, लेकिन हमें यह भी समझना चाहिए कि एक स्कूल में होने वाले सुधारों की अपनी एक सीमा होती है। सातवें दशक के अधिकांश वैकल्पिक विद्यालय संस्थापकों के जाते ही निष्प्राण हो गए। इनमें जो सफल रहे – फ्रेटनी सहित – सो इसलिए कि इनमें अनेक व्यक्तियों ने यथास्थिति के विरुद्ध संघर्ष में अपना तमाम सारा समय और ऊर्जा लगाई। इस प्रकार के प्रयत्न तत्काल एक स्कूल से दूसरे स्कूल में स्थानान्तरित नहीं किए जा सकते। हमें ऐसे ढाँचों का संस्थानीकरण करना चाहिए जो सार्वजनिक विद्यालयों और शिक्षक समुदाय में परिवर्तन को मौका और बढ़ावा देते हैं। उदाहरण के लिए, सवैतनिक अभिभावक संगठनकर्ता विद्यालय स्तर पर अभिभावकों की भागीदारी को काफी बढ़ा सकते हैं। ज़िला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर मूल्यांकन की ऐसी पद्धति अपनाई जाए जो मानकीकृत परीक्षा प्रणाली पर निर्भर न हो ताकि (चेप्टर I कार्यक्रमों के सिलसिले में) अध्यापक अधिक समग्र मूल्यांकन की दिशा में अग्रसर हो सकें।[3] विद्यालयों के समय और वार्षिक कार्यक्रम को नियंत्रित करने वाले सरकारी नियमों को अधिक लचीला होना चाहिए ताकि विद्यालय समन्वय और आयोजना के लिए अधिक समय निकाल सकें। नए और संघर्षरत अनुभवी अध्यापकों की सहायता के लिए ज़िला स्तरीय कार्यक्रम बनाए जाने चाहिए ताकि

विद्यालयों को इन कार्यक्रमों पर अपरिमित समय और संसाधन खर्च न करने पड़ें।

छठा सबकः सफल स्कूल सुधार व्यापक सामाजिक परिवर्तन के प्रयास का ही एक भाग हैं

एक छोटे स्तर पर हमें फ्रेटनी परियोजना में कुछ सफलता मिली है। अभिभावक, अध्यापक और छात्र इस विचलित समाज में एक अधिक मानवीय और लोकतांत्रिक विद्यालय के निर्माण के लिए यदाकदा की असहमतियों के बावजूद लगातार मिलकर काम कर रहे हैं। फ्रेटनी के अनुभव ने हमें सिखाया है कि किसी एक विद्यालय के सुधारों को ज़िला स्तरीय पाठ्यक्रम सुधार और ढाँचागत परिवर्तनों के व्यापक परिप्रेक्ष्य में ही होना चाहिए। सामान्यतया स्कूल सुधारों को सामाजिक परिवर्तनों के साथ सम्बद्ध होना चाहिए। कक्षाओं में बच्चों की अधिक संख्या, शिक्षकों के पास आयोजना के लिए पर्याप्त समय न होना और इसके साथ ही गरीबी, बाल यौन शोषण और बेरोज़गारी जैसी बड़ी समस्याएँ – इन सबका परिणाम यह है कि मनुष्य की आवश्यकता पर चन्द लोगों की मुनाफा कमाने की प्रवृत्ति ने विजय प्राप्त कर ली है।

इन व्यापक संघर्षों के परिप्रेक्ष्य में अपने शहर, राज्य या देश को अधिक सुरक्षित, अधिक स्वस्थ बनाने के लिए विद्यालय समुदाय क्या कर सकता है? अपने विद्यालय में छोटे बच्चों के लिए खेल के मैदान को पुनर्निर्मित करने का हमारा सफल अभियान इस बात का एक छोटा-सा उदाहरण है कि पास-पड़ोस का सहयोग किस तरह एक ऐसी परियोजना के लिए धन जुटा सकता है जिससे स्कूल का भी फायदा हो और उसका भी। इस प्रकार के छोटे-छोटे प्रयास एक बड़े समुदायव्यापी सहकार की आधारशिला बन सकते हैं। इससे अभिभावक एक ऐसे अभियान से जुड़ सकते हैं जो विद्यालय के साथ-साथ समूचे समुदाय के लिए भी हितकारी हो।

अन्ततः फ्रेटनी और फ्रेटनी जैसे विद्यालयों की सफलता समाज में समानता और न्याय की स्थापना के हमारे प्रयास से अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हुई है। अपने प्रयासों के फलदायी होने के लिए ज़रूरी है कि हमारी परिकल्पना जहाँ एक ओर स्थानीय हो वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय भी हो। जिस तरह पाँचवीं कक्षा के मेरे छात्रों की चेतना वॉशिंगटन में समलैंगिकों के अधिकारों को लेकर हुए प्रदर्शन से जुड़ गई थी, ठीक उसी तरह फ्रेटनी

जैसे स्कूलों का भविष्य व्यापक सामाजिक आन्दोलनों के साथ जुड़ा हुआ है। हमारे विद्यालय, हमारे शहर और हमारे बच्चे गरीबी, असमानता और हिंसा के बढ़ते झंझावात के आगे तब तक नहीं टिक पाएँगे जब तक एक ऐसा सामाजिक आन्दोलन नहीं होगा जो समाज से वह सब चाहे जो कई लोग आज विद्यालयों से चाह रहे हैं।

टिप्पणियाँ

1 नवें दशक में मेडलिन हंटर नामक एक प्रसिद्ध शिक्षाविद् ने सात सूत्रों पर आधारित पाठ योजना की सिफारिश की थी। उदाहरण के लिए, स्पष्टतः वर्णित उद्देश्य, कौशल विकास के लिए निर्देशित अभ्यास और शैक्षणिक वाद-विवादों में सक्रिय भागीदारी और मौखिक पुनर्पुष्टि। अमरीका के कुछ विद्यालयों में इन सूत्रों को अध्यापन काएकमात्र आधार मान लिया गया था। बड़े विवादास्पद रूप से इन्हीं को प्रभावशाली शिक्षण को परिभाषित करने वाले कारक मान लिया गया था और इन्हीं के आधार पर अध्यापकों के कार्य निष्पादन का मूल्यांकन किया जाता था।

2 चेप्टर I एक संघीय कार्यक्रम है जो गरीब और पिछड़े बच्चों में बुनियादी कौशलों के विकास के लिए अतिरिक्त राशि उपलब्ध कराता है।

3 यद्यपि चेप्टर I की राशि का अनेक प्रकार के कामों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है, ऐसे सारे वित्तपोषित कार्यक्रमों का मूल्यांकन बुनियादी कौशलों सम्बन्धी मानकीकृत संख्यामूलक परीक्षाओं में बच्चों के प्राप्तांकों के आधार पर ही किया जाता है।

सन्दर्भ

अहलग्रेन, पी. (1993) ल इस्कूला फ्रेटनीः रिफलेक्शन्स ऑन अ बायलिंगुअल, एण्टीबायस, मल्टी-कल्चरल एलीमेंट्री स्कूल।टीचिंग टॉलरेन्स 2 (2): 26-31.

बैंक्स, जे. (1991) टीचिंग स्ट्रेटजीस फॉर एथनिक स्टडीज़।बॉस्टनः एलीन एण्ड बेकन.

बॉवडिच, सी. (1993) रेस्पॉन्सेस टू मिशेल फाईनज़ (अ) पैरेंट इन्वॉल्वमेंटः रिफलेक्शन्स ऑन पेरेंट्स, पावर एण्ड अरबन पब्लिक स्कूल्स।टीचर्स कॉलेज रिकॉर्ड95 (2): 177-81.

एडेल्स्की, सी. (1991) नॉट एक्वायरिंग स्पैनिश एज़ अ सेकण्ड लेंग्वेजः द पॉलिटिक्स ऑफ सेकण्ड लेंग्वेज एक्विज़ीशन। विद लिट्रेसी एण्ड जस्टिस फॉर ऑलःरिथिंकिंग द सोशल इन लेंग्वेज एण्ड एजुकेशन में। न्यू यॉर्कः फामर प्रेस.

कार्प, एस. (1993) ट्रबल ओवर द रेनबो।रीथिंकिंग स्कूल्स 7 (3): 8-10.

लीवाइन, डी. (1991) अ न्यू पाथ टू लर्निंग।रीथिंकिंग स्कूल्स 6 (1): 1, 21, 23.

माइनर, बी. (1991) टेकिंग मल्टीकल्चरल/एण्टीरेसिस्ट एजुकेशन सीरियसलीः एन इंटरव्यू विद एनिड ली। रीथिंकिंग स्कूल्स 6 (1): 6.

पीटरसन, आर. (1987) एनसीटीई इश्यूज़ बेसल रिपोर्ट कार्ड।रीथिंकिंग स्कूल्स 2(3) 6-7.

पीटरसन, आर. (1988) बेसल अडोप्शन कन्ट्रोवर्सी कन्टीन्यूज़ इन्टू सेकण्ड ईयरः होल लेंग्वेज पायलट प्रोजेक्ट लॉन्च्ड।रीथिंकिंग स्कूल्स 3 (1): 9.

पीटरसन, आर. (1989) डोन्ट मोर्न, ऑर्गनाइज़ः टीचर्स टेक द ऑफेन्सिव अगेन्स्ट बेसल्स।थ्योरी इन्टू प्रैक्टिस28 (4): 295-99.

पीटरसन, आर. (1993) क्रिएटिंग अ स्कूल दैट ऑनर्स द ट्रेडीशन्स ऑफ अ कल्चरली डाइवर्स स्टूडेण्ट बॉडीः ल इस्कूला फ्रेटनी। जॉर्जी ए स्मिथ (सं.)।पब्लिक स्कूल्स दैट वर्कः क्रिएटिंग कम्यूनिटि में। न्यू यॉर्कः रूटलेज.

टिनोरियो, आर.(1986) सर्वाइविंग स्कॉट फोर्समैनः कन्फेशन्स ऑफ अ किंडरगॉटन टीचर।रीथिंकिंग स्कूल्स 1(1): 1, 8.

टिनोरियो, आर. (1988) रेसिपि फॉर टीचिंग रीडिंगः होल्ड द बेसल।रीथिंकिंग स्कूल्स 2 (3): 4.

5 बारबरा एल. ब्रॉडहेगन

परिस्थिति ने हमें विशिष्ट बनाया

सम्पादकों की ओर से

अन्यायपूर्ण और अक्सर अर्थहीन शिक्षा से असन्तुष्ट कुछ अध्यापक जब देखते हैं कि विद्यालय के स्तर पर कोई परिवर्तन करना उनके लिए सम्भव नहीं है तो वे अकेले ही या अपने सहयोगियों के साथ अपनी कक्षा के स्तर पर ही लोकतांत्रिक सिद्धान्तों को व्यवहार में परिणत करने का काम शुरू कर देते हैं। इस अध्याय में मेडीसन, विस्कॉन्सिन के एक माध्यमिक विद्यालय (*11-14* वर्षीय बच्चों) की अध्यापिका बारबरा ब्रॉडहेगन बता रही हैं कि कैसे उन्होंने और उनके सहयोगी ने एक लोकतांत्रिक शिक्षण समुदाय बनाया। इस समुदाय का पाठ्यक्रम छात्र और अध्यापक मिलकर बनाते थे और यह उन प्रश्नों पर आधारित होता था जो बच्चे अपने बारे में और अपनी दुनिया के बारे में पूछना चाहते थे। इस पाठ्यक्रम को केन्द्र में रखकर समूह ने कुछ अन्य प्रगतिशील तरीकों का इस्तेमाल किया, मसलन सहकारी नियंत्रण, सहकारी शिक्षण और छात्रों द्वारा संचालित अभिभावकों की बैठकें। अनिवार्य मानकीकृत परीक्षाओं और पाठ्यक्रम सम्बन्धी केन्द्रीय दिशानिर्देशों के होते हुए भी यह सब किया गया। यह प्रयास यद्यपि सफल रहा, लेकिन इसकी राह में कठिनाइयाँ भी कम नहीं आईं। क्या काम किसे करना है से लेकर पाठ्यपुस्तकेतर संसाधन खोजने व सहकर्मियों की आलोचना तक में लगातार कठिनाइयाँ आईं। और वे परेशानियाँ तो आईं ही जो लोकतांत्रिक अध्यापकों को हमेशा उठाना पड़ती हैं।

हमने अपना संविधान खुद बनाया

सातवीं की कक्षा कौतुहल और उत्तेजना से भरपूर थी। छात्र गर्दन

उचका-उचकाकर दरवाज़े से बाहर देखने की कोशिश कर रहे थे। “आ गए,” किसी ने कहा। सारे छात्र ढंग से बैठ गए। सबकी नज़रें प्राचार्य पर टिक गईं जिन्होंने अभी-अभी कक्षा में प्रवेश किया था। कक्षा के प्रतिनिधि के रूप में एक छात्र ने बोलना शुरू किया, “आदरणीय प्राचार्य महोदय, आज हम अपनी कक्षा के संविधान का पाठ करने और उसे स्वीकार करने जा रहे हैं। इसका साक्षी रहने के लिए आपको यहाँ आमंत्रित किया गया है।” एक आवाज़ उठी। पचपन आवाज़ों ने उसका साथ दिया:

मारक्वेट मिडिल स्कूल की कक्षा क्रमाँक *201/202* के हम छात्र अपनी कक्षा को श्रेष्ठ कक्षा बनाने के लिए निम्न सूत्रों के साथ रहने की शपथ लेते हैं:

- हम मानते हैं कि हर व्यक्ति विशिष्ट और अनूठा है। दो व्यक्तियों के बीच अन्तर होता है, यह हम समझते हैं।
- हर व्यक्ति के साथ आदर और सम्मान के साथ व्यवहार किया जाएगा। हमारी कक्षा में किसी को नीचा दिखाने के लिए कोई स्थान नहीं है।
- परस्पर विश्वास की भावना पैदा करने के लिए हम एक-दूसरे से ईमानदारी का व्यवहार करेंगे।
- हम मतभेदों को सुलझाना सीखेंगे, ताकि अनसुलझे मतभेदों के साथ रहना भी सीख सकें।
- हर व्यक्ति दूसरे की बात को गम्भीरतापूर्वक सुनेगा।
- हम एक दूसरे के साथ सहयोग और सहभाग करेंगे।
- शिक्षण अर्थपूर्ण होगा।
- हम जानते हैं कि हरेक के सीखने का तरीका अलग होता है।

होमवर्क, कार्यक्षेत्र भ्रमण और करके देखने के अनुभव अलग-अलग प्रकार के होंगे ताकि हर कोई सीख सके। यदि हर व्यक्ति कोशिश करे, तो हम सब सफल होंगे।

- मज़े लेना स्वाभाविक रूप से हमारे अनुभव का हिस्सा होगा।
- सभी लोग अनुशासनबद्ध और वक्त के पाबन्द रहेंगे।
- अपनी बारी में कुछ न करने की लोगों की इच्छा का हम सम्मान करेंगे।

हम एक व्यक्ति के रूप में और एक सहयोगी-सहभागी समुदाय के रूप में उक्त सूत्रों का पालन करने की पूरी कोशिश करेंगे।

एक बच्चे ने ताली बजाना शुरू किया, और तुरन्त सारी कक्षा तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठी। ये तालियाँ हमारे लिए थीं, हममें से हरेक के लिए, और हमने जो किया उसके लिए भी। प्राचार्य ने अपने सम्बोधन में कुछ अवसरोचित और उत्साहवर्धक बातें कहीं और चले गए। अब हम युवाओं और वयस्कों का एक समूह थे जिन्होंने स्वयं अपना संविधान बनाया था और जो यथाशक्ति इसका पालन करने को वचनबद्ध थे।

कुछ ही अध्यापक होंगे जो 12-13 साल के चार दर्जन बच्चों की कक्षा में जाना चाहेंगे और उन्हें किसी सार्थक वाद-विवाद में प्रवृत्त करने की कोशिश करेंगे। हम सबने पढ़ा है कि किशोरों या युवाओं के इतने बड़े समूह किस कदर उद्दण्ड हो सकते हैं और हम में से अनेक सोचते हैं कि हम ऐसे समूह को काबू में नहीं रख पाएँगे। लेकिन यदि हमारा लक्ष्य एक लोकतांत्रिक समुदाय बनाना है तो हर युवा को अपनी बात कहने का मौका मिलना चाहिए और अध्यापकों को उनकी बात सुनने के लिए तत्पर रहना चाहिए। यह अध्याय ऐसे ही एक समुदाय के निर्माण के बारे में है। मेडिसन, विस्कॉन्सिन में स्थित मारक्वेट मिडिल स्कूल (जिसका नाम अब जॉर्जिया ओ'कीफ मिडिल स्कूल हो गया है) के अध्यापकों और छात्रों ने मिलकर एक लोकतांत्रिक कक्षा के निर्माण के लिए जो किया, यह उसी की कहानी है।

मारक्वेट मिडिल स्कूल में भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक परिवेशों से आए कोई 600 छात्र हैं। इनमें से अनेक मुफ्त या सस्ती दर पर दोपहर का भोजन पाने के अधिकारी हैं। हर कक्षा में सभी प्रकार के छात्र हैं, और जिन छात्रों को विशेष शिक्षा की ज़रूरत है उन्हें इन सभी कक्षाओं में शामिल किया गया है। विद्यालय के प्रबन्धकों ने नए शैक्षिक नवाचारों का समर्थन किया है।

जिन दो वर्षों की यह कहानी है उनमें ऐसे 56 छात्र दो अध्यापकों के ज़िम्मे होते थे। अध्यापकों की ज़िम्मेदारी उन्हें गणित/विज्ञान और भाषा कला/सामाजिक अध्ययन पढ़ाने की थी। इनके साथ एक विशेष शिक्षक भी होते थे जिनका काम "सीखने में अक्षम" छात्रों के साथ काम करना था। हर सेमिस्टर में विश्वविद्यालय का एक विद्यार्थी भी अध्यापक बनकर हमारे साथ काम करने आता था।

मैं इसमें कैसे आई?

मैं अनेक वर्षों से पढ़ा रही हूँ। अनेक वर्षों तक मैंने उन बच्चों के साथ काम किया है जिन्हें "सीखने में अक्षम" करार दिया गया था। इस काम ने मुझे विस्कॉन्सिन और न्यू यॉर्क के शिक्षा सम्भागों में आने वाली अनेक कक्षाओं में जाने का दुर्लभ अवसर प्रदान किया। शायद ही कहीं मेरा साबका ऐसे छात्रों से पड़ा हो जो इस निर्णय में भागीदार रहे हों कि उन्हें क्या पढ़ना है और कैसे पढ़ना है।

कक्षाओं में जो कुछ होता था उसमें से ज़्यादातर बच्चों को निरर्थक लगता था, और अध्यापक शायद ही इस बात का ध्यान रखते थे कि एक कक्षा के पाठ का दूसरी कक्षा के पाठ से कोई सम्बन्ध है या नहीं। छात्र सामान्यतया एक कक्षा में 45 मिनिट का भाषण सुनते थे और फिर दूसरी कक्षा में जाकर बैठते थे और वहाँ भी 45 मिनिट सुनते थे। जब ये युवा पूछते थे, "यह सब पढ़ना क्यों ज़रूरी है?" या "क्या यह परीक्षा में पूछा जाएगा?" या "क्या यह हमें याद करना पड़ेगा?" तो कभी-कभी मुझे समझ में नहीं आता था कि उन्हें क्या जवाब दूँ? छात्र — वे भी जो सीखने में अक्षम थे — सन्तुष्ट नहीं थे, और मैं खुद भी सन्तुष्ट नहीं थी।

अध्यापक के रूप में इन असन्तोषजनक अनुभवों (और मेरे स्वयं के छात्र जीवन के अनुभवों) का परिणाम यह हुआ कि मैं इसकी चर्चा अपने सहकर्मियों और मित्रों से करने लगी। मैं सोचने लगी कि क्या स्कूल किसी और तरह का नहीं हो सकता? हमने एक ऐसे विद्यालय की कल्पना की जिसमें पाठ्यक्रम निर्माण सहित कक्षा के हर काम में छात्रों को भागीदार बनाया जाए। पाठ्यक्रम एकीकरण एक ऐसा विचार था जिसे मैं लगभग भूल चुकी थी और जो इस प्रयास का सैद्धान्तिक आधार हो सकता था। मैंने अपने अध्यापक जीवन के आरम्भिक अनुभवों को याद किया जब मैं सीखने में अक्षम बच्चों की एक स्वतःसम्पूर्ण समेकित कक्षा में पढ़ाती थी। उस कक्षा में बच्चे मेरे साथ मिलकर योजना बनाते थे कि उन्हें क्या पढ़ना है। वे अपने शौक और रुचि की चीज़ें एक-दूसरे को सिखाते थे। वे दिन मेरे हाथ से छिटक गए थे।

समेकित पाठ्यक्रम, छात्रों के साथ योजना बनाना, सहकारी शिक्षण, दल शिक्षण — यह सब छात्रों और अध्यापकों के लिए सीखने-सिखाने में सहायक हो सकते थे, उन छात्रों के लिए भी जिन्हें सीखने में अक्षम मान लिया गया है। मैंने अपने भवन प्रशासकों को समझाया कि मैं क्या करना

चाहती हूँ, और फिर एक ऐसे साथी को ढूँढने निकली जो मेरा साथ दे सके। गणित और विज्ञान की एक अध्यापिका मेरी प्लोएसर ने मेरा आमंत्रण सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस बार मैं स्कूल खुलने को लेकर उत्साहित थी।

हमने एक समुदाय बनाया

ऐसा नहीं था कि स्कूल के पहले दिन अध्यापक कक्षा में गए और उन्होंने छात्रों से कक्षा का संविधान तैयार करने को कहा। हम और हमारे छात्र एक-दूसरे के लिए अजनबी थे। हमारे पास-पड़ोस, समाजार्थिक स्तर और वंशीय पृष्ठभूमि सब अलग थे। शुरू के दो दिनों तक वही व्यस्तताएँ रहीं जो हर स्कूल में रहती हैं — लॉकर्स का आवंटन, कक्षाओं का कार्यक्रम, स्कूल के फॉर्म भरना-भरवाना वगैरह। फिर भी हमने कुछ आरम्भिक गतिविधियों की योजना बना ली थी। दूसरे दिन दोपहर बाद हमने छात्रों से पूछा कि उनके विचार से आपस में परिचित होने और एक सच्चा समुदाय निर्मित करने का सबसे अच्छा तरीका क्या हो सकता है? यह सरल-सा प्रश्न एक लोकतांत्रिक समाज के निर्माण में सहायक होने के लिए युवाओं को हमारा पहला आमंत्रण था। छात्र झिझके नहीं। विचार सामने आने लगे।

पहले दो सप्ताहों के लिए विषय था: "हम कौन हैं? मैं कौन हूँ?" यह विषय अध्यापकों ने चुना था। छात्रों और अध्यापकों ने मिलकर तय किया कि एक प्रश्नावली बनाई जाए — इसके लिए प्रश्न भी हर कोई सुझाए और वह हरेक को भरने के लिए दी जाए। इससे हमें एक-दूसरे के बारे में जानने में मदद मिलेगी।

समूह जानना चाहता था कि कौन कहाँ से आया है? तो हमने परिवार के इतिहास सम्बन्धी एक फॉर्म बनाया। हर छात्र यह फार्म घर ले गया और इसमें उस देश का नाम लिखकर लाया जहाँ से उसके पूर्वज आए थे। इन फॉर्मों से प्राप्त जानकारी के आधार पर एक नक्शा तैयार किया गया, उसमें ये सारी जगहें चिन्हित की गईं और मेडीसन से उनकी दूरी भी लिखी गई। छात्रों ने पुराने नक्शे देखकर पता लगाया कि कहीं उनके पूर्वजों के देश का नाम बदल तो नहीं गया है। अपनी पहचान की तलाश में निकले इन युवाओं में से प्रत्येक अपने नाम का अर्थ जानना चाहता था। तो इस खोज में वे सब पुस्तकालय में गए। हम अध्यापकों ने भी यही सब किया। आखिर हम भी तो समूह के सदस्य थे।

"मैं कौन हूँ?" इस प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए हर बच्चे का कद नापा गया, उनके परिवारों का स्वास्थ्य और शिक्षा सम्बन्धी इतिहास इकट्ठा किया गया, (तस्वीरों सहित) संक्षिप्त आत्मवृत्त लिखा गया और कक्षा में कराए गए सर्वेक्षण से हर छात्र की इस वैयक्तिक जानकारी का मिलान किया गया। हमने एक स्थानीय नक्शे पर अपने-अपने घरों के निशान लगाए। छात्रों ने एक-दूसरे का साक्षात्कार लिया और पूरे समूह के सामने अपना-अपना परिचय दिया।

छात्रों ने सुझाव दिया कि हमारी कक्षा में छात्रों और अध्यापकों दोनों के लिए कुछ नियम होने चाहिए। अगर नियम बनने थे तो उनकी राय से ही बनने चाहिए थे जिन्हें उनका पालन करना है। समूह ने इस विषय पर विचार किया कि ये जो हम बनाने जा रहे हैं उन्हें नियम कहा जाए या दिशा-निर्देश या संविदा/करार। एक छात्र ने सुझाया कि हमें संविधान बनाना चाहिए। अध्यापकों ने विभिन्न संविधानों की समीक्षा की और छात्रों तथा अध्यापकों ने अलग-अलग सूची तैयार की कि कक्षा के संविधान में क्या-क्या बातें होना चाहिए। दोनों सूचियाँ नोटिस बोर्ड पर लगा दी गईं। अध्यापकों और छात्रों ने उन पर विचार-विमर्श किया और इस बात पर बहस की कि कौन-सी माँग जायज़ है और संविधान में ली जानी चाहिए। अध्यापकों और छात्रों, दोनों को खड़े होकर अपनी माँग के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करना पड़ते थे या संविधान में उसे शामिल किए जाने के औचित्य के बारे में सबको कायल करना पड़ता था। सर्वसम्मति पर पहुँचने के बाद एक अध्यापक और कुछ छात्रों की एक समिति गठित की गई जिसने सारी बातों को सूत्र रूप में लिखा और संविधान का वह स्वरूप सामने आया जिसे आपने इस अध्याय के आरम्भ में देखा।

सारे साल संविधान हमारा मार्गदर्शन करता रहा। अनेक अवसरों पर अध्यापकों से भी ज़्यादा छात्रों ने संविधान के प्रावधानों की तरफ ध्यान खींचा और तद्नुसार चलने पर विवश किया। ज़ाहिर है उन्होंने समूह के काम को गम्भीरता से लिया था।

वर्ष भर चलने वाली अन्य गतिविधियों ने भी समुदाय निर्माण की प्रक्रिया में मदद पहुँचाई। हम सबने सामुदायिक खेलों में भाग लिया, हम विद्यालय के "फॉरेस्ट रोप कोर्स" में गए, हमने पॉटलक डिनर किया, परियोजनाएँ देखने और प्रस्तुतीकरण सुनने के लिए अभिभावकों को आमंत्रित किया, अन्य कक्षाओं के साथ अपनी सफलता को साझा किया और सहायक कर्मचारियों को भी गतिविधियों में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया।

सोमवार की सुबह में "साझा समय" रखना एक और विचार था जिस पर शुरू में तो काफी नाक-भौं चढ़ाई गई, लेकिन बाद में जो सबका पसन्दीदा कार्यक्रम बन गया। इस कार्यक्रम में कोई भी छात्र अपने किए हुए काम या देखे हुए दृश्य या किसी घटना या किसी सुनी हुई बात के बारे में कक्षा को बता सकता था। ज़्यादातर सोमवारों को ऐसा होता था कि वक्ताओं के लिए समय सीमा निर्धारित करना पड़ती थी, क्योंकि बोलना चाहने वाले छात्रों की संख्या काफी ज़्यादा होती थी। इस कार्यक्रम में हमें बड़े ज़ोरदार अनुभव सुनने को मिले। हमें उन बहुत से तनावों का भी पता चला जिनसे कुछ युवाओं को गुज़रना पड़ रहा था। "साझा समय" ने हमें लोगों के अलग-अलग पहलुओं को समझने का मौका दिया। इस कार्यक्रम के माध्यम से हमें यह भी पता चला कि कौन खाली समय में क्या करता है, किसका परिवार कैसा है, और समाचारों में कौन क्या सुनता है। हम "साझा समय" की कद्र करते थे और इसे अपने लोकतांत्रिक समुदाय का एक महत्वपूर्ण भाग समझते थे।

विद्यालय सत्र के पहले दो सत्रों के इस आंशिक विवरण से आप समझ सकते हैं कि छात्रों के पास लोकतांत्रिक समुदाय के निर्माण में भागीदार होने के पहले से ही अनेक अवसर थे। हमने सभी के विचार सुने और ऐसा करके कक्षा में उपलब्ध अनेकता का सम्मान किया। स्त्री और पुरुष, गरीब और अमीर, वयस्क और युवा-किशोर तथा अनेक नस्लों-वंशों के लोग – सभी की बात ध्यान से सुनी गई।

हमें अपने सर्वेक्षण से पता चला था कि हम हर बात पर सहमत नहीं हैं, लेकिन हमने तय किया कि कुछ बातें ऐसी हैं जो हम सबके लिए महत्वपूर्ण हैं। "हम कौन हैं?" इस बात को लेकर हमने आपसी समझ बनाई और एक-दूसरे पर भरोसा करना शुरू किया। हम एक समुदाय के रूप में ढल रहे थे।

हमने मिलकर योजनाएँ बनाईं

अध्यापकों और छात्रों द्वारा मिलकर लिखे गए संविधान में कहा गया था कि "शिक्षा अर्थपूर्ण होगी"। शिक्षा को अर्थपूर्ण बनाने का एक तरीका यह हो सकता है कि पाठ्यक्रम की योजना बनाने में छात्रों को भी शामिल किया जाए।

हमारे पाठ्यक्रम का उद्देश्य अपने बारे में और अपनी दुनिया के बारे में

छात्रों की समझ को बढ़ाना है। हमने रचनात्मक और क्रियात्मक दृष्टि अपनाते हुए छात्रों से पूछा कि अपने बारे में और अपनी दुनिया के बारे में उनके प्रश्न और चिन्ताएँ क्या हैं?

बच्चों के मन में अपने बारे में जो सवाल थे, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:

मेरी त्वचा का रंग कैसे बना? मरने के बाद मेरा क्या होगा? मैं जैसा हूँ वैसा क्यों पैदा हुआ? मैं इस परिवार में ही क्यों पैदा हुआ? क्या मेरे बच्चे भी मेरे जैसे ही होंगे? मुझे स्कूल इतना कठिन क्यों लगता है? मेरे शरीर के अंग चलते ही क्यों जाते हैं? मुझे कैसे पता चलेगा कि मैं किसी से सच्चा प्यार करने लगा हूँ? क्या मैं सफल और प्रसन्न व्यक्ति बन पाऊँगा? मैं इतना ठिगना क्यों हूँ?

और बच्चों के मन में दुनिया को लेकर जो प्रश्न थे, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:

कुछ लोग/समूह ऐसा क्यों सोचते हैं कि वे दूसरों से बेहतर हैं? नस्लवाद शुरू कैसे हुआ? धर्म कैसे बने? क्या ऐसा बच्चा पैदा हो सकता है जो नर भी हो और मादा भी? कुछ लोग समलैंगिक क्यों होते हैं? गुण्डों के समूहों द्वारा हिंसा क्या कभी बन्द होगी? अधिकतर राजनीतिज्ञ भ्रष्ट क्यों होते हैं? क्या कोई अश्वेत व्यक्ति कभी (अमरीका का) राष्ट्रपति बन पाएगा? क्या पृथ्वी पर कभी सबके लिए पर्याप्त भोजन हो सकेगा? यदि सूरज निकलना बन्द हो जाए तो क्या होगा? ब्रह्माण्ड कैसे बना? पक्षी उड़ कैसे पाते हैं? क्या किसी और ग्रह पर भी बसा जा सकता है? क्या पृथ्वी की आबादी एक दिन इतनी बढ़ जाएगी कि कुछ लोगों को अन्तरिक्ष में भेजना पड़ेगा? सौ साल बाद लोगों का रूप-रंग किस तरह का होगा? क्या एड्स का उपचार खोजा जा सकेगा? हम किशोरवयी वोट क्यों नहीं दे सकते? रोलर कोस्टर कैसे काम करता है? कुछ बच्चे लोकप्रिय क्यों होते हैं? हमें ज़्यादातर बुरी बातें ही क्यों सुनने को मिलती हैं?

छात्र पहले अकेले-अकेले अपने प्रश्न बनाते हैं, फिर वे समूह में बैठते हैं और देखते हैं कि कौन-कौन से प्रश्न सब छात्रों या ज़्यादातर छात्रों की सूची में हैं। एक बार जब सारी कक्षा ऐसे प्रश्न छाँट लेती है तो छात्रों से कहा जाता है कि वे पता लगाएँ कि स्वयं से सम्बन्धित प्रश्नों और दुनिया से सम्बन्धित प्रश्नों में क्या सम्बन्ध है? इस सम्बन्ध से ही वे विषय तैयार होते हैं जिनके गिर्द पाठ्यक्रम संयोजित किया जाता है। छात्रों द्वारा तैयार किए गए विषय इस तरह के होते हैं: भविष्य; "वाद", अन्तरिक्ष; समय:

अतीत और वर्तमान; दिमाग चकरा देने वाली चीज़ें; पर्यावरण; मृत्यु, युद्ध, और हिंसा; और संघर्ष।

हर विषय पर विचार करते समय छात्र उनसे सम्बद्ध गतिविधियों की पहचान करते हैं। छात्रों द्वारा सुझाई गई गतिविधियों से बना पाठ्यक्रम हर छात्र के सीखने के तरीके को गुंजाइश देता है — कौन-सा छात्र क्या करना चाहता है या क्या अच्छी तरह कर सकता है। लेकिन छात्र समझते हैं कि उन्हें एकाधिक प्रकार के हुनर सीखने हैं। जब पूछा गया कि यदि गतिविधियों में सिर्फ "पढ़ना" लिखा हो तो क्या करना चाहिए, तो छात्रों ने तुरन्त जवाब दिया कि सन्तुलन तो होना ही चाहिए। हर छात्र को पढ़ना, लिखना और गणित जैसी बुनियादी चीज़ें और स्कूल में और भी जो कुछ सिखाया जाता है, वह तो करना ही चाहिए।

यहाँ शिक्षक की भूमिका पारम्परिक रूप से कक्षा के आगे खड़े होकर काम करने के लिए निर्देश देते रहना ही नहीं है, बल्कि छात्रों का सहयोग करने और गतिविधियों में उनकी सहायता करना भी है। हम वाद-विवाद आयोजित करने में छात्र समूहों की मदद करते हैं, स्पष्टीकरण करते हैं, प्रश्न कैसे पूछे जाएँ यह बताते हैं, प्रश्न किस भाषा में रखे जाएँ यह सुझाते हैं, एक या दो छात्र समूह पर हावी न हो जाएँ यह देखने के लिए उनकी बातें सुनते हैं तथा अपने सुझाव देते हैं और छात्रों को प्रोत्साहित करते हैं। हम कोशिश करते हैं कि सब छात्र एक-दूसरे की बात सुनें और बीच-बीच में उन्हें याद दिलाते हैं कि हर व्यक्ति को अपनी राय रखने का अधिकार है।

जब छात्र और अध्यापक मिलकर पाठ्यक्रम बनाते हैं तो बहुत लाजवाब चीज़ें हो सकती हैं। हर व्यक्ति के पास यह तय करने का मौका होता है कि हमारा काम कैसा होगा। बच्चे देखते हैं कि अध्यापक उनकी बात सुन रहे हैं और उन्हें गम्भीरता से ले रहे हैं। जब शब्द और आचरण मिलकर पाठ्यक्रम को जीवन्त रूप देते हैं तो इस प्रक्रिया में छात्रों और अध्यापकों के बीच विश्वास बढ़ता है। शुरुआत में हमने जो समूह आयोजना की उससे पूरे साल के लिए खुलेपन का एक माहौल तैयार हुआ। इसका एक बड़ा हिस्सा एक ऐसा पाठ्यक्रम था जिसमें पारम्परिक पाठ्यक्रम की तुलना में बहुत कम "छिपे हुए" पहलू थे।

हमारे प्रश्न और सरोकार बड़े हैं

छात्रों ने हमारी कक्षा में जो प्रश्न पूछे उनकी सूची बनाने में तो बहुत पृष्ठ लग जाएँगे। पहले बताए गए स्वयं से सम्बन्धित और दुनिया से सम्बन्धित

प्रश्नों को देखकर कोई भी समझ सकता है कि खुद को और दुनिया को लेकर बच्चों के मन में असंख्य प्रश्न होते हैं। बच्चे हर चीज़ के बारे में उत्सुकता से भरे होते हैं और दुनिया को उसकी तमाम पेचीदगियों समेत समझने की कड़ी कोशिश करते हैं। वे यह जानने को बेज़ार रहते हैं कि वे कौन हैं और क्या बनना चाहते हैं। उनके गम्भीर और सुविचारित प्रश्न इस बात के सूचक होते हैं कि वे असंख्य संस्कृतियों में विभिन्न प्रकार के समूहों के सदस्य बनना चाहते हैं, और इसमें प्रभुत्ववादी संस्कृति भी शामिल है।

उत्तरों की खोज में समूह अक्सर ऐसी दिशा में निकल जाता था जिसकी पहले से कोई योजना नहीं बनाई गई थी। अक्सर एक प्रश्न ने कई सारे प्रश्नों को जन्म दिया। आम तौर पर "ऐसी ही क्यों?" या "कौन कहता है?" या "इसका फैसला किसने किया" या "हम इसे बदल क्यों नहीं डालते?" जैसे प्रश्न उठे। क्योंकि हमारी कक्षा के केन्द्र में लोकतंत्र, गरिमा और बहुलता के विचार थे, हमने हर प्रश्न को इसी दृष्टि से देखने का प्रयास किया। जहाँ छात्रों ने ऐसे सवाल नहीं उठाए, वहाँ अध्यापकों ने उठाए। हम चाहते थे कि छात्र जो कुछ पढ़-सीख रहे हैं उसे आलोचनात्मक दृष्टि से देखना सीखें और जितने अधिक सम्भव हों उतने दृष्टिकोणों से विचार करें।

उदाहरण के लिए "वाद" इकाई में महिला आविष्कारकों या महत्वपूर्ण सामाजिक आन्दोलनों का नेतृत्व करने वाली महिलाओं की आपेक्षिक गुमनामी से सम्बन्धित बहुत-से प्रश्नों के उत्तर खोजने थे। छात्रों ने मनुष्यता के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने वाली महिलाओं का अध्ययन किया, और फिर विद्यालय की सामाजिक अध्ययन और इतिहास की पाठ्यपुस्तकों के विशाल ढेर में इनके बारे में उपलब्ध सूचनाएँ इकट्ठी करने की कोशिश की। छात्र यह देखकर चकित रह गए कि पाठ्यपुस्तकों में इनके बारे में नाममात्र का ही उल्लेख है। उन्होंने तुरन्त सवाल उठाया कि इतिहास के इन दस्तावेज़ों से महिलाओं के नाम क्यों गायब हैं?

हमने इस बारे में बात की कि पाठ्यपुस्तकें कौन लिखता है, पाठ्यपुस्तकें बनाने वाली कम्पनियों के मालिक कौन हैं, समूचे इतिहास में महिलाओं के योगदान के प्रति समाज का क्या रवैया रहा है, और लोगों को पूरी कहानी मालूम पड़े इसके लिए लोग क्या कर सकते हैं। छात्रों को उस वर्ष हुए अन्य महत्वपूर्ण कार्यों की भी याद दिलाई गई जिनमें किसी समूह विशेष के लोगों को उपेक्षित करने की परिपाटी पर प्रकाश डाला गया था।

छात्रों ने सीखा कि कुछ प्रश्नों के उत्तर पाठ्यपुस्तकों से प्राप्त किए जा सकते हैं। लेकिन उन्होंने यह भी सीखा कि अनेक प्रश्न ऐसे भी हैं जिनके सम्पूर्ण उत्तर प्राप्त करने के लिए अनेक अन्य स्रोतों की तलाश ज़रूरी है। शोध के उनके अनुभव ने उन्हें यह बताया कि एक ही विषय पर दो स्रोतों से मिली सूचनाओं में अन्तर या विरोधाभास हो सकता है और कि "प्रामाणिक" स्रोत हमेशा एकदम सही नहीं होते।

माध्यमिक विद्यालय में काम कर चुका कोई भी व्यक्ति आपको बता सकता है कि समाज की समस्याओं को सुलझाने के लिए किशोर न्याय और ईमानदारी को कितना महत्व देते हैं। नैतिकता के बारे में उनकी अपनी ही मान्यताएँ होती हैं और कभी-कभी वे इस पीड़ादायक सोच में पड़ जाते हैं कि वे "दिए हुए" मूल्यों के अनुसार आचरण कर पाएँगे या नहीं। हमने छात्रों को इन प्रश्नों के बारे में आलोचनात्मक भाव से सोचने के लिए उकसाया और उन्हें अपने अध्यापकों, अभिभावकों और सहपाठियों से मुश्किल सवाल पूछते रहने के लिए प्रोत्साहित किया। किशोर युवाओं के प्रश्नों की गहराई से रात-दिन उनके साथ काम करने वाले अध्यापक तक चकित हो जाते हैं। कभी-कभी हम सोचते हैं कि जब हम इनकी उम्र के थे तो क्या हमारे दिमाग में भी इतने बड़े-बड़े सवाल उठते थे। हमें मालूम है कि इसके लिए किसी ने भी कभी हमें प्रोत्साहित नहीं किया।

हमने अभिभावकों से कहा कि वे "खुले मंच" के तहत स्वयं के बारे में और दुनिया के बारे में उनके मन में अक्सर जो सवाल उठते हैं वे हमें बताएँ। मज़े की बात है कि उनके अनेक प्रश्न लगभग वही थे जो उनके बच्चों के थे। मसलन:

- दुनिया के सबसे साफ और गन्दे शहर कहाँ हैं? और संस्कृतियाँ भी।
- पुनर्चक्रित उत्पाद और अधिक क्यों नहीं हैं?
- भोजन के लिए हम इतने सारे पशुओं को क्यों मार देते हैं?
- हम रोज़गार कैसे बचा/पैदा कर सकते हैं, और पशुओं तथा पर्यावरण को कैसे बचा सकते हैं?
- अन्तरिक्ष स्टेशन की क्या स्थिति है?
- हम अन्तरिक्ष पर कितना खर्च करते हैं?
- अन्तरिक्ष का स्वामित्व किसके पास है?
- क्या नस्लवाद कभी समाप्त होगा?

- लोग एक-दूसरे को क्यों मारते हैं (युद्ध में नहीं)?
- क्या कभी ऐसा भी समय आएगा जब हरेक को पर्याप्त भोजन मिलेगा?
- मैं क्या कामकाज करूँगा? भविष्य में किस तरह के रोज़गार होंगे?
- जब तक हमारा पूरी तरह सफाया ही न हो जाए, क्या हम आबादी बढ़ाते जाएँगे?
- क्या बच्चों को भी कभी वोट देने का अधिकार मिलेगा?

हम सोचते हैं कि बच्चों को यह पता लगाने की कोशिश करने का अधिकार है कि चीज़ें जैसी हैं वैसी क्यों हैं। हालाँकि कभी ऐसा भी समय रहा है जब बच्चों द्वारा पूछे गए प्रश्नों और सुझाई गई गतिविधियों की लम्बी फेहरिस्त के सामने आने पर हम उसे बस घूरते रह जाते थे और सोचते रह जाते थे कि जीवन से सीधे जुड़े इन ज्वलंत प्रश्नों के बारे में बच्चों को पढ़ाने की हिम्मत क्या हम कभी जुटा पाएँगे? ऐसे क्षणों में हमने स्वयं को याद दिलाया कि चीज़ें जैसी हैं वैसी क्यों हैं यह जानने की बच्चों में गहन उत्सुकता है। बच्चों को अपने प्रश्नों के उत्तर खोजने में मदद करने की अपनी प्रतिबद्धता को हमने फिर दोहराया।

मैं जानती हूँ कि मेरी कक्षा में जो हुआ वह सामान्यतया अन्य कक्षाओं में नहीं होता। कई कक्षाओं में बच्चों का प्रश्न पूछना पसन्द नहीं किया जाता। लेकिन हमारा अब भी विश्वास है कि बच्चों को प्रश्न पूछने का और "जानने का अधिकार" है। उन्हें उस विद्यालय का एक अंश बनने का अधिकार है जो उनके प्रश्नों को गम्भीरता से लेता है।

छात्रों की अपना मूल्यांकन विकसित करने में भागीदारी

"कमरा नं. *201/202* के संग्रहालय में आपका स्वागत है।"

"संग्रहालय की यात्रा आरम्भ होने जा रही है। क्या आप कृपया अपने गाइड के पीछे एक कतार में लग जाएँगे?" बच्चों में हलचल होती है। कुछ कुर्सियों पर बैठ जाते हैं, कुछ कागज़ इकट्ठी करने लगते हैं, और एक छोटा-सा समूह कक्षा के बाहर कतारबद्ध हो जाता है।

"मेरा नाम लिसा है और मैं आपकी पहली गाइड हूँ। मैं आपको बताऊँगी कि वर्षा वन क्या होता है और ऐसे जंगल कहाँ-कहाँ पाए जाते हैं। दूसरे गाइड आपको उत्पाद, जलवायु, वर्षा, भू-जल, मिट्टी की स्थिति और वर्षा वनों में संकटग्रस्त पशुओं और वनस्पतियों के बारे में बताएँगे। आप

वहाँ के मूल निवासियों के बारे में भी जानेंगे और यह भी जानेंगे कि ये जंगल चर्चा में क्यों हैं। और आपको वर्षा वनों के बारे में कुछ विचित्र किन्तु सत्य बातें पता चलेंगी।"

कमरे में चारों तरफ देखते हुए आगन्तुकों को वर्षा वनों के अलावा और भी बहुत कुछ दिखाई देता है। किसी बच्चे के प्लास्टिक के स्वीमिंग पूल को एक तालाब का रूप दे दिया गया है जिसमें पानी भरा है, किनारों पर घास है, एक मेंढक और कुछ पूँछ वाले मेंढक भी हैं। एक तरफ सूखी लकड़ियों से एक जंगल बनाया गया है जिसमें सब प्रकार के भूसा-भरे जानवर खड़े किए गए हैं — हिरन, भालू, तरह-तरह की चिड़ियाँ। रेगिस्तान की रेत में एक कागज़ की लुगदी से बना साँप रेंग रहा है, तो ऊपर कुछ गिद्ध उड़ रहे हैं। भू-जल भी दिखाया गया है। चार्ट, पोस्टर और चित्र लगे हैं। "क्या तुम जानते हो?" के भी पोस्टर हैं। पूरा कमरा रंग-बिरंगी सजधज में है।

संग्रहालय में अलग-अलग स्थानों पर छात्र गाइड बनकर खड़े हैं और अलग-अलग विषयों पर बात कर रहे हैं। कमरे के सामने जेफ वर्षा वनों के भोजनचक्र के बारे में समझा रहा है। उसके हाथ में पेड़ पर रहने वाले एक ज़हरीले मेंढक का चित्र है और एक पत्ती का भी जिस पर छोटे-छोटे कीट बैठे हैं। फिर वह मेंढक का चित्र रखकर टूकन (एक उष्णकटिबन्धीय पक्षी) का चित्र उठा लेता है और उन पशुओं तथा पौधों की बात करने लगता है जो संकटग्रस्त चीज़ों की सूची में हैं।

भ्रमण के अन्त में वर्षा वन के गाइड कहते हैं कि किसी को यदि कोई सवाल पूछना हो तो पूछे। अनेक हाथ ऊपर उठ जाते हैं। गाइड जिन सवालों के जवाब दे सकते हैं देते हैं, और जिन सवालों के जवाब नहीं दे पाते उन्हें लिख लेते हैं तथा आगन्तुकों को आश्वस्त करते हैं कि संग्रहालय के कर्मचारी तुरन्त उन सवालों के जवाब खोज निकालेंगे। वे आगुन्तकों को धन्यवाद देकर अपनी जगह पर बैठ जाते हैं और उनका स्थान दूसरे गाइड ले लेते हैं।

इस प्रकार के संग्रहालय भ्रमण से पहले काफी कुछ करना होता है। सबसे पहले तो छात्रों को यह तय करना होता है कि वे कौन-सा मॉडल पढ़ना चाहेंगे। और फिर एक बड़ा समूह, जिसमें अध्यापक भी होते हैं, तय करता है कि हर छोटे समूह को क्या-क्या काम करने हैं। समूह के सदस्य तय करते हैं कि कौन किस बारे में खोजबीन करेगा। इससे पहले कि कुछ बनाना शुरू किया जाए, खोजबीन का काम पूरा हो जाना चाहिए। इस बात का निर्णय करना पड़ता है कि मॉडल कहाँ बनाए जाएँगे। नक्शे

खींचने पड़ते हैं, प्रतिवेदन लिखने पड़ते हैं, भाषणों का अभ्यास करना पड़ता है, वगैरह-वगैरह। "पर्यावरण" इकाई के लिए हर समूह ने निर्देशित संग्रहालय भ्रमण का तरीका चुना था। भ्रमण को एक अध्यापक ने वीडियोटेप किया था, आवश्यक सामग्री की जाँच अध्यापकों द्वारा की गई थी और भ्रमण का मूल्यांकन छात्रों द्वारा किया गया था।

किसी इकाई या विषय के मूल्यांकन में, चाहे वह अन्तिम समूह परियोजना हो, चाहे प्रस्तुतीकरण हो या लिखित आत्ममूल्यांकन हो, अक्सर छात्र शामिल रहते थे। उदाहरण के लिए, एक भिन्न आयु वर्ग के बच्चों को "वाद" समझाने के लिए छात्रों ने एक मल्टीमीडिया प्रस्तुतीकरण तैयार किया। भविष्य में जीवन कैसा होगा यह समझाने के लिए एक पुस्तक, डिब्बा या कोलाज तैयार किया। ब्रह्माण्ड में एक ग्रह की स्थिति समझाने के लिए निजी रूप में और समूह रूप में अपना काम पूरा किया। और "पर्यावरण" इकाई के अन्तर्गत सामुदायिक सेवा की। छात्र जब बताते थे कि मूल्यांकन किस तरह किया जा सकता है तो अध्यापक उनके विचारों को सुनते थे और उन पर चर्चा करते थे, ताकि छात्रों को लगे कि उनके विचारों का भी कोई महत्व है।

विषय की समाप्ति पर छात्र आत्ममूल्यांकन करते थे। छात्र और अध्यापक मिलकर तय करते थे कि मूल्यांकन के क्षेत्र क्या होंगे। मसलन कार्य की गुणवत्ता और मात्रा, क्या सरल था क्या कठिन, छात्रों की रुचि और प्रयास, उन्हें सबसे ज़्यादा क्या करना अच्छा लगा और सबसे कम क्या, समूह का कौशल और व्यक्तिगत कौशल वगैरह। अपने सम्पूर्ण कार्य का पुनरावलोकन करने के बाद छात्र लिखते थे कि उनके अनुसार उन्होंने क्या सीखा। और अन्ततः छात्र स्वयं अगली मूल्यांकन अवधि के लिए अपने लक्ष्य निर्धारित करते थे।

हमें विश्वास नहीं होता कि हमने कितना सीखा है

हर छात्र के कार्य की एक प्रतिलिपि या "उत्पाद" सुरक्षित रखा जाता था ताकि वे स्वयं अपना काम देख सकें। यह "पोर्टफोलियो" छात्रों को लिखित आत्ममूल्यांकन करने में काम आता था। जब वे इन प्रतिलिपियों को देख रहे होते थे, हम उन्हें अक्सर कहते सुनते थे, "यह सब हमने किया है? विश्वास नहीं होता!"

हर छात्र के पास एक नोटबुक होती थी जिसमें वह कक्षा में बताई गई चीज़ों को अपनी तरह से उतारता और समझता था। हर दिन के अन्त में

अध्यापक बोर्ड पर महत्वपूर्ण सीखों या "बड़े" मुद्दों पर कुछ सवाल लिखते थे जिन पर छात्रों को चिन्तन-मनन करना होता था। बच्चों के लिखित उत्तरों से अध्यापकों को हर बच्चे के बारे में पता चल जाता था कि आज का पाठ उसे समझ में आया या नहीं। इससे यह भी पता चल जाता था कि अध्यापक ठीक से पढ़ा रहे हैं या नहीं। यदि बहुत से बच्चे बोर्ड पर लिखे प्रश्नों के उत्तर नहीं दे पाते, तो हम तुरन्त समझ जाते कि इस विषय को अभी और स्पष्ट करने की ज़रूरत है।

अध्यापक 8 से 10 छात्रों की टोली से कक्षा में चल रहे विषय पर चर्चा करते, इस सम्बन्ध में उनकी जिज्ञासाओं से परिचित होते, गतिविधियों पर उनकी प्रतिक्रियाएँ जानते, और यदि अतिरिक्त पढ़ाई या अभ्यास की माँग होती तो उसे भी सुनते। इस समय का उपयोग अध्यापक उन विषयों की चर्चा में करते जिनके बारे में छात्रों को अच्छी तरह मालूम होना चाहिए। इस समय वे छात्रों से यह भी पूछते कि वे आजकल क्या कर रहे हैं और अनेक अन्य चीज़ों के बारे में उनके विचार जानने की कोशिश करते।

हर विषय की समाप्ति पर अध्यापक और छात्र उस ज्ञान और कौशल की एक सूची बनाने का प्रयास करते जिनके आधार पर छात्र प्रश्नों के उत्तर दे पाए। हमने पाया कि पाठ्यक्रम सम्बन्धी यह दृष्टि किसी न किसी को यह कहने पर उकसाती कि हमें छात्रों के अध्ययन का भी दस्तावेज़ीकरण करना चाहिए। छात्र समूह से पूछने से बेहतर इसका क्या तरीका हो सकता था? आठवीं कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते ज़्यादातर छात्र शिक्षा की भाषा का उपयोग करने में सक्षम हो चुके होते हैं। तो उन्होंने सूची बनाई जिसमें उन्होंने लिखना, संवाद करना, खोजबीन करना, गणित के प्रयोग करना, नक्शे देखना, ग्राफ और तालिकाओं का उपयोग करना, वैज्ञानिक तरीकों को इस्तेमाल करना, कम्प्यूटर का प्रयोग करना, सुनना, रिपोर्ट देना और समूह में काम करना जैसी चीज़ें कलमबद्ध कीं।

इस सूची को बोर्ड पर लिखने से, छोटे समूहों में बात करने से और एक-एक बच्चे से अलग-अलग लिखवाने से हमें पता चला कि कौन-सा बच्चा किस तरह सीख रहा है। कई बार तो समूह बच्चों की प्रगति देखकर हैरान हो जाता। अपने ही प्रश्नों के उत्तर देकर बच्चे अध्ययन की सार्थकता का अनुभव करते। मसलन औसत, मध्यम और बहुलक का हिसाब कैसे निकाला जाए या किसी पर्यावरण अभिकरण से किस तरह सम्पर्क किया जाए। उनके पास शिक्षण के क्या, क्यों और कैसे के बीच सम्बन्ध स्थापित करने के अनेक अवसर उपलब्ध थे क्योंकि उन्हें अपने

खुद के वास्तविक कार्य के आधार पर ज्ञान का उपार्जन करने को कहा गया था: उनसे कहा गया था कि वे सक्रिय रूप से स्वयं को शिक्षित करें।

हम चाहते थे कि छात्र खूब सारी बातें सीखें और हम जानना चाहते थे कि उन्होंने ऐसा किया या नहीं। हम चाहते थे कि वे सर्वथा तात्कालिक और सामयिक विषयों पर प्रतिक्रिया करें, या पूरे साल भर अपने काम पर, और अन्त में अपनी उपलब्धियों को साफ तौर पर देखें। हम चाहते थे कि वे इस बात को समझें कि यद्यपि वे एक पारम्परिक पाठ्यक्रम के अन्तर्गत अलग-अलग विषयों का अध्ययन नहीं कर रहे हैं, तथापि वे उसमें से अधिकांश सीख रहे हैं जो "शिक्षा समुदाय" के अनुसार उन्हें सीखना चाहिए।

सब सहकर्मी हैं

ज़्यादातर समय छात्र मिलजुलकर काम करते। अक्सर हम छात्रों को कहते कि वे किसी एक बच्चे का नाम बताएँ जिसके साथ वे काम करना चाहेंगे। फिर अध्यापक छात्रों के ऐसे अध्ययन दल बनाते हैं जिनमें अलग-अलग तरह के बच्चे हों और जो आपसी सहकार से काम करें। यह दल पूरी गतिविधि के दौरान और कभी-कभी पूरे विषय के दौरान एक साथ रहता। तथापि हम वर्ष में अनेक बार दलों की संरचना को बदलते रहते ताकि छात्रों को अपनी कक्षा के हर सहपाठी के साथ काम करने का मौका मिल सके। यह तरकीब ज़रूर कारगर रही होगी क्योंकि छात्रों ने हमें बताया कि दूसरी कक्षाओं में वे सिर्फ कुछ बच्चों को जानते हैं जबकि इस कक्षा में वे हर छात्र को जानते हैं।

सहयोग और सहभागिता की बात हमारे संविधान में निहित थी। प्रतिस्पर्धा को हम यथासम्भव दूर ही रखना चाहते थे। प्रकट प्रतिस्पर्धा की अनुपस्थिति से निभाव करने में उन्हीं छात्रों को दिक्कत महसूस होती थी जो तेज़ होते थे। क्योंकि वे अपना खुद का काम और कार्यतालिकाएँ पूरी नहीं कर रहे थे, बल्कि अन्य व्यक्तिगत और सामूहिक परियोजनाओं में लगे रहते थे, इसलिए शुरुआत में उन्हें भरोसा नहीं था कि वे ठीक कर रहे हैं। कई सप्ताह बाद उन्हें समझ में आने लगा कि दूसरों के साथ सहयोग करने का यह मतलब नहीं है कि उनका अपना अकादमिक काम ठीक नहीं चल रहा। उन्हें यह भी समझ में आया कि हमारे पाठ्यक्रम में जो काम और गतिविधियाँ हैं, वे उन कार्यतालिकाओं को भरने से ज़्यादा बारीकी वाली और चुनौतीपूर्ण हैं जिनके कि वे अभ्यस्त थे।

छात्रों ने महसूस करना शुरू किया कि वे एक-दूसरे के लिए अध्यापक हो सकते हैं और "औपचारिक" अध्यापकों पर ज़्यादा निर्भर रहने की ज़रूरत नहीं है। आखिर अध्यापक भी तो अक्सर छात्रों के साथ-साथ ही प्रश्नों के उत्तर खोजने की कोशिश कर रहे होते थे। साथ-साथ सीखने की इस प्रक्रिया में हम अपने प्रश्नों से रचते ज्ञान का अनुभव कर रहे थे। हम एक ऐसे लक्ष्य के लिए मिलजुलकर काम कर रहे थे जो हम सबके लिए महत्वपूर्ण था। और इसलिए जब कोई पाठ पूरा हो जाता था तो हम उससे सम्बन्धित सारी परियोजनाओं और प्रस्तुतीकरणों के पूर्ण होने पर उल्लसित होते और प्रसन्नता व्यक्त करते।

क्या आप हमारी कक्षा से बात करना चाहते हैं?

अक्सर हम समुदाय के लोगों को अपनी कक्षा में आमंत्रित करते थे ताकि छात्रों द्वारा उठाए गए सवालों के जवाब ढूँढने में उनकी मदद ले सकें। छात्र हमेशा कहते थे, "किसी विशेषज्ञ को बुलाइए।" छात्रों ने जितने सन्दर्भ व्यक्ति ढूँढने में हमारी मदद की वह सचमुच आश्चर्यजनक था। वे सब तरह के लोगों को जानते थे, और जिन्हें हमने बुलाया वे खुशी-खुशी हमारी मदद करने को तैयार हो गए, खासकर यह बताने पर कि उनका नाम हमें किस बच्चे ने सुझाया है। आमंत्रित व्यक्ति आम तौर पर यह देखकर चकित रह जाते थे कि उनसे हमारी अपेक्षा कितनी ठोस और केन्द्रित रहती थी, और उनमें से कइयों ने इस बात की प्रशंसा की कि उनके आगमन के लिए कक्षा ने किस तरह तैयारी कर रखी थी। कुछ हमारे द्वारा पढ़ाए जाने वाले विषयों को देखकर भी चकित हुए।

हम छात्रों के मस्तिष्क को अनेक प्रकार की व्यवसायगत सम्भावनाओं के लिए खोलना चाहते थे, इसलिए लगभग हर आमंत्रित वक्ता से यह ज़रूर पूछा जाता था कि उनके वर्तमान व्यवसाय के लिए किस प्रकार की शिक्षा आवश्यक है। हमारे यहाँ आने वालों में शिक्षित कर्मचारी, व्यापारी, व्यवसायी, सेवानिवृत्त कर्मचारी, मुख्यधारा से हटकर काम करने वाले लोग और यहाँ तक कि एक एड्स कर्मचारी भी था। हमारी कक्षा ने इनसे बहुत कुछ सीखा, और इन्होंने भी हमसे काफी कुछ सीखा।

अध्यापक-अभिभावक भेंट में छात्र भी भाग लेते हैं

हर चीज़ व्यवस्थित थी। सभी छात्रों की कार्यतालिकाएँ ठीक से जमाई हुई थीं। कमरा साफ-सुथरा था। मेज़-कुर्सियाँ ठीक जगह पर रखी हुई थीं।

लेकिन मुझे घबराहट हो रही थी। "क्या सब ठीक से हो पाएगा?" मैं सोच रही थी। क्या ये बच्चे अपने अभिभावकों/अध्यापकों और अपनी इस भेंट को ठीक से संचालित कर पाएँगे? क्या हमारी तैयारियाँ पर्याप्त हैं? क्या अभिभावक अपने बच्चों की बातें सुनना चाहेंगे?

मैंने घड़ी की तरफ देखा। समय हो चुका था। मेरी पहली भेंट होली के साथ थी। होली एक तेज़ दिमाग वाली किशोरी है जो हमेशा अच्छा काम करती है, लेकिन बड़ी या छोटी समूह चर्चाओं में भाग लेने को कभी उत्सुक नहीं लगती।

पहले होली कमरे के भीतर आई। वह सीधी मेरी मेज़ तक आई और बैठ गई। उसके पीछे-पीछे गोदी में एक छोटे बच्चे को लिए उसकी माँ आई। मैंने होली का फोल्डर उसके सामने सरकाया और उसके द्वारा स्वयं का परिचय दिए जाने का इन्तज़ार करने लगी। मैंने झुककर गोदवाले बच्चे का हाथ छुआ और पूछा, "और ये कौन हैं?" बस इसी समय होली शुरू हो गई।

होली ने अपनी माँ और अपनी छोटी बहिन का परिचय मुझसे करवाया और फिर अपने काम के बारे में चर्चा करने लगी। "यह मेरा सबसे अच्छा काम है," उसने माँ को कागज़ दिखाते हुए कहा और अपने काम के बारे में संक्षेप में समझाया। उसकी माँ ने कुछ सवाल पूछे और बीच-बीच में "हाँ, मुझे याद है जब तुम यह बना रही थीं" या "अरे वाह! यह तो अच्छा बना" जैसी टिप्पणियाँ करती रही। होली ने बताया कि उसकी सबसे अच्छी फाइल दूसरी सबसे अच्छी फाइलों के साथ स्कूल में रख ली जाएगी और साल भर बाद घर भेजी जाएगी।

इसके बाद होली ने अपनी माँ को अपना आत्ममूल्यांकन पढ़कर सुनाया। जब होली अपनी बात पूरी कर चुकी तो दोनों यह बताने लगीं कि होली अपने सहपाठियों के सामने क्यों नहीं बोलना चाहती? उसकी माँ ने बताया कि जब वह खुद किशोरी थी तो वह भी अपनी कक्षा में खड़े होकर बोलना पसन्द नहीं करती थी। वे इस पर बात करने लगीं कि होली को क्या सरल लगा और क्या चुनौतीपूर्ण। जब होली ने कहा कि टेलीविज़न के सामने बैठकर होमवर्क करना कोई अच्छी बात नहीं है तो दोनों हँसीं। फिर उन्होंने अगली तिमाही के लिए होली के लक्ष्यों के बारे में बात की और माँ ने होली से कहा कि वह अपने साथ ज़रा ज़्यादा ही सख्ती कर रही है।

मैं चकित भाव से बस बैठी रही। होली ने वह सब कह दिया था जो मैंने

कहा होता, बल्कि वह भी जो मैं नहीं कह पाती। मैं सिर्फ उनकी बातों पर सिर हिलाती रही। जब यह सब हो चुका तो हम तीनों एक-दूसरे की तरफ देखकर मुस्कराते हुए उठे, मानो एक-दूसरे से कह रहे हों — "बहुत अच्छा लगा। चलो, फिर करें।"

पिछले वर्षों में हुई अध्यापक-अभिभावक मुलाकातें हमेशा हमारे लिए कुछ निराशाजनक रही थीं। इन मुलाकातों में छात्र मौजूद नहीं रहते थे, जिनके बारे में सारी बात की जानी होती थी। इन मुलाकातों को सर्वथा नया रूप देने के लिए हमने सीधे छात्रों से ही पूछा कि इनका स्वरूप क्या होना चाहिए। उन्होंने तुरन्त जवाब दिया कि अभिभावक या जो भी बड़े इनमें आते हैं हर साल वही की वही बातें सुनते हैं: "डेन कक्षा में थोड़ा ध्यान दे तो अच्छा कर सकता है," "ब्रायन को कक्षा की गतिविधियों में थोड़ा और भाग लेना चाहिए," "जेमी की प्रगति ठीकठाक है," "अली होमवर्क करके नहीं लाती," "टिम कक्षा में बातें करता रहता है," वगैरह! छात्रों ने बताया कि यदि इस मुलाकात में उनकी गलतियाँ बताई जाती हैं तो घर जाने पर खिंचाई होती है, और अगर उन्हें अच्छा बताया जाता है तो घर जाने पर इस बारे में कोई बात नहीं होती। छात्रों ने कहा कि क्या ऐसा नहीं हो सकता कि इन मुलाकातों में उनकी अच्छी बातों के बारे में ही बताया जाए। क्योंकि जिन चीज़ों में उन्हें सुधार करना है उनके बारे में तो वे भी जानते हैं और उनके अभिभावक भी जानते हैं।

हम लोगों ने मिलकर तय किया कि अध्यापक-अभिभावक भेंट में छात्रों के "सर्वश्रेष्ठ कार्य" के बारे में ही बात की जाएगी और साथ ही छात्रों के लिखित आत्ममूल्यांकन और लक्ष्यों की भी चर्चा की जाएगी। "सर्वश्रेष्ठ कार्य" के रूप में पाँच या छह चीज़ें रखी गईं जो बच्चों ने खुद अपने हिसाब से चुनी थीं। इनमें उनका पसन्दीदा काम, या जिसमें अच्छे नम्बर मिले हों, या जो रोचक हो, या जो कठिन लगता हो, कुछ भी हो सकता था। कुछ बच्चों ने लेखन, गणित, सामाजिक अध्ययन या अन्य क्षेत्रों में से या सबमें से कुछ-कुछ चुन लिया था। बच्चों का शेष काम समीक्षा के लिए उपलब्ध था और भेंट समाप्त होने के बाद घर भेजा जाना था।

जैसा कि स्पष्ट हो गया होगा ये मुलाकातें इसी अर्थ में भिन्न थीं कि परिचय कराने और चर्चा आरम्भ करने से लेकर समय पर मुलाकात सम्पन्न करने तक सब कुछ यहाँ बच्चे खुद कर रहे थे। छात्र इनमें से किसी भी बिन्दु से मुलाकात आरम्भ कर सकते थे: (1) लिखित आत्ममूल्यांकन,

(2) स्कूल का औपचारिक रिपोर्ट कार्ड, या (3) उनका "सर्वश्रेष्ठ काम"। हालाँकि मुलाकात के दौरान कहीं न कहीं उन्हें यह ज़रूर बताना होता था कि वे क्या पढ़ाई करते रहे हैं, उससे सम्बन्धित काम दिखाना होता था और उसी में "सर्वश्रेष्ठ" कौन-सा है यह भी बताना होता था। ज़्यादातर भेंटों में अभिभावक बात को अच्छी तरह समझने के लिए प्रश्न पूछते थे जिससे बच्चों को अतिरिक्त सूचनाएँ देने का अवसर मिल जाता था। लिखित आत्ममूल्यांकन बच्चों द्वारा ज़ोर से पढ़ा जा सकता था या पढ़ने के लिए अभिभावक को दिया जा सकता था। बच्चों द्वारा अपने लिए निर्धारित लक्ष्यों पर भी चर्चा की जाती थी।

अध्यापक ज़रूरी होने पर ही बातचीत में हस्तक्षेप करते हैं। हमने पाया है कि छात्र अपनी शक्ति और कमज़ोरी को पहचानने में पर्याप्त सक्षम होते हैं। कई मामलों में तो हमें उन्हें कहना पड़ा कि आत्ममूल्यांकन में तुम अपने साथ ज़रूरत से ज़्यादा सख़्ती कर रहे हो।

कई छात्र-छात्राओं और उनके अभिभावकों के लिए ये मुलाकातें उन कुछेक मौकों में से एक होती हैं जब वे वास्तव में बच्चों के "काम" पर चर्चा करते हैं। ज़्यादातर छात्र बता सकते हैं कि वे किसमें अच्छे हैं और किसमें उन्हें और मेहनत करना पड़ेगी। आत्ममूल्यांकन और लक्ष्यों में पुरानी तरह की मुलाकातों की सारी बातें आ जाती थीं, लेकिन इन नई तरह की मुलाकातों में छात्रों को जो कहा जा रहा है और जैसे कहा जा रहा है इस पर एक तरह से नियंत्रण प्राप्त हो जाता है। कई बार "सत्ता" केन्द्र को परिवर्तित कर देना लोकतांत्रिक कक्षा के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अपने अनुभवों का पुनरावलोकन

दो साल पहले मैंने इस समेकित पाठ्यक्रम पर काम करना शुरू किया था जिसमें अध्यापक और छात्र मिलकर पढ़ाई की योजना बनाते हैं। आज मैं कल्पना भी नहीं कर सकती कि बच्चों को — चाहे वे जिस उम्र के हों — शामिल किए बगैर उनकी पढ़ाई की योजना कैसे बनाई जा सकती है और "हमारी" कक्षा को कैसे चलाया जा सकता है। साल दर साल बच्चों ने यह साबित किया है कि वे योजना बनाने और अपनी शिक्षा का प्रारूप तैयार करने में साथ देने के लिए सक्षम और उत्सुक हैं।

शुरू-शुरू में कुछ छात्रों ने ज़रूर कहा कि पाठ्यक्रम बनाना बहुत कठिन काम है और "आप अध्यापक लोग ही यह काम क्यों नहीं कर लेते?" हम

उनको ऐसा शिक्षार्थी बनने के लिए कह रहे थे जो योजना बनाने से लेकर मूल्यांकन तक अपनी शिक्षा में सक्रिय रूप से भागीदारी करता है। पहले कभी किसी ने उनसे ऐसा करने के लिए नहीं कहा था। छात्रों की इस बदली भूमिका के प्रस्ताव से वे असहज और परेशान से होते दिखाई दिए। अध्यापकों की भूमिका भी बदल गई थी। कभी-कभी अध्यापक सूचनाओं के प्रसारक का ही काम करते नज़र आते थे, लेकिन ज़्यादातर समय हम शिक्षार्थियों की और शिक्षा की प्रक्रिया को सुगम बनाने वाली भूमिका निभाते थे।

अध्यापकों और छात्रों को स्वयं को इन नई भूमिकाओं में ढालने के लिए संघर्ष करना पड़ा। एक लगातार चलने वाला मुद्दा यह था कि कब छात्रों को निर्णय लेने में भागीदार बनाया जाएगा और कब केवल अध्यापक निर्णय लेंगे। कभी-कभी छात्र अध्यापकों को चुनौती देते थे कि सभी निर्णयों में उन्हें भागीदार क्यों नहीं बनाया जा सकता। कई बार उनके इस सवाल का हमारे पास कोई जवाब नहीं होता था। हम अभी यह तय कर पाने की प्रक्रिया में ही थे कि कितना “नियंत्रण” छात्रों के हाथों में दिया जा सकता है या दिया जाना चाहिए। हम सब पहली बार सीख रहे थे कि लोकतांत्रिक सिद्धान्तों को आचरण में उतारना किस कदर मुश्किल होता है।

छात्रों और अध्यापकों द्वारा मिलकर पाठ्यक्रम बनाने का काम बुरी तरह गड़बड़ा गया था। हमारे पास इस काम के लिए कोई पाठ्यक्रम निर्देशिका या पाठ्यपुस्तक नहीं थी। महत्वपूर्ण अवधारणाओं की पहचान जिनके गिर्द एक विषय बनाया जा सके काफी समय-साध्य काम था, लेकिन इसके बगैर यदि कुछ बनाया भी जाता तो वह “आवाज़ की ईकाइयों” का एक बेमेल संकलन ही होता जो छात्रों की सीखने की ज़रूरत को सन्तुष्ट नहीं करता। कई बार उचित सामग्री और संसाधनों की खोज में अध्यापकों को बहुत हाथ-पैर मारने पड़े। सौभाग्य से इस काम को पूरा करने के लिए हमारे पास पर्याप्त समय था।

हमारे प्रयासों के प्रति हमारे सहकर्मियों की प्रतिक्रियाएँ एक जैसी नहीं थीं। कुछ ने सोचा कि हम बस कक्षा में चले जाते हैं और वही करते हैं जो छात्र चाहते हैं कि हम करें। कुछ ने सोचा कि हम कुछ पढ़ाते-वढ़ाते भी हैं या नहीं? कुछ जानते-समझते थे कि हम क्या कर रहे हैं। पर उनका कहना था कि तुम करो तो करो, हम तो ऐसा कभी नहीं करेंगे, क्योंकि इसमें बहुत अतिरिक्त परिश्रम लगता है। बहुत कम थे जो हमसे इसके बारे में बात करते थे, लेकिन ज़्यादातर तो हमारी अनुपस्थिति में ही इस पर बात करते

थे, जहाँ समझाने के लिए हम नहीं होते थे। प्रशासन ने हमारी राह में कोई रोड़ा नहीं अटकाया, लेकिन किसी ने आगे बढ़कर दूसरों से कहा भी नहीं कि वे जाकर हमारे काम की प्रकृति और तत्व को आलोचनात्मक दृष्टि से जाँचें-परखें।

जब मैं इस प्रयास से जुड़ी, मुझे नहीं लग रहा था कि मैं लोकतांत्रिक कक्षा के निर्माण का प्रयास कर रही हूँ। मैं तो बस यह चाहती थी कि अध्यापक और छात्र मिलकर एक रोचक, उत्तेजक और सार्थक पाठ्यक्रम बनाएँ। मैं खुद यह देखना और सुनना चाहती थी कि युवा सीखना चाहते हैं और सीख सकते हैं। मुझे पता नहीं था कि इस प्रयास का क्या परिणाम होगा, और अब भी मेरे मन में कई सवाल हैं, लेकिन वे सिद्धान्त से नहीं कार्यान्वयन से सम्बन्धित हैं। जैसा कि मैंने कहा, अब मैं लौट नहीं सकती।

इस अभियान से जुड़े अध्यापकों ने भूतपूर्व छात्रों से साक्षात्कार लिया और जानना चाहा कि उन्हें अपनी कक्षाओं में किस चीज़ की कमी सबसे ज़्यादा अखरती थी। उनका कहना था कि उन्हें जिन चीज़ों की कमी अखरती थी वे थीं शिक्षण में अपना भी कुछ चलना, किसी चीज़ को गहराई से समझने की सहूलियत होना, समूह में काम करना, यह मालूम होना कि हम कक्षा में पाठ से इतर प्रश्न भी पूछ सकते हैं, जो पढ़ा उस पर प्रस्तुतीकरण दे पाना, राजनीति पर चर्चा करना और कक्षा के दैनिक कार्यकलाप के बारे में निर्णय लेना।

साक्षात्कार के दौरान हमने समूह से पूछा कि क्या उन्हें लगता है कि कम्प्यूटर ने एक विविधतापूर्ण समूह बनाने की बजाय एक "विशेष" समूह बना दिया है। क्योंकि जो भी हो, जो समय हमने साथ गुज़ारा वह कई मायनों में सफलताओं से भरा हुआ था। यह इससे जुड़े हर व्यक्ति के लिए अविश्वसनीयता की हद तक शानदार था। थोड़े विचार-विमर्श के बाद एक छात्र ने वह कह दिया जो हम सबको महसूस हो रहा था: "...हम कोई विशेष किस्म का समूह नहीं थे, लेकिन परिस्थितियों ने हमें विशेष बना दिया।"

6 माइकल डब्ल्यू. एपल और जेम्स ए. बीन

लोकतांत्रिक विद्यालयों के सबक

हम एक ऐसे समय में रह रहे हैं जिसमें लोकतंत्र का अर्थ आमूल रूप में बदल रहा है। पहले लोकतंत्र का अर्थ एक ऐसी राजनैतिक और सांस्थनिक जीवन शैली था जो लोगों की समानतापूर्ण, सक्रिय, व्यापक और पूरी तरह सूचित भागीदारी पर आधारित हो। लेकिन अब लोकतंत्र का अर्थ बाज़ार वाली अर्थव्यवस्था में व्यापार की खुली और बेलगाम तिकड़मबाज़ी होता जा रहा है। जब इस नई परिभाषा को विद्यालयों पर लागू किया जाता है तो टैक्स क्रेडिट और वाऊचर, निजी कम्पनियों द्वारा प्रबन्धन, मीडिया और माल का व्यवसायीकरण और सार्वजनिक शिक्षा के उच्च आदर्श का परित्याग जैसी चीज़ें देखने को मिलती हैं (एपल 1993)। यह पतन इस सीमा तक पहुँच गया है कि एक निजी सलाहकार संस्थान ने माँग की है कि अमरीका में "सार्वजनिक विद्यालय" में से "सार्वजनिक" शब्द को हटा दिया जाना चाहिए, क्योंकि आवास, पुस्तकालय, रेडियो और सहायता कार्यक्रमों से जुड़ा "सार्वजनिक" शब्द नकारात्मक अर्थ अपना चुका है। भाषिक उठापटक की यही ताकत हैः सामान्य हित के लिए सामाजिक प्रतिबद्धता को "सार्वजनिक उत्पात" के समतुल्य बताया जा सकता है।

इस पुस्तक में वर्णित विद्यालय एक बड़े आन्दोलन का हिस्सा हैं जो शिक्षा में लोकतंत्र की इस नई परिभाषा से दूर रहना पसन्द करता है। ये विद्यालय अभिभावकों, स्थानीय निवासियों और खासकर छात्रों सहित शिक्षा के अनुभव से सम्बद्ध सभी लोगों की सार्थक प्रतिभागिता को बढ़ाने के लिए व्यवहारिक उपायों की खोज में गहराई से जुटे हुए हैं। उनके अनुभव को देखकर कहा जा सकता है कि यह लक्ष्य अप्राप्य नहीं है।

ज़रूरत है हर विद्यालय में तथा विद्यालय और व्यापक समुदाय के बीच सीखने वाले समुदायों के निर्माण की (देखें स्मिथ 1993)।

इन सभी विद्यालयों का पाठ्यक्रम इस विश्वास पर आधारित है कि छात्रों और अध्यापकों के लिए वही ज्ञान जीवन्त हो सकता है जो किसी न किसी गम्भीर बात से जुड़ा हुआ हो। कठोर बौद्धिक परिश्रम का पुरस्कार ज़रूर मिलता है। इस अर्थ में नहीं कि उससे प्रतीकात्मक मानक स्थापित होते हैं या अनुकूल प्रचार और प्रशंसा मिलती है, बल्कि इस अर्थ में कि हम अपने सामाजिक जीवन की नई समझ हासिल करते हैं और उसमें अपनी भूमिका को ज़्यादा सशक्त बनाने की सामर्थ्य हासिल करते हैं। इन विद्यालयों में आम विद्यालयों की रूढ़ और मशीनी मानकीकृत मूल्यांकन पद्धति की बजाय एक सर्वथा भिन्न और नई मूल्यांकन पद्धति लागू की गई, और इसका असर आज साफ दिखाई दे रहा है।

इन विद्यालयों में विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम को प्रमुखता दी जाती है, इसलिए नहीं कि यह बच्चों को खुश रखने की कोई तरकीब है, बल्कि इसलिए कि इससे जीवन की वास्तविक समस्याओं और मुद्दों को सुलझाने और समझने में प्राप्त ज्ञान का उपयोग करने की सीख मिलती है (बीन 1993)। समाज की "अपूरित आवश्यकताओं" पर रिंज का केन्द्रीकरण या फ्रेटनी और मारक्वेट में सामाजिक और पर्यावरण सम्बन्धी मुद्दों पर केन्द्रीकरण या सेन्ट्रल पार्क ईस्ट में "गम्भीर प्रश्नों" के उत्तर खोजने का प्रयास इसलिए हो सका क्योंकि वहाँ ज्ञान की अवधारणा को भिन्न तरीके से ग्रहण किया गया। मानक परीक्षा के लिए छात्रों द्वारा रटी जाने वाली (और परीक्षा के बाद अक्सर भुला दी जाने वाली) अवधारणाओं, तथ्यों और कौशलों की सूची को ही ज्ञान समझने की बजाय यह माना गया कि ज्ञान वह है जो समुदायों और वास्तविक लोगों की आत्मकथाओं से अन्तरंग रूप से जुड़ा हुआ होता है। यहाँ छात्र सीखते हैं कि ज्ञान लोगों के और उनके खुद के जीवन को बदल देता है।

रिंज में व्यावसायिक शिक्षा के कायाकल्प के प्रयास में ज्ञान सम्बन्धी इस दृष्टि को देखा जा सकता है। यहाँ व्यावसायिक शिक्षा का मतलब भविष्य के कारीगरों को इक्कीसवीं सदी के लिए आवश्यक बहुमुखी कौशल सिखाना मात्र नहीं है, क्योंकि तमाम राजनीतिक और शैक्षणिक नारेबाज़ी के बावजूद अधिकतर आर्थिक भविष्यवक्ताओं का यह मानना है कि आधुनिक अर्थनीति जो रोज़गार पैदा कर रही है उनमें से अधिकांश निचले दर्जे के कौशल की माँग करने वाले, पार्टटाइम और बहुत कम पारिश्रमिक

वाले होंगे (एपल 1989)। रिंज में व्यावसायिक शिक्षा को सक्रिय नागरिकता की तैयारी के लिए एक उच्च प्रतिदर्श के रूप में तैयार किया गया है। उद्देश्य यह है कि सभी लोग जो किसी संस्थान में रहते हैं और काम करते हैं, या भविष्य में रहेंगे और काम करेंगे, उन्हें संस्थान के सभी महत्वपूर्ण निर्णयों में भागीदारी करने का अधिकार प्राप्त हो। मारक्वेट, फ्रेटनी और सेन्ट्रल पार्क ईस्ट में पाठ्यक्रम निर्माण में भी इस समझ को देखा जा सकता है। यहाँ का पाठ्यक्रम उन छात्रों, अध्यापकों और समुदायों की वर्तमान चिन्ताओं और भविष्य के स्वप्नों को प्रतिबिम्बित करता है जिनका बहुलाँश हानि-लाभ इन स्कूलों से जुड़ा हुआ है।

हम यहाँ भोले-भाले स्वप्नजीवी नहीं हो जाना चाहते हैं। इन अध्यायों के लेखक वास्तविक चुनौतियों से अच्छी तरह परिचित हैं। ये चुनौतियाँ हैं पैसे की तंगी, व्यापारिक समुदाय की ज़रूरतों के अनुसार विद्यालय के लक्ष्यों को पुनर्परिभाषित करने के लिए शक्तिशाली गुटों के दबाव, शिक्षा की सामग्री और कार्यक्रमों पर चरमपंथी रूढ़िवादियों के हमले, कक्षा में होने वाली हर चीज़ का नाप-जोख लेने की झख, नौकरशाही के अवांछित हस्तक्षेप और समाज की यह मान्यता कि सार्वजनिक विद्यालय कभी भी रचनात्मक तरीके से काम नहीं कर सकते। ये चुनौतियाँ आज भी उनके सामने हैं। इन विद्यालयों की सर्वाधिक प्रभावशाली विशेषता यही है कि उन्होंने ऐसी चुनौतियों के समक्ष उल्लेखनीय प्रगति की है। इनसे सबक सीखने की ज़रूरत है।

इन विवरणों से एक चीज़ जो साफ तौर पर उभरकर आती है वह है शिक्षाविदों द्वारा विद्यालय के दैनिक जीवन में सामने आने वाली "रोज़मर्रा" वास्तविकताओं पर पर्याप्त ध्यान देना। ये कहानियाँ हमें याद दिलाती हैं कि लोकतंत्र की सबसे सच्ची सार्थकता चमकदार राजनीतिक अलंकारिकता में नहीं, बल्कि दैनिक जीवन की छोटी-छोटी बातों में ही निर्मित होती है। इन विद्यालयों में पाठ्यक्रम विकास, शिक्षण, मूल्यांकन जैसे कामों को लोग गम्भीरता से लेते हैं। यहाँ छात्रों और अध्यापकों के जीवन को भी गम्भीरता से लिया जाता है जिनका सहयोग विद्यालय को चलाने के लिए ज़रूरी है। यह कहना कि इन चीज़ों के लिए ये लोग प्रतिबद्ध हैं, एक प्रकार की गैर-ज़रूरी पुनर्रावृत्ति होगी। किसी भी अध्यापक कक्ष में जब भी सुधारों की बात होती है तो इन्हीं चीज़ों की चर्चा की जाती है। इन शिक्षाविदों में जो चीज़ गौर करने लायक है, वह यह है कि इन्होंने हम सबके समक्ष उपस्थित रहने वाले आर्थिक संकट, अनेक विद्यालय व्यवस्थाओं को त्रस्त करने वाले नौकरशाही नियम-कायदों और शिक्षा को जीवन को

बदलने का अनुभव न बनने देने पर उतारू सामाजिक दबावों और माँगों के आगे झुकने से इन्कार कर दिया। इन लोगों ने उक्त परिस्थितियों को निष्क्रिय हो जाने का बहाना नहीं बनाया, बल्कि इन्हें चुनौती की तरह लिया। इन शिक्षाविदों ने एक ऐसे गुण का परिचय दिया है जिसकी कामना हम सभी को करनी चाहिए। और यह गुण है असामान्य साहस।

ये शिक्षाविद एक ऐसी शिक्षा को आहूत करने में सफल हुए जो अनुशासनबद्ध भी है और संवेदनशील भी। ये लोग छात्रों, अध्यापकों या प्रशासकों के लिए आदर्श शिक्षा का कोई नुस्खा प्रस्तावित नहीं करते हैं। यह शिक्षा सभी के सम्मिलित कठोर परिश्रम का परिणाम है। जिन शिक्षाविदों ने इस पुस्तक में अपने अनुभव लिखे हैं, उन्हें देखकर हम कह सकते हैं कि यह काम बहुत बाध्यकारी और तुष्टिकारक है, लेकिन साथ ही बेहद थकाने वाला भी है। फिर भी, जैसा कि सभी शिक्षाविद समझते हैं, दिन भर विद्यालय की वास्तविकताओं से निपटने के बाद हम सब थक ही जाते हैं। लेकिन यहाँ आपने जिन लोगों की बातें सुनी हैं उन्होंने इस कठिन और थका देने वाले काम को स्वेच्छा से चुना है। अपना अधिकतर समय प्रशासनिक कार्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण और मूल्यांकन जैसे छात्रों से असम्बद्ध और समाज से असम्पृक्त कार्यों में खपाने की बजाय, और ऐसी परिस्थितियों के पुनर्निर्माण में लगे रहने की बजाय जो हमारे कितने ही प्रतिभाशाली अध्यापकों और प्रशासकों के दैनिक जीवन को कुण्ठा से भर देती हैं, उन्होंने एक नया रास्ता निकालने का प्रयास किया। एक शिक्षाविद के रूप में उन्होंने अपना जीवन उन लोकतांत्रिक, सामाजिक और शैक्षणिक सिद्धान्तों के गिर्द गढ़ी जाने वाली शैक्षणिक गतिविधियों को समर्पित कर दिया जिनमें उनकी आस्था थी। दूसरे शब्दों में, उन्होंने एक मूल्यवान कार्य के लिए थककर चूर हो जाने का विकल्प चुना।

क्या अब तक हमारे विश्लेषण का निहितार्थ यही है कि इन लेखकों ने इन अध्यायों में "पारम्परिक" रास्ते से एक महत्वपूर्ण पलायन को रेखांकित किया है? इस प्रश्न का उत्तर "हाँ" भी है और "नहीं" भी। यह इस बात का स्पष्ट बयान है कि यदि लोग लोकतंत्र को नारा बनाकर दोहराते रहने की बजाय लोकतांत्रिक विद्यालयों के निर्माण की दिशा में ठोस काम करें तो विद्यालय में क्या-क्या हो सकता है। लेकिन, जैसा कि हमने प्रथम अध्याय में देखा, ये विद्यालय और ये कक्षाएँ अपनी परम्परा से कटे नहीं हैं, बल्कि ये अपनी परम्परा से दोबारा जुड़े हैं। आज के विद्यालय सुधार अभियानों की एक सबसे बड़ी त्रासदी यह है कि इससे जुड़े लोगों को अपने

सहधर्मियों की लम्बी और शानदार परम्परा का कोई ज्ञान ही नहीं है। दुर्भाग्य से शिक्षाविदों और नागरिकों दोनों की सामूहिक स्मृति में लोकतांत्रिक विद्यालयों के निर्माण के लिए अतीत में किए गए अनेक सफल प्रयासों का कोई स्थान ही नहीं है। प्रगतिशील विद्यालयीन सुधारों के इतिहास में यह तथ्य दर्ज है कि हज़ारों अध्यापकों, प्रशासकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और अन्य लोगों ने अपना पूरा व्यावसायिक जीवन शैक्षणिक और सामाजिक दृष्टि से अधिक उत्तरदायी संस्थानों के निर्माण की चेष्टा में लगा दिया। उन्होंने परिस्थितियों को कैसे समझा, समस्याओं का सामना किस तरह किया और कैसे सफलता हासिल की — इसे जानना हमारे लिए काफी लाभदायक हो सकता है। आज प्रगतिशील तरीके से सोचने वाले तमाम शिक्षाविद् इसी बुनियाद पर खड़े हैं। उन लोगों का स्पष्ट विज़न और कठोर परिश्रम हमें याद दिलाता है कि आज इस पुस्तक में लिखने वाले शिक्षाविद् वास्तविक विद्यालयों में यथार्थ के धरातल पर जो कुछ कर रहे हैं वह उन्हीं के प्रयासों के सातत्य में है। यह लोकतंत्र की एक विशाल नदी है जो लगातार बहती चली आ रही है। एक शिक्षाविद् के रूप में हमारा काम यह देखना है कि यह नदी अपने रास्ते पर निरन्तर बहती रहे, और इस देश के सभी बच्चे इस प्रक्रिया में भागीदार हो सकें।

इस पुस्तक में हमने लोकतांत्रिक विद्यालयों के चार विवरण प्रस्तुत किए हैं। इसके अलावा भी ढेरों हैं जिनकी बात की जानी चाहिए थी। हमारे शहरों के भीतर, ग्रामीण इलाकों में तथा अन्यत्र सर्मर्पित शिक्षाविदों और समुदाय के सदस्यों ने लोकतंत्र को गम्भीरता से लेने के लिए सहकार बना रखे हैं। शिक्षाविदों के समक्ष उपस्थित सबसे बड़ा संकट यह पता लगाना है कि जहाँ प्रगतिशील शिक्षण अपना प्रभाव छोड़ रहा है वहाँ देश भर की विद्यालय व्यवस्था में क्या चल रहा है? समस्या का एक सीधा-सा कारण तो समय का अभाव है। हमारा काम इतना बढ़ गया है (एपल 1988, 1993) कि न सिर्फ अपनी सफलताओं के बारे में लिखने का हमें समय नहीं मिलता, कभी-कभी दूसरे अपने विद्यालयों का कायाकल्प करने के लिए जो कुछ कर रहे हैं उसे पढ़ने के लिए समय निकालना भी मुश्किल हो जाता है। लेकिन फिर भी दूसरों के साथ अपने अनुभव बाँटना ज़रूरी है। इस तरह हम एक-दूसरे को सिखाते हैं कि क्या करना चाहिए, किन-किन चीज़ों से बचना चाहिए, और अन्ततः जब अधिक संवेदनशील विद्यालय के निर्माण में सफलता मिल जाती है, तो हकीकत कैसी होती है।

ऐसे अनेक मंच हैं जहाँ से शिक्षाविद् अपनी बात कह सकते हैं और दूसरों

के काम की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। जैसे मिल्वॉकी में रीथिंकिंग स्कूल्स, ओहायो में इंस्टीट्यूट फॉर डेमोक्रेसी इन एजुकेशन, एजूकेटर्स फॉर सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी, द नेशनल कोएलीशन ऑफ एजुकेशन एक्टिविस्ट्स आदि। इसके अलावा कुछ प्रकाशन भी हैं, जैसे टीचिंग टॉलरेन्स, रीथिंकिंग स्कूल्स, डेमोक्रेसी एण्ड एजुकेशन और इक्युटी एण्ड एक्सेलेन्स आदि। ये समूह और प्रकाशन अपनी बात कहने और दूसरों की बात सुनने के लिए गम्भीर मंच प्रदान करते हैं। इससे आज की कठिन परिस्थितियों में कार्यरत शिक्षाविदों को यदाकदा की निराशा और सनकीपन से छुटकारा पाने में मदद मिल सकती है।

हम स्वयं को भी ऐसे समूहों में मान रहे हैं जो जानना चाहते हैं कि अन्य विद्यालयों में क्या चल रहा है, क्योंकि हम मानते हैं कि दार्शनिक वचनों का तभी कोई अर्थ है जब वे विद्यालयों के वास्तविक जीवन में खरे उतरें। जैसे कार्यक्रम इस पुस्तक में वर्णित हैं वैसे यदि आपने भी चलाए हों या देखें हों तो उनके बारे में हमें ज़रूर लिखिए। तब हम देखेंगे कि लोकतांत्रिक विद्यालयों की स्थापना के संघर्ष में यह पुस्तक पुस्तकों की एक Ü्रृंखला की पहली कड़ी मात्र होगी। आज तानाशाही के राजनीतिक विचारोंवाले समूहों, केन्द्रीकरण के समर्थकों और निजीकरण के पैरोकारों द्वारा जिस उद्दण्डता से विद्यालय व्यवस्था पर हमले किए जा रहे हैं, उसका सबसे अच्छा जवाब यही हो सकता है कि हम दिखा दें कि सार्वजनिक विद्यालयों में भी अच्छा काम होता है और इसलिए होता है क्योंकि वे लोकतंत्र की पद्धति पर अमल करते हैं। हमारे बच्चों का जीवन और भविष्य आज दाँव पर लगा हुआ है। दूसरे कुछ करें, इसकी प्रतीक्षा हम न करें।

सन्दर्भ

एपल, माइकल डब्ल्यू. (1988) टीचर्स एण्ड टेक्स्ट्स। न्यू यॉर्क: रूटलेज.

एपल, माइकल डब्ल्यू. (1989) अमेरिकन रिएलिटीज़: पॉवर्टी, इकॉनॉमी एण्ड एजुकेशन। लुई वाइस, इलियानोर फरार, और हयूज़ जी. पेट्री द्वारा सम्पादितड्रॉपआउट्स फ्रॉम स्कूल्स: इश्यूज़, डायलेमाज़ एण्ड सॉल्यूशन्समें। अलबानी: स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू यॉर्क प्रेस.

एपल, माइकल डब्ल्यू. (1993) ऑफिशियल नॉलेज डेमोक्रेटिक एजुकेशन इन अ कन्ज़र्वेटिव्ज़। न्यू यॉर्क: रूटलेज.

बीन, जेम्स ए. (1993) अ मिडिल स्कूल करिक्यूलम। कोलम्बस, ओहायो: नेशनल मिडिल स्कूल एसोसिएशन.

स्मिथ, ग्रेगोरी ए. (1993) पब्लिक स्कूल्स देट वर्क। न्यू यॉर्क: रूटलेज.